बेगम

लेखक
शौकत थानवी

अनुवादक
'हुनर' शाहजहाँपुरी

"बेगम"

किताब महल : इलाहाबाद
१९५७

प्रकाशक : किताब महल, जीरोरोड, इलाहाबाद
मुद्रक : पियरलेस प्रिंटर्स, इलाहाबाद

१

यहाँ उन लोगों का ज़िक्र नहीं जो बीवियों और स्लीपरों में ही बिना गौर किये भेद नहीं कर सकते, और न उन बुज़ुर्गों से कोई बहस है जो बीवी के प्राकृतिक रूप से खुदा बने हुए हैं। क्योंकि सचमुच के खुदा तो वे क्या बनेंगे पर उन्होंने बीवियों को पूजा-परस्ती का आदी जरूर बना दिया है। और बीवियों की पूजा उनको सचमुच का खुदा बन जाने के लिए प्रेरित करती है।

एक क़िस्म शौहरों की वह भी है जिसके नज़दीक बीवी एक ऐसा इन्सानी शक्ल का जानवर होती है जिसे पालने का आम तौर पर शौहरों को शौक़ होता है। अब यह शौहरों की इच्छा पर है कि वे अपने इस पालतू जानवर के साथ मुहब्बत का सलूक करें, उपेक्षा का बरताव करें या महज़ सैयाद बने बैठ रहें।

इन सबके अलावा शौहरों की एक आम नस्ल और है जो हमारे यहाँ पाई जाती है। वह है कि चूँकि इस नस्ल के तमाम बुज़ुर्ग अपने अपने समय में शौहर गुज़रे हैं। यह खानदानी परम्परा चली आ रही है कि तमाम मर्दों की एक-न-एक औरत से शादी कर दी जाती है और वे उसके शौहर कहलाते हैं। इसलिये खानदानी परम्परा के अनुसार वे भी शादी करके एक औरत के शौहर बन बैठते हैं और इससे ज़्यादा उन बेचारों को कुछ खबर नहीं रहती।

सारांश यह कि ऐसी-ऐसी हज़ारों क़िस्में हैं। बल्कि कहने वाले तो यहाँ तक कहते हैं कि साँपों की और शौहरों की किस्में गिनती में आ ही नहीं सकतीं। मगर फ़ैयाज साहब अपनी किस्म के पहले शौहर थे। न ऐसा शौहर सुना न कभी देखा। सूरत से बेहद शरीफ़ हर मामले में सुलझे हुए, ज़रूरत के समय अति गंभीर, वक़्त पड़ने पर निहायत दिलचस्प, कभी ज्ञान के अथाह सागर, कभी ऐसे हँसमुख कि दूसरों को भी हँसा-हँसा कर पेट में बल डाल दें, कभी शायरी की महफ़िल की जान, कभी राजनैतिक जमघटों में उलझनों को और भी बढ़ाने वाले। सारांश यह कि क़ुदरत ने आप को अजीब माजून बनाया था। ख़ैर, उनकी बाक़ी बातें तो भरखप कर सहन की जा सकती थीं पर बीवी के सिलसिले में दिन रात उनकी बतलाई राह पर चलना किसी ऐसे व्यक्ति के लिये संभव नहीं हो सकता जो अपनी बीवी के सिलसिले में अपनी नीति को स्वयं अपने हाथ में रखना चाहता हो और जिसका विश्वास यह हो कि हम मियाँ-बीवी के पारस्परिक संबंधों में किसी आलोचक को आलोचनात्मक दृष्टि डालने का इस लिये कोई अधिकार नहीं है कि ये मियाँ-बीवी के सम्बंध हैं; और बड़ी-बूढ़ियों के कथनानुसार मियाँ-बीवी की बात में कोई क्यों बोले ! मगर फ़ैयाज़ साहब थे कि बोलते थे, बोलते ही नहीं थे बल्कि इस सिलसिले में ज़िन्दगी से आजिज़ कर रखा था उन्होंने।

भूमिका बाँधने की कोई ज़रूरत नहीं और न ही इस बात में शर्म की ज़रूरत है। क़िस्सा दरअसल यह है कि हमारे नज़दीक एक शरीफ़ शौहर की पहिचान यह है कि वह अपनी बीवी से डरता रहे। डरना वैसे भी शराफ़त की निशानी है। ख़ुदा का शरीफ़ बन्दा वह है जो ख़ुदा से डरे। हाकिम का शरीफ़ मातहत वह है जो हाकिम से डरे। मां-बाप का सबसे अच्छा बेटा वह है जो उन से डरे। इसी तरह बीवी का शरीफ़ शौहर वह है जो बीवी को डराने के बजाय बीवी से डरने का पक्षपाती हो। सरांश यह कि हम तो अपनी शराफ़त

से मजबूर थे और फ़याज़ साहब ने इस शराफ़त के अजीब-अजीब नाम रख छोड़े थे। बीवी के ग़ुलाम, बीवी के पालतू आनरेरी शौहर, बीवी की बीवी और न जाने क्या-क्या ?

आखिर एक दिन जलकर हमने भी कहा—"आखिर आपके नज़दीक शौहर को क्या होना चाहिये ?"

फ़ैयाज़ ने बेपरवाही के साथ कहा—"शौहर को कम-से-कम शौहर तो होना ही चाहिये।"

हमने कहा—"वह तो मैं हूँ। मेरा मतलब यह है कि आप किस क़िस्म का शौहर देखना चाहते हैं ?"

फ़ैयाज ने सँभल कर बैठते हुए और अपने चेहरे पर लेक्चर देने के चिह्न पैदा करते हुए कहा—"जी नहीं, आपको वहम हो गया है कि आप शौहर हैं। आपको मैं किस क़िस्म का शौहर देखना चाहता हूँ यह सवाल तो आप कीजियेगा अपनी बेगम साहबा से। अलबत्ता मैं आपको इन्सान देखना चाहता हूँ। मगर देख यह रहा हूँ कि आपकी इन्सानियत में भी धीरे-धीरे मोर्चा लगता जा रहा है। कम-से-कम आप पूरे इन्सान तो अब नहीं हैं। बीवी को आपने अपने ऊपर इतना छा जाने दिया है कि अपना शौहर होना भूलकर आप खुद बड़ी तेज़ी से बीवी बनते चले जा रहे हैं। न आपकी राय आज़ाद है, न आपके काम आज़ाद हैं और न आप खुद आज़ाद हैं।"

हमने इस लेक्चर से घबराकर कहा—"कैसी ग़ैर-शायराना बात कह रहे हो फ़ैयाज़। क्या तुम उस मज़े को बिल्कुल महसूस नहीं करते कि एक औरत एक मर्द की ज़ंजीर बन जाये ?"

फ़ैयाज़ ने शरारत से या खुदा जाने संजीदगी से कहा—"ज़ंजीर तक तो ग़नीमत था पर वह तो लगाम बनी हुई हैं। सवाल यह है कि बीवी को अपनी हर बात का हिसाब और जवाब देकर एक आदमी ज़िन्दगी कैसे बिता सकता है ?"

हमने कहा—"एक बार तजुरबा करके देखो, तो, अपने को बस

भाभी को सौंप दो। फिर देखो कि तुम को कितनी शान्ति मिलेगी। न घर के किसी झगड़े से सरोकार न नोन-तेल-लकड़ी की फ़िक्र, और न किसी और बात का ग़म। मैं तुम से सच कहता हूँ कि मेरे लिये मोज़े और बनियान तक तुम्हारी भाभी ही खरीदती हैं और मैं खुश होता हूँ कि वह किस मुहब्बत से मेरे लिये हर चीज़ खरीद कर लाती है।"

फ़ैयाज़ ने जैसे बनाते हुए कहा—"यह तो है। इस बात का थोड़ा-बहुत तजुरबा मुझको भी है। एक बार का ज़िक्र है कि मैंने एक बहुत ही खूबसूरत ज़ंजीर अपने कुत्ते के लिये खरीदी, और जब वह ज़ंजीर पहिना कर मैं उसे अपने साथ टहलाने ले गया तो वह भी खुश था और मैं भी।"

हमने कहा—"आपने अपने नज़दीक एक बहुत बड़ा हमला किया है। मगर मैं आपको संजीदगी के साथ सलाह देता हूँ कि एक बार अपने को बीवी को सौंप कर देखो कि तुम्हारा घर, जिसमें तुम्हारा दिल, मुझे मालूम है कि नहीं लगता, कहाँ तक तुम्हारे लिये जन्नत बन जाता है।"

फ़ैयाज़ ने घबरा कर कहा—"भाई खुदा बचाये इस जन्नत से कि घर के अलावा सारी दुनिया ही बेकार होकर रह जाये। हो सकता था कि मैं आपको इस सलाह पर अमल करने की बेवकूफ़ी कर गुज़रता, मगर मेरे सामने आपका नमूना सबक़ हासिल करने के लिये मौजूद है।"

हमने कहा—"तो क्या आपके ख़याल में मेरी ज़िन्दगी बहुत तकलीफ़ में गुज़र रही है।"

फ़ैयाज़ ने इस तरह विश्वास के साथ कहा मानों ज़िन्दगी हमारी है और बिता वह रहे हैं, "सचमुच तकलीफ़ में गुज़र रही है। इससे बढ़कर और क्या तकलीफ़ होगी कि आपको अब वह तकलीफ़ महसूस भी नहीं होती। दुनिया की सारी ही दिलचस्पियाँ अपनी जगह पर

क़ायम हैं मगर क़ुदरत ने आपको उनसे महरूम कर रखा है। और फिर मज़ा यह है कि इस महरूमी की भी आपको शिकायत नहीं, बल्कि ताज्जुब यह है कि आप खुश हैं।"

हमने कहा—"यह झूठ अगर बात को दिलचस्प बनाने के लिये है तब तो खैर दूसरी बात है, वरना यह आपने कैसे समझ लिया कि मैं किसी दिलचस्पी में हिस्सा ही नहीं लेता। जिस बात पर आप नाराज़ हुए हैं यानी सिनेमा न जाने पर, उसके बारे में आप को मालूम है कि मैं अक्सर सिनेमा जाता रहता हूँ।"

फ़ैयाज़ ने कानों पर हाथ रखकर कहा—"खैर, खैर, मैंने भी दवा के तौर पर अक्सर अंगूर खाये हैं और उनमें भी अंगूरों का ज़ायक़ा महसूस नहीं किया। आप सिनेमा गये भी तो किस तरह ! बेगम साहबा के साथ। दुनिया के किसी भी समझदार और तमीज़दार आदमी से पूछ लो, कि साईस के साथ टहलने में घोड़े को कभी भी मज़ा आ सकता है ? वह घास पर लोटता भी है तो रस्सी साईस के हाथ में रहती है। हाय, उसका कितना जी चाहता होगा सरपट भागने को, दुलत्ती उछालने को, उछलने को, इधर-उधर कूदने को। मगर साईस उसके गले में रस्सी बाँधकर जिस वक्त उसे तफ़रीह का मौक़ा देता है, उस समय वह ज़्यादा से ज़्यादा यह कर सकता है कि पूरी तहज़ीब से लोट ले। क्या आपके नज़दीक एक घोड़े की यह तफ़रीह काफ़ी है ? और अगर घोड़ा खुद कहे कि मैं इस हाल में खुश हूँ तो क्या आप मान लेंगे ? हो सकता है आप संतुष्ट हो जायें मगर एक घोड़े के इस बयान पर कोई घोड़ा यक़ीन नहीं कर सकता। मैं यह कैसे समझ लूँ कि जिस तरह जनाब सिनेमा जाते हैं, या दूसरी तफ़रीहों में हिस्सा लेते हैं वही आपके लिये काफ़ी है। यह भी कोई तफ़रीह में तफ़रीह हुई कि साथ में हैं साईस साहबा और आप चले जा रहे हैं इस तरह जैसे लगाम लगी हो। हाथ पर बेगम साहबा की शाल या चेस्टर पड़ा है। चेहरे पर अर्दली होने का पूरा सलीक़ा पैदा किये हुए,

या अदब या मुलाहिज़ा होशियार की क़िस्म के अन्दाज़ से। न किसी से हँस सकते हैं न बोल सकते हैं। बोलना भी पड़ता तो नपी-तुली वाजिबी सी बातें। ख़ुदा के लिये मुझे बताओ कि यह तफ़रीह है या जन्म क़ैद।"

हमने कहा—"बक चुके तुम। अब सुनो, तुम इसको इसलिये पाबंदी समझते हो कि तुम्हारी आत्मा में चोर है और मैंने इस पाबंदी को अपनी आदत बना लिया है। इसलिये अब मुझे बीवी की मौजूदगी बिल्कुल महसूस नहीं होती। बल्कि अगर वह मौजूद न हों तो एक कमी ज़रूर महसूस होती है। मैं दर असल ज़िन्दगी में उस बात को बहुत पसन्द करता हूँ जो बीवी की मौजूदगी में इन्सान को मजबूरन करनी पड़ती है।"

फ़ैयाज़ ने त्योरियों पर बल डाल कर कहा—"क्यों बनते हो? मुझे मालूम है तुम कितने तहज़ीबयाफ़्ता (सभ्य) हो। कहो तो क़सम खा कर कह दूँ कि तुम में वह तमाम शोख़ियाँ, वह तमाम तेज़ियाँ और वह सारी शरारतें मौजूद हैं जो एक नौजवान में होनी चाहियें। मगर तुम इन सब बातों को कुचल-कुचल कर रखते हो।"

हमने इस बहस से ऊब कर कहा—"ख़ुदा के लिये अब मेरी जान बख़्शो। मैं उन तमाम शोख़ियों, तमाम तेज़ियों और हर बात का क़ायल हूँ, मगर....।"

फ़ैयाज़ ने बात काट कर कहा—"मगर बेगम साहबा की मौजूदगी में नहीं। क्यों?"

हमने कहा—"देखो फ़ैयाज़, दुनिया का सबसे बेतकल्लुफ़ और सबसे दिलचस्प रिश्ता बीवी का है। बीवी से बढ़ा दोस्त कौन हो सकता है। अगर इन्सान बीवी के सामने ही बेतकल्लुफ़ न हो सका तो फिर किसके सामने होगा?"

फ़ैयाज़ ने जैसे हमारी तरफ़ से सब्र करते हुए कहा—"होते होंगे आप बेतकल्लुफ़। और इस बेतकल्लुफ़ी से हमको कोई ग़रज़ भी नहीं

है। यहाँ तो उस बेतकल्लुफ़ी का ज़िक्र है जो आप बीवी की मौजूदगी में दूसरों के साथ बरत सकें और जिसके बारे में मैं दावे से कहता हूँ कि आप लाख चाहें मगर दिल खोलकर बेतकल्लुफ़ हो ही नहीं सकते। और होना भी नहीं चाहिये। खैर, इस क़िस्से को इस तरह थोड़े में कहा जा सकता है कि आपकी अपनी निजी हैसियत से हम सब्र करलें। आप अपनी बेगम साहबा के चौबीसों घंटे शौहर होने के अलावा हम लोगों के लिये बिल्कुल बेकार हो चुके हैं।"

फ़ैयाज़ की बात चीत यहीं तक पहुँची थी कि नौकरानी ने अन्दर से एक परचा लाकर दिया और फ़ैयाज़ ने उस परचे का मतलब समझते हुए टोपी उठा कर पर तौलते हुए कहा—"तशरीफ़ ले जायें जनाब! अब मैं सिर्फ़ उस दिन और उस वक्त ख़िदमत में हाज़िर हो सकूँगा जब दुनिया में कोई काम ही न हो और वक्त बरबाद करने को ऐसा ही दिल चाह रहा हो। आदाब अर्ज़!"

२

बात दर असल कुछ और ही थी। दोस्तों में अपनी बात सही साबित करने को हम लाख कह दें कि बीवी के अटैची बनकर रह जाने से हम संतुष्ट हैं और ये पाबंदियाँ हमको महसूस नहीं होतीं, नहीं तो असलियत यह है कि फ़ैयाज़ कहता ठीक था। अब आप ही बताइये कि हमको ब्रिज का बेहद शौक़, दिन रात कहिये तो भूख-प्यास भूलकर ब्रिज खेलते रहें। बेगम साहबा को वैसे ही ब्रिज से नफ़रत है। उनका बस चले तो ब्रिज के आविष्कारक को ऐसा कोसें कि उसको आत्म-हत्या करने को

जी चाहने लगे। फिर यह कहना कि अगर आपको ताश खेलने का ऐसा ही शौक़ है तो आइये मेरे साथ खेलिये। अब बताइये कि कौन उनके साथ ग़ुलाम चोर या ज़्यादा-से-ज़्यादा चानस खेलकर अपने शौक़ को पूरा कर सकता है। हमको शिकार का खब्त और वहाँ यह ज़िद कि हम भी चलेंगे। अब या तो यह इन्तज़ाम किया जाये कि शिकारी जानवरों को परचा लिखकर भेज दें कि चूँकि हमारी बेगम साहबा भी शिकार पर आई हुई हैं इसलिये तुम लोग ख़ुद हमारे कैम्प तक आकर गोली खा जाओ वरना हम इसलिये शिकार से असमर्थ रहेंगे कि बेगम साहबा घने जंगलों में झाड़-झंकार से अपनी जार्जट की साड़ी या दुपट्टा बचाकर न गुज़र सकेंगी। और अगर गुज़र भी जायें तो भी थोड़ी दूर चलने के बाद वह थक जायेंगी। उनके लिये पानी ढूँढना पड़ेगा, हो सकता है कि पाँव में मोच आ जाये। यह भी हो सकता है कि धड़कन शुरू हो जाये नहीं तो सर में दर्द तो हो ही सकता है। ताश और शिकार के अलावा सचमुच कभी-कभी यह भी दिल चाहता रहता है कि अपने घनिष्ट मित्रों की टोली में बैठकर हा-हा-हू-हू की जाये जिसको ये औरतें हुड़दंगा कहा करती हैं या अधिक जलकर कहें तो शोहदेपन तक कह देती हैं। अब बताइये कि इस शोहदेपन के लिये वक़्त कहाँ से निकाला जाये। आदमी अपनी ज़िन्दगी के हर पल में डिसेप्लिन का पाबन्द तो नहीं हो सकता। मालूम होता है कि हर वक़्त वर्दी पहने, कमर बाँधे फिर रहे हैं। कभी-कभी तो अपनी निजी ज़िन्दगी बिताने को भी दिल चाहता है। औरतों का क्या है, वह तो पर्दे के बहाने से हर तरह की बेतकल्लुफ़ी बरत लिया करती हैं जिसकी मर्दों को खबर भी नहीं होती, यानी मर्द तो झाँककर भी उस बेतकल्लुफ़ी को नहीं देख सकते, मगर मर्दों की बेतकल्लुफ़ी को झाँका जा सकता है। इसीलिये मर्द न सिर्फ़ इसके क़ायल होते हैं कि दीवार के कान होते हैं बल्कि दीवार की आँख का भी ख़याल रखना पड़ता है। सारांश यह कि फ़ैयाज़ के सामने हम बन तो बहुत लिये मगर असलियत यह

है कि .फ़ैयाज़ ने वही सब कुछ कहा था जो हम चुपके-चुपके शादी के बाद से बराबर सोचा करते हैं। मगर खुदा न करे कि कोई शुरू में ही बीवी का रोब खा जाये। फिर तो वह ज़िन्दगी भर सर उठा ही नहीं सकता। उस वक़्त भी दिल तो यही चाहता था कि फ़ैयाज़ के गले में बाँहें डालकर खूब रोयें, मगर हमको यक़ीन था कि इस बात-चीत को भी सुना जा रहा होगा। इस लिये खैरियत इसी में थी कि हमने फ़ैयाज़ से इस तरह की बातें कीं। और हमारा यह ख़याल बिल्कुल सही निकला। हमको जो परचा भेजकर बाहर से बुलवाया गया था उसका मक़सद उसी बातचीत के बारे में हमारी पेशी थी। चुनांचे हम जिस वक़्त हाज़िर हुए हैं, सरकार खूब खिली हुई मुस्करा रही थीं। दिल को इत्मीनान हो गया कि सब खैरियत है। हमारे पहुँचते ही बेगम ने पूछा—"क्या गये फ़ैयाज़ साहब ?"

हमने बेपरवाही की ऐक्टिङ्ग करते हुए कहा—"जी हाँ तशरीफ़ ले गये। मगर दिमाग़ की वह सारी सलाहियत, ताल्लुक़ समझ बूझ से है, अपने साथ लेते गये।"

बेगम साहबा ने हाथ पकड़कर इनको अपने पास बैठने की इज्ज़त देते हुए कहा—"आख़िर आप अपने दोस्तों को मेरी वजह से क्यों नाराज़ किये हुए हैं। मैं तो कभी मना नहीं करती कि आप दोस्त अह-बाब में न जायें।"

देखा आपने यह सफ़ेद झूठ! मगर उससे ज्यादा सफ़ेद झूठ मुला-हज़ा हो कि हमने ज़रा बुरा मान कर कहा—"गोया दोस्त अहबाब आपसे बढ़कर हैं मेरे लिये। सुब्हानल्लाह! वह तो यह चाहते हैं कि जिस तरह उन सब ने एक-एक बीवी घर में लाकर बन्द कर रखी है और ख़ुद बाहर गुल छर्रे उड़ाते फिरते हैं वही मैं भी करूँ।"

बेगम ने सनद देने के अन्दाज़ से फ़रमाया—"ख़ैर, गुल छर्रे तो आप उड़ा ही नहीं सकते। मगर मुझे तो हैरत है उन औरतों पर जो अपने शौहरों के इस बरताव के बाद भी .खुश रहती हैं।"

हमने एक-एक शब्द पर पूरा ज़ोर देकर कहा—"खुश क्या ख़ाक रहती होंगी। बस यह कहिये कि ज़िन्दगी के दिन पूरे करती हैं। खैर आप को तो उन औरतों पर हैरत है मगर मुझे उन मर्दों पर ताज्जुब है कि ये बाहर की दिलचस्पियों के कैसे आदी हो गये हैं। अब फैयाज़ को ही देख लीजिए। कोई भी उसे देखकर कह सकता है कि उसके घर पर बीवी भी बँधी हुई है।"

बेगम ने कहा—"यह बँधी हुई है, बहुत खूब कहा। मगर मैं तो चाहती हूँ कि फ़ैयाज़ साहब की बीवी से मिलकर यह अन्दाज़ा करूँ कि वह किस तरह की औरत हैं। फ़ैयाज़ साहब को उनसे दिलचस्पी जो नहीं है तो इसमें कुसूर किसका है। फ़ैयाज़ साहब का या उनका।"

हमने कहा—"उस बेचारी का क्या कुसूर होगा। आपको मालूम नहीं कि मर्द कितनी ज़्यादती करते हैं औरतों पर।"

बेगम ने कहा—"बहर हाल आप मुझे किसी तरह फ़ैयाज़ की बेगम साहबा से मिला दीजिये।"

हमने कहा—"जब कहिये। बल्कि मैं तो यह चाहता हूँ कि आप मेरे दोस्तों की बीवियों से मेल बढ़ायें ताकि आपको अन्दाज़ा हो सके कि आपकी बहनों को हमारे भाइयों ने किस-किस तरीक़े पर क़ैद कर रखा है।"

अब बेगम साहबा आखिर कब तक दिल की बात मुँह पर न लातीं। धीरे-धीरे फ़ैयाज़ के बारे में खुलने लगीं—"मगर यह फ़ैयाज़ साहब मुझे अच्छे आदमी नहीं नज़र आते और चाहते यह हैं कि जैसे वह खुद हैं वैसे ही सब हो जायें।"

यह बात ज़रा खतरनाक थी और इसका मतलब यह था कि जल्द ही फ़ैयाज़ को निहायत जरायम पेशा, हद दर्जे का आवारा वग़ैरह कह कर हमको बिल्कुल मना कर दिया जायेगा कि हम उसकी बुरी सोहबत से बचें और भविष्य में कभी उससे मिलते हुए न पाये जायें। इसलिये हमने दूर अन्देशी से काम लेकर अर्ज़ किया—"वाक़ई अजीब तबि-

यत पाई है। ताज्जुब तो यह होता है कि कमबख्त जितना बुरा नहीं है उतना बुरा अपने को साबित करता रहता है। आपको हैरत होगी कि ताश का कोई खेल नहीं जानता, ग़ैर औरतों से इस तरह शर्माता है जैसे औरतें ग़ैर मर्दों से शर्माती हैं। यों तो क़ैंची की तरह ज़बान चलती है मगर किसी औरत से बात करेंगे तो मालूम होगा कि पैदायशी हकले हैं। जिस तरह कोई सूरज से आँखें चार नहीं कर सकता यही हाल उन हज़रत का है औरतों के सिलसिले में।"

बेगम बोलीं—"फिर आख़िर वह क्यों मरे जाते हैं। उनका दिल यह क्यों चाहता है कि तमाम दुनिया के मर्द अपनी-अपनी बीवियों को तलाक़ देकर आज़ाद हो जायें।"

बेगम आख़िर अपने रंग में आगई थीं इसलिये हमने बेगम की इस भड़कनेवाली आग को दबाने की कोशिश करते हुए कहा—"अरे नहीं-नहीं। तलाक़ वलाक़ कुछ नहीं, यह उसका मतलब नहीं हो सकता।"

एक दम से बिगड़ कर बोलीं—"मतलब नहीं हो सकता। साफ़ यही मतलब था। मैं तो यह पूछती हूँ कि आख़िर वह कौन सी बातें हैं जो बीवियों से छिपाकर आप लोग करना चाहते हैं और बीवियों की वजह से ऐसे मजबूर हो गये कि बीवियाँ बवाल बन कर रह गई हैं। सिनेमा जाने के लिये मैं खुद आपसे कहती हूँ कि चलिये सिनेमा हो आयें। पिकनिक, दोस्तों की दावतें, सैर सपाटे, सभी कुछ तो होता रहता है। मैं हर बात का खुद ख़याल रखती हूँ, मगर साहब इस पर भी कहा जाता है कि बीवी से दबे हुए हैं, बीवी के क़ैदी हैं, बीवी बाँध कर रखती है। आख़िर यह बीवी का रोना क्यों रोया जाता है?"

तूफ़ान शुरू हो चुका था। ऐसे तूफ़ान का हमारा जैसा मर्द कहाँ मुक़ाबिला कर सकता था। हमने समझ से काम लेकर उस बिफरी हुई शेरनी का हाथ मुहब्बत से पकड़ कर कहा—"तो क्या मैं भी दुनिया के दूसरे मर्दों की तरह हूँ, क्यों?"

बेगम पर फ़ौरन असर हुआ। एक दम धीमी पड़कर आवाज़ में गरज की जगह खनक पैदा कर के कहा—"अल्लाह न करे। मगर ये लोग तो यही चाहते हैं कि जैसे दरिन्दे ये खुद हैं वैसे ही सब को बना दें। इसीलिये तो मैं कहती हूँ कि फ़ैयाज़ साहब की बीवी से मुझको फ़ौरन मिला दीजिये। मैं उनसे कहूँगी कि बहन या तो अपने इस मर्दुए को आदमियों में बैठने के क़ाबिल बनाओ, इन्सानियत सिखाओ वरना बाँध कर रखो।"

हमने हँसते हुए कहा—"हाँ यह दूसरों के शौहरों को जंगली बनाता फिरता है। तुम इत्मीनान रखो, मैं मिसेज़ फ़ैयाज़ से मिलाने की तरकीब करता हूँ। मुझे तो खुद हैरत है कि वह किस क़िस्म की औरत हैं। सुना है कि अच्छी ख़ासी पढ़ी-लिखी हैं। फ़ैयाज़ साहब ने मुहब्बत होने के बाद शादी की थी। शुरू-शुरू में फ़ैयाज़ साहब ज़मीन पर पाँव ही न धरते थे। बीवी की तारीफ़ों के हर वक्त इस तरह पुल बाँधते थे कि हम सब को उनकी बीवी से उलझन सी होने लगी थी। या तो वह शोरा शोरी थी या अब यह बेनमकी है।"

बेगम ने मुँह बनाकर कहा—"तोते, बिल्कुल तोते। ये मर्द सब-के-सब तोते होते हैं। ऐसी आँखें फेरते हैं कि....।"

हमने बात काटकर कह।—"कि बस नबी जी भेजो।"

और बेगम को सचमुच या ज़रूरतन हँसी आ गई।

३

घर में फैयाज़ की और हमारी बेगम सर जोड़े कुछ सलाह मशविरे कर रही थीं और बाहर हम फ़ैयाज़ से सर खपा रहे थे। फ़ैयाज़ उस समय भी हमारी ज़न मुरीदी और बीवी की गुलामी का लगातार रोना रो रहा था और हम खुश थे कि बेगम यक़ीनन इसके हक़ में ऐसे काँटे बो रही होंगी कि यह भी क्या याद करेगा। इसमें शक नहीं कि फ़ैयाज़ पचहत्तर फ़ीसदी सही था और इसका कारण यह था कि खुदा ने उसको शरीफ़ क़िस्म का शौहर नहीं बनाया था और हमको इस खूबी से मालामाल करके कहीं का न रखा था। हम और वे इन्तहा को पहुँचे हुए थे। वह बीवी को रोब में लाकर ऐसा बहादुर क़िस्म का शौहर बन चुका था कि दाम्पत्य जीवन में उससे यह आशा ही व्यर्थ थी कि वह बीवी की खुशी पर अपनी किसी खुशी को क़ुरबान कर सकेगा, और यहाँ बीवी की खुशी के सामने हम उस कोण तक अपना सर झुका के थे जहाँ से सरकशी की सारी सम्भावनाएँ खत्म हो जाती हैं। फ़ैयाज़ की बीवी फ़ैयाज़ की हुकूमत मान कर हथियार डाल चुकी थी और हम अपने यहाँ अपनी मिट्टी ऐसी पलीद कर चुके थे कि अब अगर रोब जमाने की कोशिश भी करें तो बेगम को हमारी इस ऐक्टिंग पर यक़ीनन हँसी आ जायेगी। मगर यह असलियत थी कि फ़ैयाज़ के कथनानुसार उमंगें अभी तक ज़िन्दा थीं और दिल चाहता था कि ज़िन्दगी के कुछ क्षण अपने निजी भी हों। लेकिन

उन रुपयों के लिये या तो अब चोरी की जाये, झूठ बोला जाये, मुजरिमाना तौर पर बात छिपाई जाये वरना बेगम के होंठों पर मुस्कराहट की लहरों के बजाय निगाहों में शोले होंगे और उनके ठंडी चाँदनी जैसे व्यवहार को जेठ बैसाख की गर्म धूप में बदलता देखना पड़ेगा। आसान तरक़ीब यही थी कि सरकशी या बग़ावत के बजाय थोड़ा बहुत लफ़ंगापन किया जाये। मुद्दतें हो चुकीं ताश की सूरत भी न देखी थी। बहुत-बहुत जी चाहता था कि रमी की महफ़िल रचाई जाये, दिल खोल कर बाज़ियाँ लगें, ज़रा माक़ूल रक़म की हार जीत हो, और इसके लिये आज से अच्छा मौक़ा और कौन हो भी सकता था। फ़ैयाज़ की बीबी घर में थीं, जैसे हम एक हैसियत से छुट्टी पर ही थे। मगर हारने के लिये रक़म ? देर तक अनेक तरकीबों पर ग़ौर करते रहे, आखिर फ़ैयाज़ ने ज़ोर देकर कहा—आखिर कोई फ़ैसला कर चुको न। जब सारे यार दोस्त अपने-अपने घर से निकल गये तब फिर कहाँ उनको ढूँढा जायेगा ?"

हमने कहा—"भई ज़रा दम तो लो। चलना तो खैर है ही। मगर सवाल यह है कि रुपये का क्या इन्तज़ाम किया जाये ?"

फ़ैयाज़ ने हैरत से हमारा मुँह देखते हुए कहा—"क्या मतलब ? यानी साल सवा साल के बाद खेलने के लिये भी आपके पास रुपये नहीं हैं। मैं पूछता हूँ कि आखिर तुम इतने मनहूस क्यों होते जाते हो। तुम तो रोज़ के खेलने वाले थे और क्लब के चन्द नामी गिरामी हारने वालों में तुम्हारा नाम हमेशा सुनहरे हरफ़ों में लिखा रहा है। मगर मैंने तुम्हारे मुँह से कभी रुपये के बारे में इन्तज़ाम का लफ़्ज़ नहीं सुना।"

हमने कहा—"यह तो ठीक है। मगर यह तब की बात है जब हमारी शादी नहीं हुई थी। अब तो रुपया माँगना पड़ेगा, इसलिये यह बताओ कि क्या कहकर माँगा जाये ?"

फ़ैयाज़ ने कहा—"कह दो जाकर कि ताश खेलना है।"

हमने होंठों पर उँगली रखकर कहा—"खुदा के लिये ज़रा धीरे से बोलो। बना बनाया खेल बिगड़ कर रह जायेगा। तुम लाख कहो, मगर मुझसे इतना बड़ा सच कभी न बोला जायेगा।"

फ़ैयाज़ ने कहा—"लानत है इस ज़िन्दगी पर। समझ में नहीं आता कि जनाब ने अन्डमन जाने के बजाय शादी करना क्यों पसन्द किया।"

हमने अपनी बेबसी का खुद मज़ाक़ उड़ाते हुए कहा—"जब जन्म-क़ैद घर बैठे मिल जाये तो काले पानी की क्या ज़रूरत है। बहरहाल अब जल्द कोई तरकीब बताओ।"

फ़ैयाज़ ने बिना कुछ ग़ौर किये हुए कहा—"उँह, हज़ार तरकीबें हैं। जाकर कह दो कि कालिज में जलसा है और सभी ओल्ड ब्वायज़ को खास तौर पर बुलाया गया है। शायद चन्दा भी देना पड़ेगा। सौ रुपये से कम में जान न छूटेगी।"

हमने फ़ैयाज़ की इस अपराधी मनोवृत्ति की मन-ही-मन तारीफ़ की और इस तरकीब को ज़रा और खूबसूरत बनाकर ज़नाने घर की तरफ़ चल पड़े। बेगम को नौकरानी से बुलवाकर कहा—"ज़रा कालिज तक जा रहा हूँ।"

बेगम ने झट से कहा—"कितनी देर में वापसी होगी?"

हमने योंही कह दिया—"उम्मीद है चाय के वक्त तक आजाऊँगा। कालिज में आज ओल्ड ब्वायज़ डे है और तजवीज़ यह है कि कालिज के अहाते में ही ओल्ड ब्वायज़ की तरफ़ से एक बोर्डिंग ऐसा बना दिया जाये जिसमें ग़रीब लड़के रह सकें। मुझे खास तौर पर बुलाया गया है और शायद चन्दा भी देना पड़ेगा मगर मैं इस वक्त तो सौ रुपये से ज़्यादा न दूँगा।"

बेगम ने कहा—"हाँ हाँ, तो जो मुनासिब समझियेगा कीजियेगा।"

हमने जल्दी से कहा—"मेरा मतलब यह था कि चन्दा तो देना ही पड़ेगा न?"

बेगम ने कहा—"तो चेक बुक लाऊँ, या आप नाम लिखवा दीजियेगा। रक़म जाती रहेगी बाद में।"

अब बताइये, ऐसे मौक़े पर क्या कहा जाये। मगर वाह रे रही सही समझ बूझ। हमने फ़ौरन ही कहा—"न न, मैं तो यह करूँगा कि सौ रुपये का पर्स फ़ौरन पेश कर दूँगा। नक्द देने का असर यह पड़ता है कि दूसरे भी नक्द देना शुरू कर देते हैं। यह तो भेड़ चाल होती है न?"

बेगम ने कहा—"मैं सौ रुपये लाये देती हूँ। अच्छा यह तो बताइये कि फ़ैयाज़ साहब यहीं रहेंगे?"

हमने कहा—"मालूम नहीं मुझे। मगर शायद वह भी जायेंगे। कालिज तो उनको भी जाना ही होगा।"

बेगम ने जाते हुए कहा—"अच्छा आप ठहर जाइये। मैं रुपया निकाल लाऊँ।"

हम अपनी कामियाबी पर तो खुश थे मगर आत्मा बराबर धिक्कार रही थी। हमने आत्मा को लोरियाँ देकर सुलाने की कोशिश करते हुए न जाने क्या गुनगुनाना शुरू कर दिया कि इतने में बेगम ने सौ रुपया देते हुए कहा—"मिसेज़ फ़ैयाज़ को तो खबर भी नहीं कि आज ओल्ड ब्वायज़ डे है।"

हमने कहा—"क्या बात कही है आपने। गोया फ़ैयाज़ मेरी तरह अपना प्रोग्राम बताते ही तो होंगे अपनी बीवी को।"

बेगम ने कहा—"मिसेज़ फ़ैयाज़ सचमुच इस क़ाबिल हैं कि उनकी मदद की जाये। मैंने उनसे तमाम हालात मालूम कर लिये हैं और अब आपको भी इस मामले में पड़ना पड़ेगा। फ़ैयाज़ साहब की इन तमाम ज़्यादतियों को खत्म होना चाहिये। उनको तो दर असल बीवी से कोई मतलब ही नहीं रहा है। खैर, आप कालिज से हो आइये, फिर इत्मीनान से बातें होंगी।"

बेगम तो उधर गईं मिसेज़ फ़ैयाज़ के पास और इधर हम फ़ैयाज़

को लेकर चल दिये अपनी तफ़रीह की फ़िक्र में। तय यह पाया कि सीधे चलें क्लब। छुट्टी का दिन है, ज़्यादातर लोग वहीं होंगे। चुनांचे जिस वक्त हम क्लब पहुँचते हैं, लगभग सभी जमा थे। हमको देखते ही सब ने आकर घेर लिया और लगे अपनी-अपनी बोलियाँ बोलने।

रमेश ने सर से पैर तक देखते हुए कहा—"सचमुच, यह तो अब तक कुछ ज़िन्दा ही मालूम होता है।"

इखलाक़ ने कहा—"छोड़ तो नहीं दिया बीवी को ? जो यहाँ नज़र आ रहे हो।"

मसऊद ने दूर से नारा लगाया—"अल्लाह ! यानी आप ?

टंडन ने अपने खास गम्भीर ढंग से कहा—"जनाब हमारा कबूतर छः महीने के बाद एक दिन उड़ कर हमारे यहाँ आ गया था"

फ़ैयाज़ ने मुस्करा कर कहा—"दाद दीजिये मुझको, कि इसको यहाँ तक हँकाकर लाया हूँ और ज़मानत के तौर पर अपनी बीवी को छोड़ा है वहाँ।"

इखलाक़ ने हमको उन सब के मजमे से अलग ले जाकर अपने क़रीब बैठाते हुए कानाफूसी के रूप में कहा—"क्या सचमुच यह खबर सही है कि हमारी भाभी हर वक्त पहरा दिया करती हैं। आखिर यह आप ईद के चाँद क्यों हो गये हैं ?"

हम आखिर कहाँ तक चुप रहते ? हमने भी बड़ी गम्भीरता से कहा—"भाई बात यह है कि तुम हो अभी कुँआरे। तुम्हारी समझ में ये बातें नहीं आ सकतीं।"

इखलाक़ ने कहा—"यह ग़लत है। आपको मालूम होना चाहिये कि क्लब ने एक राय से यह रेज़ुल्यूशन पास किया है एक डेलीगेशन आपकी बेगम साहवा के पास जायेगा और उनसे दरख़्वास्त करेगा कि वह आपको सिर्फ़ अपना शौहर समझें। ग़ैर मनक़ूला जायदाद समझकर आपकी मालिक न बनें। वरना क्लब के मेम्बर सत्याग्रह शुरू कर देंगे।"

इतनी ही देर में बाक़ी लोग भी आ चुके थे।

रमेश ने कहा—"मेरी राय तो यह है कि इस शरीफ़ाना तरीक़े के बजाये हम लोग इन हज़रत को अब जाने ही न दें। भाभी को विदाई का दावा करने दें।"

इस विदाई के दावे पर एक ज़ोरदार ठहाका लगा। मसऊद ने उसी शोर में अपनी आवाज़ को तेज़ करके कहा—"भाभी बेचारी का तो दर असल सिर्फ़ इतना ही क़सूर है कि वह एक तावेदार शौहर की बीवी बन गई हैं। मगर इन हज़रत ने तो सचमुच मर्दों की नाक कटवा रखी है। इस दौर में ऐसा शौहर ढूँढे से न मिलेगा कि बीवी क्या मिली खुद ही खो गये। सज़ा तो इनको देना चाहिये।"

टंडन ने कहा—"और सज़ा भी ऐसी कि बाक़ी तमाम होने वाले शौहर सबक़ हासिल करें। जिस तरह अगले ज़माने में चौराहों पर फाँसियाँ दी जाती थीं उसी तरह की कोई सज़ा सोचनी चाहिये।"

इख़लाक़ ने सब को चुप करके कहा—"यह कुछ नहीं। इन हज़रत से पूछना यह है कि यह सीधी तरह क्लब की हाज़िरी को अपना फ़र्ज़ समझने को तैयार हैं या फिर हम लोग इस सिलसिले में क़दम उठायें।"

रमेश ने कहा—"आप इनसे समझौते की उम्मीद रखते हैं, हालाँकि इनकी हालत अब इस मंज़िल से आगे निकल चुकी है। मेरी राय में तो अब हमीं लोगों को क़दम उठाना चाहिये।"

इख़लाक़ ने बड़े सोच-विचार के साथ अपनी योजना सामने रखते हुए कहा—"मेरी स्कीम के मुताबिक़ अब इन मियाँ-बीवी के रिश्ते की उम्र बहुत कम रह गई है। पहले तो पन्द्रह दिन तक ख़ामोश ढकी छिपी लड़ाई होगी, ठंडी और लम्बी-लम्बी साँसों का सिलसिला जारी होगा, आँखों में शिकायतें पलती और बढ़ती रहेंगी, दम घुटता और दिल टूटता हुआ महसूस होगा। इसके बाद एक दिन आमने सामने की ठहरेगी, सब्र के पैमाने छलक जायेंगे, क़समों का एतबार उठ

जायेगा। फिर कोई सवा महीने के बाद बक्स घसीटे जायेंगे, बिस्तर बँधेंगे, दरवाज़े पर एक पर्देदार टाँगा खड़ा होगा और आपके घर की रौनक़ पर तौलती नज़र आयेगी। आप अपनी वफ़ादारियों का आख़िरी बार यक़ीन दिला कर आला दर्जे के मक्कार, दग़ाबाज़ और फ़रेबी साबित होंगे। आपके सामने आपकी बेवफ़ाइयों के दस्तावेज़ी सबूत पेश होंगे और आपके पास खुद उन दस्तावेज़ों को रद्द करने के लिये न शब्द होंगे और न कोई सबूत। आपकी बेगुनाही खुद अपने गुनहगार होने के यक़ीन में मुब्तिला होकर रह जायेगी। टाँगा रवाना होगा और आप क्लब आने के लिये आज़ाद। फिर दो महीने के बाद उधर से, मुक़दमे बाज़ी की धमकी दी जायेगी और इधर से मिलने के लिये खुशामदें की जायेंगी, मगर बेकार, इस लिये कि इस अर्से में कुछ और सबूत आपकी बदमाशियों के मिल चुके होंगे। आख़िर छठे महीने के ख़तम होने से पहले ही आप हम सब से राय लेंगे कि तलाक़ देने का क़ानूनी तरीक़ा क्या है?"

कमबख्त ने ऐसी भयानक तस्वीर खींची कि आख़िर हमने कानों पर हाथ रख लिया और हाथ जोड़ कर कहा—"खुदा के वास्ते मेरे हाल पर रहम करो। मैं वायदा करता हूँ कि क्लब से कभी ग़ैर हाज़िर न होऊँगा।"

इख़लाक ने कहा—"यह ग़लत है। इस तरह के वायदे हमको इत्मीनान नहीं दिला सकते। अगर इस सिलसिले में आपकी नियत सचमुच पाक है तो बिस्मिल्लाह। यह काग़ज़ है, यह क़लम और यह दावात। एक बाक़ायदा तहरीर लिख दीजिये जो हमारे क़ब्ज़े में रहेगी और जब कभी आपने उसके खिलाफ़ किया तो हमारी तरफ़ से आपकी बेगम साहबा की अदालत में ही मुक़दमा दायर हो जायेगा और आपको सज़ा दिलवाने के लिये सिर्फ़ वही तहरीर काफ़ी होगी।"

हमने कहा—"लाइये लिखे देता हूँ एक ज़ाब्ते का इक़रार नामा।"

मसऊद ने कहा—"देखो चर्का न दो। हम लोग बेवकूफ़ ज़रूर हैं

मगर इतने नहीं कि आप हमारी बेवक़ूफ़ी से फ़ायदा उठा सकें। बीवी से जाकर कह देंगे कि दोस्तों ने मज़ाक़ में एक ऐसा इक़रार नामा लिखवा लिया है। आप तो एक प्राइवेट ख़त लिखिये जिसमें अपनी बीवी के ज़ुल्म बयान कीजिये और उनसे छुटकारा पाने की तरकीब पूछिये।"

इख़लाक़ ने कहा—"मैं ड्राफ़्ट तैयार किये देता हूँ, उसी की नक़ल कर दीजिये।"

यह कहकर उन सब ने सर जोड़ कर एक ऐसा ड्राफ़्ट तैयार किया कि सचमुच अगर उसे बेगम देख लें तो उनका दिल टुकड़े-टुकड़े होकर रह जाये। हमने लाख-लाख चाहा कि उस ड्राफ़्ट में कुछ संशोधन करायें, उसके मज़मून को कुछ नर्म करायें मगर एक न सुनी गई। वहाँ तो बस वही ज़बरदस्ती थी कि दस्तख़त कर दो। आख़िर उस ड्राफ़्ट की नक़ल करके और दस्तख़त करके अपने को उनके हाथ में देते ही बन पड़ी।

इस सारी कारवाई के बाद उन लोगों को चैन आया और अब बड़ी मुश्किल से खेल शुरू हो सका। ताश के खेलों में हमें चूँकि रमी का खेल सब से ज़्यादा पसन्द है इस लिये रमी की ही फड़ जमी।

खेल होता रहा। कभी जीते, कभी हारे और आख़िर जब हमने चाय के वक़्त के क़रीब इजाज़त माँगी और फ़ैयाज़ ने भी हमारा समर्थन किया तो हम साठ-सत्तर रुपये जीत पर थे। फ़ैयाज़ की सलाह के अनुसार हमने यह सब रक़म यानी मूल और जीत की रक़म क्लब में ही जमा करादी ताकि फिर कालिज के किसी और बोर्डिंग हाउस के लिये चन्दा लेने की ज़रूरत न पड़े।

४

झूठ और चोरी का क़ायदा है कि एक बार किसी से यह भूल हो जाये तो उसके बाद उसको छिपाने के लिये लाखों झूठ तराशे जाते हैं और सैकड़ों दूसरी चोरियाँ करनी पड़ती हैं। अगर पहले दिन ही हमने ज़रा हिम्मत से काम लेकर बेगम से कह दिया होता कि चाहे तुम जान से मार डालो मगर ताश खेलने का हमको शौक़ है और क्लब में इस शौक़ को पूरा करने के लिये जाने पर हम मजबूर हैं तो उसी दिन और उसी वक्त जो कुछ होने वाला था हो जाता। ज़ाहिर है कि वह आसानी से अपने शौहर का जुआरी होना बरदाश्त न करतीं। कुछ क़िस्मत को रोतीं, कुछ अपने को पीड़ित ज़ाहिर करतीं, एकाध दिन ठंडी साँसें भरतीं, हो सकता था कि भूख-हड़ताल तक नौबत पहुँच जाती, फूली-सूजी रहतीं मगर आखिर धीरे-धीरे अपने क़रीने पर आ जातीं और एक बहादुराना सच्चाई हमेशा के झूठ और एक लगातार चोरी से बचा देती। मगर बहुत सी बातें सिर्फ़ लिखी और कही जा सकती हैं, अमल नहीं हो सकता उन पर कभी। सुना है कि बहुत से शौहर ऐसे भी पाये गये हैं जिन्होंने इस तरह के खौफ़नाक सच बोले हैं और उन सारी बातों का मुक़ाबिला कर गुज़रे हैं जिनकी कल्पना से ही एक नार्मल क़िस्म के शौहर को कँपकँपी शुरू हो जाये। बहरहाल हम मानते हैं कि न तो हम यह सच बोल सकें और न आगे के लिये यह

हिम्मत पाते हैं। कहिये तो आग के दरिया को डूब कर पार कर जायें, तोप के मुक़ाबिले पर डट जायें, चाहे जाँबाज़ी किसी के मुक़ाबिले में भेज दीजिये, क्या मजाल जो हमारे क़दम ज़रा भी डगमगायें। मगर बीवी से सच बोलने के लिये जिस दिल-गुर्दे की ज़रूरत होती है उससे हम ज़रा मजबूर हैं। जानते हैं कि चोर होकर रह गये हैं, समझते हैं कि झूठ बोल रहे हैं, महसूस करते हैं कि ये कमज़ोरियाँ और भी बुज़दिल बना रही हैं, आत्मा बेचारी ने बराबर धिक्कारा कि पहले उसकी आवाज़ बराबर सुनते थे, फिर दूसरे-तीसरे सुनने लगे, धीरे-धीरे यह आवाज़ हफ़्तावार आने लगी और अब तो मालूम नहीं बेचारी ज़िन्दा भी है या मर गई। मगर बेगम को अब तक यह पता नहीं है कि उनका यह वफ़ादार शौहर कितना झूठा और कैसा ख़तरनाक चोर होगया है। कभी दफ़्तर में किसी बड़े अफ़सर के मुआयने के कारण ज़्यादा वक़्त देना पड़ता है, कभी किसी हाकिम की विदाई के इन्तज़ाम में लगे रहने की बात सुनानी पड़ती है, कभी दौरे पर जाना पड़ जाता है। सारांश यह कि क्लब जाने के लिये तो किसी-न-किसी तरह वक़्त निकालना पड़ता है। अलबत्ता अब बेगम को यह फ़िक्र ज़रूर है कि काम की इस ज़्यादती का कहीं तन्दुरुस्ती पर कोई बुरा असर न पड़े। समझे यह थे कि कुछ दिन तक वह देर-सबेर के बारे में पूछ-ताछ का सिलसिला जारी रखेंगी, इसके बाद धीरे-धीरे आदी हो जायेंगी और शायद जवाब तलबी का डर ख़तम हो जायेगा। मगर जनाब बेगम आख़िर बीवी हैं और वह कभी यह सवाल करने से नहीं चूकतीं कि—"और आज क्या हो गया था कि आधी रात हो गई?"

इसमें शक नहीं कि बहाने बाज़ियों ने अच्छा ख़ासा कहानीकार बना दिया है कि जहाँ उन्होंने ने यह सवाल किया, फ़ौरन एक कहानी गढ़ कर भेंट कर दी जाती है।

कल रात ही का क़िस्सा है कि क्लब में रमी की महफ़िल जो जमी

तो " बस यह आखिरी रमी है " और " अच्छा इस रमी के बाद खेल बिल्कुल खत्म हो जायेगा।" कह-कहकर यारों ने साढ़े बारह बजा दिये। अब जो घर पहुँचे हैं तो सिरहाने टेबुल लैम्प जल रहा था और बेगम कोई किताब पढ़ रही थीं। हमारे पहुँचते ही बोलीं—

"माशा अल्लाह, माशा अल्लाह! ज़रा घड़ी देख लीजिये।"

हमने शेरवानी एक तरफ़ उछालते हुए कहा—"आप को अपनी पड़ी है, यहाँ ज़िन्दगी से तङ्ग आ चुके हैं, जोड़-जोड़ फोड़े की तरह दुख रहा है।"

लाख कुछ सही, फिर भी आखिर बीवी हैं। फ़ौरन हमदर्दी शुरू कर दी—"कोल्हू के बैल की तरह जुते ही तो रहते हैं काम में। मैं तो दो महीने से यही नक्शा देख रही हूँ कि घर पर सूरत ही नहीं दिखाई देती। रोज़ कोई-न-कोई काम निकल आता है, आखिर आज इतनी देर क्यों हो गई?"

हमने वैसी ही परेशान सूरत बनाये हुए कहा—"आदमी थोड़े ही समझते हैं ये लोग। जानवर समझ रखा है जानवर। दफ्तर का काम खत्म करके आ ही रहे थे कि डायरेक्टर साहब का तार मिला। घर आने के बजाये स्टेशन जाना पड़ा। गाड़ी दो घन्टे लेट, वहीं जैसी भी मिली चाय पी ली और मरते रहे प्लेटफ़ार्म पर। खुदा खुदा करके गाड़ी आई तो अब गोया उन हज़रत की अर्दली में आ गये। उनके साथ दफ्तर आये। बड़ी देर फ़ाइलों से सर खपाते रहे। इसके बाद उनके साथ जाना पड़ा सिनेमा। अंग्रेज़ी फ़िल्मों से योंही उलझन रहती है। आधी रात तक वहाँ आँखें फोड़ीं।"

बेगम ने कहा—"इन डायरेक्टर साहब ने तो अच्छा घर देख लिया है। अभी छः सात दिन ही तो हुए जब आ चुके थे।"

अब हमें याद आया कि सचमुच एक हफ्ता पहले यही बहाना कर चुके थे। बात यह है कि जाना तो ठहरा रोज़ का और बहाने ठहरे गिने चुने। हर रोज़ कहाँ तक याद रखा जाये कि कब क्या बहाना

बनाया था। फिर भी हम घबराये नहीं और फ़ौरन कहा—"कौन वह ? हाँ, मगर वह तो दूसरे डायरेक्टर थे। यही तो मुसीबत है इस मुहकमे में। मातहत तो हम चन्द ही हैं बाक़ी हाकिमों की कोई गिनती ही नहीं। तीन-चार तो डायरेक्टर ही हैं। एक मुआयना करने आता है तो उसकी ज़िद में दूसरा ज़रूर आता है। पिछले हफ्ते मंझले डायरेक्टर साहब आये थे।"

बेगम ने हँसकर कहा—"अच्छा, अब डायरेक्टर भी बड़े, मंझले, संझले और छोटे होने लगे।"

हमने कहा—"आप तो सिर्फ़ यही कह रही हैं। हमारे यहाँ तो सगे, सौतेले तक होते हैं। फिर एक क़िस्म डायरेक्टरों की और भी है यानी चचेरे डायरेक्टर, मौसेरे डायरेक्टर।"

बेगम ने मज़ाक़ समझकर कहा—अच्छा अब रहने दीजिये। चले हैं बनाने।"

हमने गम्भीरता से कहा—"यक़ीन तो माना कीजिये। बात यह है कि खुद हमारे मुहकमे के चार डायरेक्टर हैं। वे तो अपने मर्तबे के लिहाज़ से बड़े, मंझले, संझले और छोटे डायरेक्टर कहलाते हैं। अब चूँकि जंगल के मुहकमे का भी थोड़ा बहुत ताल्लुक़ इस मुहकमे से है इसलिये नहर के रिश्ते से उस डायरेक्टर को मौसेरा डायरेक्टर कहा जाता है। इनकम टैक्स वाले डायरेक्टर को हम लोग सौतेला डायरेक्टर कहते हैं........।"

बेगम ने शायद हम पर तरस खाकर या खुद उलझकर कहा—"अच्छा खैर, होंगे मुए डायरेक्टर खाना मँगवाऊँ या इसका भी इरादा नहीं है ?"

ताश के खेल में और खास कर क्लब में जो खेल हो वहाँ मुँह बराबर चलता रहता है ताकि दिमाग़ पर मेदा हावी न होने पाये। यहाँ खाने की गुंजायश ही कहाँ थी। इसलिये हमने जान से बेज़ार होने की अदाकारी करते हुए कहा—"इस वक़्त तो बस सो जाने

दीजिये। बिल्कुल खामोश लेट कर सोने को दिल चाह रहा है।"

खामोश लेटने की सचमुच ज़रूरत थी ताकि कल के बारे में बहाना सोच सकें और फिर सो भी सकें।

बेगम ने चिन्तित होकर कहा—"यही तो मैं देख रही हूँ कि मेहनत तो है ऐसी, सेहत हमेशा से ला जवाब है। दिन भर के थके-हारे और मुँह लपेट कर पड़ रहे।"

इसको कहते हैं हाज़िर दिमाग़ी। थके हुए तो थे ही और आज सचमुच हारे भी खूब थे। क्लब में जितना रुपया जमा था वह सब और उसके अलावा कुछ और भी। यानी अब सिर्फ़ क्लब जाना ही नहीं था बल्कि रुपये का इन्तज़ाम भी करना था। हम इत्मीनान से लेट कर कोई तरकीब सोचना चाहते थे पर बेगम साहबा की हमदर्दियाँ किसी तरह खत्म ही न होती थीं। आख़िर हमने निहायत मिस्कीनी के साथ कहा—"मैं खुद आजिज़ आ चुका हूँ इस नौकरी से। इस क़दर मेहनत, दिमाग़ी उलझनें, न खाने का होश न पीने का होश। फिर बहुत सी परेशानियाँ ऐसी भी तो होती हैं जो मैं आपसे बयान करना नहीं चाहता।"

बेगम ने हमारी आशा के अनुसार तड़पकर कहा—"मुझे पहले ही शुबहा था कि आज कल आप कुछ दिमाग़ी उलझनों में हैं। न घर की किसी बात से कोई दिलचस्पी है, और काम हो या न हो, मगर वैसे भी आपकी तबियत घर से कुछ उचाट सी रहती है। यह बात तो अब आप ने नई सीखी है कि अब आप मुझसे भी परेशानियाँ छिपायें। आख़िर आप मुझसे न कहेंगे तो किससे कहेंगे। आज मालूम नहीं कैसे आपकी ज़बान से इतनी बात निकल गई। अब तो मैं पूछ कर रहूँगी कि आख़िर क़िस्सा क्या है और आपको मेरी ही क़सम है जो मुझसे कुछ छिपायें।"

मतलब तो पूरा हो चुका था मगर आज आत्मा ने फिर हस्तक्षेप शुरू कर दी। एक आवाज़ आई कि ओ कमबख्त! देख इस मासूम

औरत को कि यह तेरे लिये कितनी बेचैन होगई है और तू है कि इसको धोखा देना चाहता है। और आत्मा के बहकाने में आकर कहने वाले ही थे कि बेगम, यह सब अदाकारी है और असलियत यह है कि हम हैं बड़े हज़रत वग़ैरा, वग़ैरा। मगर फिर एक दम से ख़याल आया कि हमेशा के लिये एतबार हो तो इस वक्त जुर्म को स्वीकार कर लो। चुनांचे हमने आत्मा को अनुचित हस्तक्षेप के सिलसिले में डाँट-डपट कर बहुत ही दर्दभरी आवाज़ में बेगम से कहा—"मैं ख़ुद परेशान रह सकता हूँ मगर मुझसे यह नामुमकिन है कि आपको परेशान देखूँ। मर्द तो परेशानियों का मुक़ाबिला करने के लिये बनाये ही गये हैं, मगर आप का तो यह काम नहीं है।"

बेगम ने बड़ी मुहब्बत से हमारा हाथ पकड़ कर कहा—"आप कैसी बातें कर रहे हैं। आप अगर परेशान रहेंगे तो क्या आप को यह यक़ीन है कि मैं ख़ुश रह सकूँगी। कभी नहीं। अलबत्ता अगर आप की परेशानियाँ मेरी वजह से दूर हो सकीं या कम-से-कम हलकी होगईं तो मैं अपने को ख़ुशनसीब समझूँगी। अच्छा ख़ैर, अब मैं आपको क़सम दे चुकी हूँ और अब आप को बताना ही पड़ेगा कि क़िस्सा क्या है?"

हमने कहा—"बात बताने वाली तो नहीं है, मगर मुसीबत तो यह है कि आप बात-बात पर क़सम दे देती हैं इसलिये अब झक मार कर कहना ही पड़ेगी। क़िस्सा दर असल यह है कि हमारे वह डायरेक्टर साहब, जो पिछले महीने मरे थे उन पर कोआप्रेटिव सोसाइटी का क़र्ज़ा था और उनके दो ज़ामिनों में से एक मैं भी हूँ और ज़िन्दा हूँ। इसलिये क़ानून के मुताबिक़ जितनी क़िस्तें वह अदा करके मरे हैं उनके बाद जो रुपया बाक़ी रह गया है उसका ज़िम्मेदार मैं और दूसरे ज़ामिन साहब हैं। इस तरह मेरे हिस्से में एक हज़ार रुपया आता है जो मुझे दो-दो सौ की पाँच क़िस्तों में अदा करना चाहिये।"

बेगम ने बड़ी फ़ैयाज़ी के साथ कहा—"तो इतनी सी बात के

लिये आप अपने को उलझनों में डाले हुए हैं। आखिर बैंक में जो रुपया मेरे नाम से जमा है वह किस दिन के लिये हैं। बल्कि मैं तो यह कहती हूँ कि क़िस्तों-विस्तों का झगड़ा भी फ़ज़ूल है। पूरा एक हज़ार निकाल कर दे दीजिये। मैं उस रुपये से ज़्यादा इस बात से खुश होऊँगी कि जो रुपया जमा है उसका एक हिस्सा आपके काम आसका।"

हमने मुँह माँगी मुराद पाने के बाद कहा—"रुपया कैसे देदें। अभी तो हमको लड़ना है कि यह रुपया उनके रिश्तेदारों से क्यों न वसूल किया जाये। सुना है कि उनका कोई मकान भी उनके वतन में है जो उनके लड़के को मिला है। दरअसल इस क़र्ज़ का भार उस मकान पर होना चाहिये। अब इस काम के लिये ज़रूरत है कि वकील किया जाये और सवा सौ रुपया फ़ौरन खर्च किया जाये। उम्मीद है कि हमारा यह उज्र मान लिया जायगा।"

बेगम ने हमारे बालों से खेलते हुए कहा—"हाँ हाँ, जो तरकीब हो सके वह कीजिये न। परेशान होने की क्या ज़रूरत है। आप कल ही मुझसे रुपया लेकर वकील को दीजिये। अगर आपका उज्र सुन लिया गया तो बहुत अच्छा है। वरना जहाँ एक हज़ार वहाँ बारह सो सही। मगर खुदा के लिये आप अपने को इस तरह सती तो न कीजिये।"

हमने ज़बान से तो हाँ-हूँ कह कर बात टाल दी मगर दिल इतना खुश था कि क्या बतलायें। सौ-डेढ़-सौ रुपया तो गोया फ़ौरन मिल रहा था। अगर इसमें बरकत हुई तो खैर, वरना आगे के लिये एक हज़ार रुपये का और भी सामान हो गया। अगर हम बेगम से यह कहते कि हमको ताश खेलने और दोस्तों में उड़ाने के लिये रुपया दरकार है तो भला वह इतनी बड़ी रक़म अपने उस रुपये में से दे सकती थीं जो उनके नाम से जमा है। तौबा कीजिये। मगर यह तरकीब ऐसी कार-गर हुई कि हल्दी लगी न फिटकरी और रंग चोखा आगया। दिल

को ऐसा इत्मीनान हो गया कि क्लब में खैर पत्तों ने साथ न दिया पर घर आकर बाज़ी जीत ली।

५

क्लब के मेम्बरों में एक मेम्बरानी भी थीं। नाम था शकीला और वह लेडी डाक्टर थीं। उन्हें यह वहम भी था कि दुनिया के जितने मर्द हैं वह सिर्फ़ इसलिये पैदा किये गये हैं कि उन्हें आपका रोगी बनकर रहना है। विलायत में रह आने का असर यह था कि मर्दों में अपने को अजनबी महसूस न करती थीं। मगर उनके कारण हम लोग बेहद बोर रहने लगे थे। इस सिलसिले में हम सब मिलकर कोरस में फ़ैयाज़ को बुरा भला कहा करते थे और कोसा करते थे जिनकी मेहरबानी से डा० शकीला हमारे क्लब की मेम्बर बनी थीं। हमारे क्लब का क़ायदा यह है कि किसी नये आदमी को उसी वक्त मेम्बर बनाया जा सकता है जब कम से-कम तीन मेम्बर उसकी सिफ़ारिश करें। फ़ैयाज़ साहब तो हैं ही शैतान के पर्सनल असि-स्टेंट। उन्होंने न जाने कहाँ से डा० शकीला को खोज निकाला और अपनी इस खोज का रोब जमाने के लिये उनको अपने साथ मेहमान के रूप में क्लब में लाना शुरू कर दिया। मक़सद सिर्फ़ यह था हम लोग आपके रोब में आ जायें कि ओफ़्फ़ोह यह तो क्यूपेड का कोई करीबी रिश्तेदार है जिसने ऐसी लाजवाब हिरनी का शिकार किया है। हालांकि वह लाजवाब या लासानी तो क्या होती हाँ आदमी का बच्चा ज़रूर थीं। धीरे-धीरे हम सबसे भी उनकी बेतकल्लुफ़ी हो

गई और हमारी मुख़ालफ़त के बावजूद फ़ैयाज़ ने रमेश और इख़लाक़ की सिफ़ारिश हासिल करके उनका मम्बर बनवा ही दिया।

हमने उन सबसे साफ़ कह दिया कि अब हम प्यारे आदमज़ाद इस होना की बेटी के कारण क्लब की इस जन्नत से निकलने पर मजबूर होंगे। ख़ैर, क्लब से तो हम लोग न निकल सके पर क्लब को उन साहबज़ादी ने जहन्नम ज़रूर बना दिया। उनकी मौजूदगी में कोई भी बेतकल्लुफ़ नहीं हो सकता था। डा० शकीला तो लाख चाहती थीं कि हम सब निहायत बेबाक हो जायें। ढूँढ़-ढूँढ़ कर ऐसी बहस छेड़ा करती थीं कि हम सावधानी के घेरे से बाहर आ जायें। पता नहीं क्या बात थी कि हमको ख़ास तौर पर उनसे कुछ उलझन सी होती। जहाँ तक हो सकता था उनसे अलग-अलग रहने की कोशिश होती थी। उनसे कतराना, उनसे दामन बचाना, उनसे आँख चुराना हमारी एक बेसाख़्ता अदा बन चुकी थी। मगर वह थीं कि हर तरफ़ से घेरे रहती थीं। रमी के टेबुल पर भी आने लगीं और हमारे साथ बाक़ायदा रमी खेलना शुरू कर दी। शायद उनको मालूम था कि उनकी दाल गलने का नाम ही नहीं लेती, मगर यह जानने के बावजूद शायद उन्हें इत्मीनान था कि यह सरकशी ही एक दिन उनके सामने हमारा सर झुका देगी। लगातार छेड़-छाड़, बेबात की बात पर हमसे बोलना। ख़ैर, बाक़ी मेम्बर तो इसमें कोई हर्ज नहीं समझते थे मगर हमारा उसूल ज़रा दूसरा है। औरत में औरतपन, स्वाभिमान और एक हद तक घमंड होना ज़रूरी है। औरतपन वह चीज़ है जो उसमें आकर्षण पैदा करती है। लेकिन अगर औरत ख़ुद बचने के बजाय पीछा करने लगे तो मर्द को सर पर पैर रखकर भागना चाहिये क्योंकि तब औरत का औरतपन ग़ायब हो जाता है। इसलिये हम अपने नज़दीक सर पर पैर रखकर भाग रहे थे और हमारी यह उपेक्षा डा० शकीला को और भी उत्तेजित कर रही थी। हद यह है कि वह जज़्बात की रौ में इतनी बहक चुकी थीं कि उनकी निगाहों को क्लब के हर मेम्बर ने पढ़ लिया

था। लोगों में यह चर्चा थी और उनको यह पता भी था कि चर्चा हो रही है पर वह ठहरीं शिक्षित, विलायत पलट। और फिर घर की तरफ से आज़ाद। मां बाप खुद उनकी प्रजा थे। शादी इसलिये नहीं की थी कि फिर यह फ़ुरसत कहाँ मिलती।

हम तो यही समझते कि खुदा ने हमारे गुनाहों की मुँह बोलती सर खेलती सज़ा के तौर पर हमारे बीच भेज दिया है। वह मारे दुलार के हमको 'शोकी' कहा करती थीं और वह भी ज़रा मुँह टेढ़ा करके जिसे वह अपने ख़याल में बड़ी खूबसूरती समझती हैं और आवाज़ में कोयल सी कूक पैदा करके ताकि हम बिल्कुल ही ख़त्म हो जायें। ठिगना सा क़द, फूले फूले से बनाये हुए बाल, मुँह पर रखी हुई नाक। बोटी बोटी थिरकती हुई, हर लिबास में एक सी नज़र आने वाली और फिर चेहरे पर सजावट का सारा सामान। विलायती सेन्ट में डूब कर जब वह क्लब के फ़लांग भर उसी तरफ़ होती थीं तो पता चल जाता कि मलिकए आलम की सवारी आ रही है।

कभी नन्हीं बनकर बातें कर रही हैं, कभी साहित्य में टाँग अड़ा रही हैं, कभी संगीत से नफ़रत पैदा करने की कोशिश हो रही है, कभी हँसी मज़ाक के चुटकुले सुना रही हैं। सारांश यह कि तरह-तरह के दाँव सिर्फ़ इसलिये चले जाते थे कि कभी तो हम पर असर होगा। मगर उनको कौन समझाता कि आपकी इन्हीं बातों से और तबियत बेज़ार होती चली जा रही है। दुनिया में शायद इससे बढ़कर और कोई ज़बरदस्ती नहीं हो सकती कि जिसको दिल न चाहे वह दिल में समाने की कोशिश करे। आख़िर एक दिन उनकी इन तमाम हरकतों से तंग आकर तय किये बैठे थे कि आज डा० शकीला से साफ़-साफ़ बातें हो जायेंगी। खेल हो रहा था कि एकाएक आपने फ़रमाया—

"शोकी! तुम में यह क्या बीमारी है कि खेल के वक्त गूंगे हो जाया करते हो।"

हमने बेपरवाही से कहा—"लेडी डाक्टर होने के यह मानी नहीं

कि सारी बीमारियाँ आपकी समझ में आ जायें। बहुत सी बीमारियाँ लाइलाज होती हैं।"

शकीला ने लज्जित होने के बजाय अपने नज़दीक हाज़िर जवाबी से काम लेते हुए कहा—"इलाज वाली हों या लाइलाज, मगर होती तो हैं वह बीमारियाँ ही।"

इखलाक़ ने बात काटकर कहा—"और चूँकि वह बीमारियाँ होती हैं इसलिये यह तय है उनके लिये डाक्टर की ज़रूरत यक़ीनन होनी चाहिये।"

रमेश ने सोचा कि मैं पीछे क्यों रह जाऊँ। पट से बोल उठा—"और डाक्टर की हैसियत से डा० शकीला का कोई सानी नहीं।"

शकीला ने ज़रा गम्भीरता से कहा—"नहीं, वाक़ई मैं यह देखती हूँ कि खेल शुरू हुआ नहीं कि आप इतने फ़िक्रमन्द बन कर बैठ जाते हैं जैसे कोई बहुत बड़ी मुल्की या क़ौमी पहेली बूझने में लगे हैं और इन्हीं ताश के पत्तों से मुल्क व क़ौम का फ़ैसला कराने वाले हैं।"

हमने जलकर कहा—"तो खैर, आपका मतलब क्या है? आप यह चाहती हैं कि देखने में तो मैं ताश खेलता रहूँ लेकिन दरअसल मेरा फ़र्ज़ यह होना चाहिये कि आपकी मुसाहिबी करता रहूँ।"

शकीला ने कहा—"मुसाहिबी का सवाल नहीं है, मगर ताश के इस खेल को इबादत का दर्जा तो न दो।"

हमने एक ग़लत पत्ता फेंकते ही अपनी ग़लती महसूस करते हुए कहा—"लाहौल विलाक़ूवत। यह होता है बात करने का नतीजा कि ग़लत पत्ता फेंक गया यानी बना बनाया सेट तोड़कर ग़ारत कर दिया।"

शकीला ने अपने पत्ते बढ़ाते हुए कहा—"इसमें से अपनी पसन्द का पत्ता ले लो।"

इखलाक़ ने एक दम से शो कर दिया—"लीजिये जनाब, मैं इस बहस का दरवाज़ा ही बन्द किये देता हूँ।"

हमने ताश के पत्ते मेज़ पर पटकते हुए कहा—"सारे खेल का नास हो गया। निल से मैं खुद शो करने वाला था, अब अठारह में फँसा हूँ।"

रमेश ने हँसकर कहा—"शुक्रिया मिस शकीला, यह कमबख्त लीडर बना हुआ था और अगर यह सचमुच शो कर देता तो सब ही खत्म थे। अब कम-से-कम थोड़ी देर तो खेल जारी रहेगा।"

शकीला ने कहा—"आप लोग इनको और ताव दिला रहे हैं। सचमुच मैंने बातों में लगा कर इनकी जीती बाज़ी हरा दी। शौकी, मुझे बहुत अफ़सोस है। मेरा मतलब तो यह था कि ताश की मेज़ पर क़ब्रस्तान का सन्नाटा तो न रहे।"

इख़लाक़ ने कहा—"लीजिये, वहाँ नाज़ बरदारियाँ शुरू हो गईं। अफ़सोस ज़ाहिर किया जा रहा है, माफ़ी माँगी जा रही है।"

रमेश ने कहा—"और कहा जा रहा है कि—

"हमको दुआएँ दो तुम्हें क़ातिल बना दिया।"

शकीला को भी हँसी आ गई और बाक़ी लोग भी हँस दिये। हमने इरादा किया कि अब यहाँ से खिसक जायें। चुनांचे इधर-उधर के बहाने करके वहाँ से टल गये। मगर अभी लान पर एक एकान्त कोने में पहुँचे थे कि शकीला की आवाज़ आई—"अब यहाँ अकेले में किस पर ग़ुस्सा करोगे। तुमको जितना ग़ुस्सा आ रहा हो वह सब निहायत शौक़ से मुझपर उतार दो। मगर खुदा के लिये लड़कियों की तरह यह रूठना तो छोड़ दो।"

हमने शिष्टतावश मुस्कराते हुए कहा—"ग़ुस्सा तो नहीं, हाँ ज़रा सुकून हासिल करने के लिये यहाँ चला आया था।"

शकीला ने क़रीब आकर कहा—"ताज्जुब है कि तुमको अकेले में सुकून हासिल होता है। मेरा तो दम उलट जाये। मैं दरअसल अपनी तनहाइयों से घबराकर महफ़िल में आई हूँ।"

हमने कहा—"इसकी वजह यह है कि आपका वास्ता पड़ा है तन-

हाई से इसलिये आपको महफ़िल की तलाश रहती है और यहाँ हर-वक्त महफ़िल और चहल-पहल से उकताकर तनहाइयों की तलाश रहती है।"

शकीला ने गर्दन को एक ख़ास ख़म देकर अपने लहजे में अपने नज़दीक ग़ज़ब का आकर्षण पैदा करते हुए कहा—"मगर मैं यह देखती हूँ शोकी कि तुम सिर्फ़ मुझसे कतराते हो और इस चहल-पहल से नहीं, बल्कि दरअसल मुझसे उकताकर तनहाई के कोने तलाश करते फिरते हो।"

हमने हैरान होकर कहा—"डाक्टर! मैं कई बार कह चुका हूँ कि तुम अपनी सितमज़रीफ़ी का निशाना आख़िर मुझ ग़रीब को क्यों बनाये हुए हो। तुमको मालूम है कि सारे दोस्तों को यह जीता-जागता मज़ाक़ हाथ आ गया है। इस सिलसिले में काफ़ी चर्चा हो रही है। अभी रमेश ने जो कुछ कहा उसका मतलब बयान करने की ज़रूरत नहीं। इन सारी बातों पर मुझसे ज़्यादा तुमको ख़याल करना चाहिये था।"

शकीला ने कहा—"मगर मैंने ख़याल नहीं किया। इसलिये कि इस चर्चा में कोई बात झूठ भी तो नहीं है। मैं बड़ी सच्चाई के साथ मानती हूँ कि मैं सचमुच तुमसे दिलचस्पी लेती हूँ और इसी ख़याल ने तुमको मेरी तरफ़ से इतनी एहतियात बरतना सिखा दिया है।"

हमने कहा—"यह तो ठीक है। मगर कम-से-कम मुझको मेरा क़सूर तो मालूम होना चाहिये।"

शकीला ने हैरत से कहा—"क्या मतलब? क़सूर कैसा?"

हमने कहा—"यानी वह कौन सा क़सूर है जिसकी सज़ा के तौर पर आप मुझसे दिलचस्पी ले रही हैं? मैंने यह पहेली पहले ख़ुद हल करने की कोशिश की, बार-बार आइना उठाया, पर कुछ समझ में न आया। अपनी आम तन्दुरुस्ती पर नज़र डाली पर किसी नतीजे पर

न पहुँचा। अपनी एक-एक अदा को परखा पर कुछ न मालूम हो सका।"

शकीला ने और क़रीब होते हुए कहा—"शौकी, तुम इतने भोले न बनो। इन बातों का जवाब न मैं दे सकती हूँ न मेरे जवाब से तुमको इत्मीनान हो सकता है। मगर यह बात तुम गिरह में बाँध लो कि अब तक तो खैर मैं पूरे धीरज से काम ले रही हूँ, मगर तुम्हारी यह बेपर-वाही कहीं मुझको सचमुच तमाशा बनाकर न रख दे।"

हमने कहा—"गोया अब सिर्फ़ मेरे लिये यह चारा रह गया है कि मैं क्लब की मेम्बरी छोड़कर गोशानशीन (एकान्तवासी) हो जाऊँ ताकि मैं इस मुस्तक़िल उलझन से और आप इस लगातार सितम-ज़रीफ़ी से बाज़ तो रह सकें।"

शकीला ने जैसे अपने चेहरे पर पूरी निराशा और वेदना बरसा कर कहा—"मैं तुमसे कुछ नहीं कहती और अगर तुम मेरी वजह से क्लब को छोड़ने का इरादा कर रहे हो तो कल से तुम मुझको क्लब में न देखोगे। मगर याद रखना शौकी, अगर मैं सच्ची हूँ आज के बाद से तुम्हारे दिल को भी इत्मीनान न हासिल होगा।"

यह कहकर शकीला ने अपनी गर्दन झुका ली। शायद यह मत-लब होगा कि हम उनकी बातों से प्रभावित होकर नाटकीय ढंग से पहले चुप रहें फिर पागलों की तरह आगे बढ़ें, घुटनों के बल बैठकर उनका दामन थाम लें और हार मानकर कह दें कि सुन्दरता की देवी! तूने अपने मन की मुराद पाई, तेरे क़दमों है तेरा सौदाई। इस नाटकीय कल्पना के आते ही हमको हँसी आ गई। शकीला ने पहले तो भौंचक्की होकर हमारी हँसी को देखा फिर उसको इस हरकत पर सचमुच ग़ुस्सा आ गया। उसको क्या पता था कि हम क्यों हँसे हैं। वह तो यही समझी कि उसकी भावनाओं का निहायत बदतमीज़ी से मज़ाक़ उड़ाया जा रहा है। अब ज़ाहिर है कि उसको अपने स्वाभिमान को गहरी नींद से जगाना ही पड़ा और एकाएक उसने आँखों-में-आँखें डालकर काँपती

हुई आवाज़ के साथ कहा—"तुम वहशी दरिन्दे हो। यह मेरी ग़लती थी कि मैंने इस पत्थर से सर फोड़ा।"

उसकी आँखों में दो बूँदें काँप रही थीं। उसका सारा जिस्म भी काँप रहा था और वह बिफरी हुई शेरनी की तरह पेच-ताव खा रही थी। हमने घबरा कर कहा—"डाक्टर साहबा! माफ़ कीजियेगा, आप ज़्यादा बेतकल्लुफी फ़रमा रही हैं।"

शकीला ने सारे जिस्म से काँपते हुए एक हल्की-सी चीख़ के साथ कहा—"शेट अप।" और बिजली की तरह कौंद कर पैर पटकती हुई वहाँ से चलदी।

शकीला अभी थोड़ी-ही दूर गई होगी कि पेड़ों की ओट से एक-एक करके सारे दोस्त हमारे सामने आ गये। मगर न किसी के चेहरे पर हँसी थी और न कोई शरारत की अलामत।

इख़लाक़ ने आते ही कहा—"यह आख़िर आपकी क्या हरकत थी?"

रमेश ने जैसे शकीला की ओर से बुरा मानकर कहा—"आप इन्सानियत के साथ भी उसको समझा सकते थे बजाय इसके कि इस तरह उसकी तौहीन करते।"

फ़ैयाज़ ने कहा—"पता नहीं आपको किस दिन महसूस होगा कि आपकी उम्र अब इस ग़ैर संजीदगी और ग़ैर ज़िम्मेदारी की नहीं है। पता नहीं यह बचपन आपका कब तक बाक़ी रहेगा।"

हमने इस चौतरफ़ा हमले से घबराकर कहा—"भई! मेरी भी सुनोगे या बस मुझको ही बुरा-भला कहे जाओगे।"

इख़लाक़ ने निर्णयात्मक लहजे में कहा—"हमलोग सब सुन चुके हैं और तुम्हारे इस भद्दे बर्ताव पर इसलिये शर्मिन्दा हैं कि तुम हममें से एक हो। तुमको चाहिये कि शकीला से माफ़ी माँगो और जितना उसका दिल दुखाया है उसकी तलाफ़ी (पूर्ति) करो। इसके बाद अगर

तुम उसको लिफ़्ट नहीं देना चाहते तो उसकी हज़ार खूबसूरत तरकीबें हैं।"

६

अगर नई रोशनी के पढ़े-लिखे इन्सान की हैसियत से ग़ौर कीजिये तो क्लब जाना और वहाँ आधी-आधी रात तक ताश खेलना और वह भी रुपये की हार-जीत के साथ कोई ख़ास जुर्म नहीं है बल्कि नई रोशनी ने तो इससे भी ज़्यादा रिआयतें दे रखी हैं। मसलन शराब तक में कोई हर्ज नहीं है, मगर यहाँ ग़ौर करना है बेगम साहबा के दृष्टिकोण से जो हमारे क्लब और वहाँ की सारी बातों से बेख़बर थीं और हम लगातार चोरियाँ कर रहे थे। यह शायद हम पहले भी कह चुके हैं, मगर बार-बार कहने को जी चाहता है कि चोर आदमी खुद नहीं बनता बल्कि बना दिया जाता है। अगर एक आदमी को उसकी ज़रूरत की चीज़ें खुल्लमखुल्ला दिन दहाड़े बिना किसी रोक-टोक के हासिल होती रहें तो उसको कभी भी चोर बनने की ज़रूरत नहीं हो सकती। चोर तो वह मजबूरी की हालत में बनता है। अगर बेगम की तरफ़ से हमको यक़ीन होता कि वह क्लब की मेम्बरी और इस जुएबाज़ी को बुरा न समझेंगी और हमारी दिलचस्पियों में बराबर की शरीक रह सकेंगी तो हमको कुत्ते ने नहीं काटा था कि महज़ तफ़रीह के लिये चोर बन कर रहते। हम जानते थे कि उनकी तबियत कैसी है। वह चाहती थीं कि हम वक़्त की पाबन्दी से दफ़्तर जायें और दफ़्तर से वापसी पर बस

उनकी अर्दली में रहें। हमारी दिलचस्पी के बहुत से सामान वह बेचारी खुद जुटाती रहती थीं। जैसे कैरम बोर्ड मँगा लिया था, शतरंज थी, बैडमेन्टन था। गोया उनके नज़दीक हम ये गुड़ियाँ उनके साथ खेल कर संतुष्ट रह सकते थे और एक इन्सान के लिये बस इतनी ही दिलचस्पियाँ काफ़ी हो सकती थीं। अब उनको कौन समझाता कि शेर कभी घास नहीं खाता। एकाध बार अपने एक दो रिश्तेदारों का ज़िक्र कर के कानों पर हाथ रख चुकी थीं कि—"तौबा है, अज़ीम भाई तो पैसे लगा कर ताश खेलते हैं और मुझे जुआरियों से ऐसी नफ़रत है कि वह अपने भाई फूटी आँख नहीं भाते।"

हमने भोलेपन से कहा—"और अगर मैं दाँव लगा कर ताश खेलने लगूँ तो?"

मुहब्बत से मुँह चिढ़ाकर फ़रमाया—"खुदा न करे। मगर आप नहीं खेल सकते। एक तो इतनी फ़ुरसत ही नहीं, दूसरे अल्लाह न करे, आप कोई जुआड़ी हैं।"

अब बताइये कि अपने शौहर को इतना पारसा समझने वाली बीवी से चोरी न की जाये तो क्या किया जाये। फ़ैयाज़ का उसूल दूसरा था। अव्वल तो वह बीवी को इसका हक़दार ही न समझता कि वह यह पूछ-ताछ कर सके। दूसरे उसका दृष्टिकोण कुछ और था। वह हमेशा यह कहा करता था कि जब कोई जुर्म करना हो उससे बड़े जुर्म की खबर बीवी को पहुँचाओ ताकि वह तुमको बहुत ही बड़ा मुजरिम समझ ले और फिर धीरे-धीरे उसको यह खबर हो सके कि नहीं यह ग़लत है। यानी ये खूनी नहीं हैं सिर्फ़ डाकू हैं। ज़ाहिर है कि वह क़ातिल के मुक़ाबिले में डाकू होना पसन्द करके खुदा का शुक्र अदा करेंगी कि उनका मियाँ महज़ डाकू निकला और अल्लाह का लाख-लाख शुक्र है कि क़ातिल नहीं है। इसलिये इसी दृष्टिकोण के अन्तर्गत वह अपनी आज़माई हुई तरकीब यह समझाया करता था कि "मियाँ मुझको ही देखो। शुरू-शुरू में मेरी घर वाली भी मेरे इन शौक़ों के बहुत खिलाफ़ थी। बड़े हाथ-

पैर मारे, भूख हड़ताल की, मुँह फुलाया, ठंडी साँसें भरीं, नींद हड़ताल की, आँसू बहाये फिर इस अहिन्सा के बाद हिन्सा की कार्रवाइयाँ शुरू कर दीं। यानी मायके जाने की धमकियाँ दीं, बात-बात पर लड़ने की कोशिश की। लेकिन आख़िरकार हमको एक तरकीब सूझ गई। दर असल उनको फ़िक्र यह थी कि रात को एक-एक दो-दो बजे तक ग़ायब कहाँ रहते हैं। हमने कई बार समझाया कि क्लब जाते हैं, ताश खेलते हैं इससे ज़्यादा और कुछ नहीं करते, मगर वह इसी मासूम मशग़ले के ख़िलाफ़ थीं। आख़िर अपने एक दोस्त की मदद से उनको यह ख़बर पहुँचा दी गई कि न ताश हैं न क्लब बल्कि वहाँ तो और ही खेल खेला जा रहा है, एक दूसरा घर बसाया जा रहा है।

"बेगम साहबा के हाथों के तोते ही तो उड़ गये कि यह क्या ग़ज़ब हो रहा है। अब जो हम घर पर आये हैं तो नक्शा ही कुछ और था। शेरनी की जगह लोमड़ी बल्कि भीगी बिल्ली नज़र आई। हमेशा घर इस तरह पहुँचते थे कि घर में क़दम रखा और बेगम ताक में बैठी रहती थीं कि आज तो आने दो। चुनांचे हर रोज़ एक नई क़िस्म की झाड़ पड़ती थी। दो घन्टे तक वह ठाठदार लेक्चर होता था कि ज़िन्दगी से तंग आ जाते थे। फिर उस लेक्चर में आँसू भी होते थे, अपने को कोसा भी जाता था, हमारी आगे की ज़िन्दगी की बहुत ही भयानक तस्वीर खींची जाती थी, ग़ैरत दिलाई जाती थी, मुख़्तसर यह कि दिमाग़ की चर्ख़ी बनाकर रख दिया जाता था और हमको रोज़ यही लोरियाँ सुनकर सोना पड़ता था। मगर हम भी धुन के पक्के थे। रोज़ दो बजे रात को घर पहुँचना हमारा क़ायदा था और उधर रोज़ फ़ौजदारी के अन्दाज़ में शिकायतें और नसीहतें!

"शुरू-शुरू में उनको समझाया कि देखो यह बड़े गँवारपन की बात है कि रात को देर में घर पहुँचने पर शौहर को टोका जाय। इससे काम न चला तो एकाध बार ख़ुशामद की, पर जब इससे उनकी आदत ख़राब होने का डर पैदा हुआ तो चुप हो रहा कि भूँकने वाले

भूँका करते हैं मगर चाँद बराबर दो बजे रात को निकलता है। जब ख़ामोशी से जो घबराया तो यह तय किया कि जिस वक्त वह डाँटा करें उस वक्त हम गाया करें। चुनांचे उधर उन्होंने डाँटा और इधर हमने गाना शुरू कर दिया। जैसे-जैसे उनकी आवाज़ तेज़ होती गई हम पंचम तक पहुँचते गये ताकि हर हालत में उनकी आवाज़ हमारी तानों से दबी रहे। मगर यह तरकीब भी ज़्यादा चलने वाली न थी। आख़िर सोचते-सोचते ज़हर का इलाज ज़हर से करने वाली तरकीब समझ में आई कि जिस बात से वह नाराज़ हैं उसी बात से खुश हो जायें।"

फ़ैयाज़ के इस लम्बे लेक्चर से तंग आकर आख़िर हमने एक दिन पूछ ही लिया—"तुम हमेशा ज़हर का इलाज ज़हर से करने की रट लगाये रहते हो, मगर मेरी समझ में तो आता नहीं कि इसकी क्या सूरत हो सकती है?"

फ़ैयाज़ ने एक तजरबेकार डाक्टर की तरह फिर लेक्चर शुरू कर दिया—"फिर वही बच्चों की सी बातें। सुनो, मैंने इस सिलसिले में बड़ा रियाज़ किया है। धूप में ये बाल सफ़ेद नहीं हुए जो देखने में काले नज़र आ रहे हैं। उम्र गुज़ारी है इसी फ़न को हासिल करने में। इसी तरीक़े को बिल्कुल यह समझो कि जैसे कि आदमी पर एक-दम लक़वे का हमला होता है, ज़िन्दगी की कोई उम्मीद बाक़ी नहीं रहती, डाक्टर जवाब दे देते हैं, रिश्तेदार रो-पीट कर सब्र कर लेते हैं। दवा छोड़कर दुआ शुरू कर दी जाती है कि एकाएक रोगी की हालत सँभलने लगती है और आख़िर वह मौत के मुँह से निकल कर ज़िन्दगी की तरफ़ लौट आता है। हरचन्द कि वह लक़वे की वजह से हाथ पैर से बेकार है, ज़िन्दा रह कर भी मुर्दों से बदतर है, मगर उसके सगे सम्बंधी खुशियाँ मनाते हैं। खुदा की क़सम यह रिश्ते-दार हरगिज़ इसके लिये तैयार न होते कि उस आदमी की लक़वे से यह हालत हो जाये। मगर जब लक़वे के बाद उनको मौत का नक्शा दिखाया गया तो लक़वा भी उन्हें अल्लाह की रहमत नज़र आने लगा

और वह मौत के मुक़ाबिले में उसकी लकवामारी ज़िन्दगी को अपनी दुआओं का नतीजा समझने लगे। चुनांचे बिल्कुल उसी तरह एक बीवी अपने शौहर के छोटे ऐबों को उसी वक्त माफ़ कर सकती है जब उसका होनहार शौहर कुछ बड़े ऐब उसके सामने पेश करे।"

हमने फिर अपनी ज़िन्दगी से तंग आकर कहा—"वह तो मैं समझ गया। मगर फिर तुमने क्या किया?"

फ़ैयाज़ ने कहा—"कह तो चुका हूँ कि मेरे चन्द दोस्तों ने उनको यह खबर पहुँचा दी कि मैं जुएबाज़ी में नहीं बल्कि दरअसल इश्क़बाज़ी में फँसा हूँ। बस उनकी तबियत ठिकाने लग गई। सारी मुँहज़ोरियाँ खत्म होकर रह गईं। जंग का नक्शा ही बदल गया। पहले चंगेज़ खाँ वाला उसूल बरता जा रहा था और अब महात्मा गांधी वाली पालिसी पर अमल शुरू हुआ। यानी पहले तो मौन व्रत रखा, फिर एक हफ़्ते वाला व्रत जिसमें सिर्फ़ पानी पिया जाता था या कभी चाय। हम को यह सब मालूम था, मगर इसी क़िस्म के मौक़े पर ज़रा मुस्तक़िल मिज़ाजी से काम लेकर सब जानते-बूझते हुए भी अनजान बनता रहे। चुनांचे हम भी गोया इस सत्याग्रह से बेखबर रहे। आखिर उनके सर पर रुमाल बँधा देखा, क़दम डगमगाये, ममता फड़-फड़ाई मगर दिल को सँभाला कि बना बनाया खेल बिगड़ कर रह जायेगा और अपने प्रोग्राम पर सख्ती से अमल करते रहे यानी रोज़ाना दो बजे रात को वापस आना। आखिर कहाँ तक सब्र से काम लेतीं। एक दिन गले में बाँहें डालकर रो ही तो दीं कि तुम मेरा क़सूर बता दो। आख़िर मैंने कौन सी ख़ता की है जिसकी इतनी बड़ी सज़ा तुम मुझको दे रहे हो। पहले तो हमने हैरत ज़ाहिर की कि आख़िर माजरा क्या है? कैसी ख़ता और कैसी सज़ा? मगर जब उन्होंने बताया कि देखिये मुझे सब कुछ मालूम है और मैं जानती हूँ कि आपने अब तक मुझसे इसलिये छिपाया है कि मुझे तकलीफ़ होगी। मगर अब जो तकलीफ़ होनी थी हो चुकी। अगर आप शादी कर चुके हैं तो उनको इसी

मकान में ले आइये और अगर अब तक नहीं की और यह तय है कि आप शादी करने वाले हैं तो मुझको एक अदना लौंडी समझकर इस राज़ में शरीक कर लीजिये। मैं खुद आपकी दुल्हन को लाऊँगी और जितनी भी ख़िदमत हो सकेगी, करूँगी। मैं तुमसे सच कहता हूँ कि उनकी इन बातों के बाद सारी स्कीम ख़तम होकर रह गई। हम लाख चालाक और बदमाश सही, मगर उस वक्त हमारी आँखें भी भर आईं और उस नेक औरत जन्नती औरत को सचमुच गले से लगाकर निहायत प्यार से कहा—"नाज़ो, तुम्हें क्या ग़लतफ़हमी होगई है। तुम्हारी क़सम, न इस क़िस्से में कोई असलियत है न मेरे आस-पास शादी या इश्क़ या इस तरह का कोई और सवाल है। क्लब में देर हो जाती है जिसके तुम न जाने क्या-क्या मतलब लगाती रहती हो। मगर अब यह तमाशा देखिये कि इस सफ़ाई पर उन्हें और भी शक बढ़ गया कि इतना प्यार जताने के बावजूद गोया हम ऐसे सख़्त क़िस्म के जरायमपेशा और साथ-ही-साथ संगदिल भी हैं कि अब तक उनसे यह राज़ छिपाने की कोशिश कर रहे हैं। नतीजा यह कि जितना-जितना समझाया उतनी ही वह नासमझ होती गईं। हालाँकि इससे पहले वह ख़तरनाक हद तक समझदार थीं। बहरहाल उस दिन के बाद से वह बराबर यह कोशिश करती रहीं कि किसी तरह हम अपने जुर्म का एक़बाल करलें। मगर यहाँ जुर्म हो तो एक़बाल भी किया जाये। आख़िर उनकी तरफ़ से हमारे पीछे ख़ुफ़िया पुलिस की क़िस्म के लोग लगाये गये। वह खुद इस खोज में अर्से तक लगी रहीं मगर न उनको हमारी मँगेतर का ही पता चला और न हम किसी ऐसी जगह जाते हुए पाये गये जहाँ जाना उनके नज़दीक हमको मुजरिम ठहरा सकता। हद यह है कि एक दिन तो बाक़ायदा पीछा किया गया। आगे-आगे हमारी फ़िटन और पीछे-पीछे एक पर्देदार ताँगा। हम समझ चुके थे कि यह ताँगा किसका है और इस महमिल में कौन-सी लैला है। मगर दिखाने को बिल्कुल अनजान बने रहे। फ़िटन को हमने न जाने कहाँ-कहाँ का चक्कर दिया

ताकि वह ज़रा खुश होती रहें कि आज पकड़ लिया। मगर आख़िर में जब फ़िटन क्लब के फाटक पर जाकर ठहरी तो टाँगा निहायत मायूसी के साथ वापस हो गया। इसी तरह कई बार हमारा पीछा किया गया। मगर आख़िरी बार यह राज़ इस तरह खुला कि रात को जब दो बजे हम क्लब से निकले तो फाटक से ज़रा दूर एक टाँगा मौजूद था। उस दिन हमको खुद भी शक हुआ कि यह टाँगा किसका है। हम फ़िटन पर बैठकर घर की तरफ़ रवाना हो गये। और जब हम घर में दाख़िल हो रहे थे तो साथ-ही-साथ बेगम साहबा भी दाख़िल हुईं। आज उनके चेहरे पर मुस्कराहट थी, ताज़गी भी थी और मालूम यह होता था कि जैसे चेहरे पर किसी ने आतश बाज़ी छोड़ दी हो। फुलझड़ियाँ छूट रही थीं। हमने हैरत से पूछा—"यह आप इस वक्त कहाँ से तशरीफ़ ला रही हैं ?"

एक सोफ़े पर बेपरवाही से गिरकर कहा—"ज़रा क्लब गई थी, ताश खेलने।"

हमने और भी ताज्जुब से कहा—"क्लब, ताश ? नहीं, सच बताइये आप कहाँ गई थीं ?"

उसी इत्मीनान से बोलीं—"हाँ-हाँ, क्लब गई थी, चोर पकड़ने।"

अब हम समझे—"अच्छा-अच्छा, तो पकड़ा आपने चोर ?"

ज़रा अफ़सोस की अदाकारी करते हुए बोलीं—"जी हाँ पकड़ा तो, मगर वह बड़ा शातिर था, साहूकार निकल गया।"

हमने कहा—"यानी क्या मतलब ?"

अब ज़रा ऐक्टिंग खत्म हो रही थी—"अच्छा खैर, फिर बातें होंगी। कपड़े उतार लीजिये। सच कहती हूँ, एक हफ्ते से थका मारा। आज इत्तफ़ाक़ से टाँगे वाले ने वापसी में देर कर दी, वरना मैं तो रोज़ आपके साथ ही क्लब से वापस आती हूँ।"

मालूम यह हुआ कि खुद बेगम साहबा रोज़ रात को क्लब के दरवाज़े पर जाकर ठहर जाती थीं और दो बजे तक बराबर कमरे में

झाँक-झाँक कर देखा जाता था कि क्या हो रहा है। इसके बाद वापसी पर साथ-ही-साथ वापस आती थीं और कुछ पहले पहुँच कर इस तरह लेट जाती थीं जैसे सो रही हैं। उस रात जब यह राज़ हम पर खुल गया तो वह भी खुल गईं कि मैंने इस तरह यह सुना और मुझे यह यक़ीन दिलाया गया था कि आप क्लब हरगिज़ नहीं जाते बल्कि इस तरफ़ तो क्लब से हमेशा ही ग़ैर हाज़िर रहे हैं और कोई भाटिया साहब हैं, उनकी लड़की से शादी तय हो चुकी है। इसी चक्कर में जनाब फँसे हुए हैं इसलिये मैंने तफ़तीश की तो पता चला कि आप पर ये सारे इलज़ाम झूठे थे। इस सिलसिले में यह भी हुआ कि बेगम साहबा मिस्टर भाटिया तक के यहाँ पहुँचीं और वहाँ भी हर तरह छान-बीन की। उनकी लड़की से बिला वजह जलीं। वह तो कहिये कि वहाँ यह नहीं कहा कि तुम्हारे साथ मेरे मियाँ की शादी होने वाली है, नहीं तो और भी लेने के देने पड़ जाते। तो भाई, मैं यह कह रहा था कि जिस दिन से इस तरफ़ से बेगम साहबा को इत्मीनान हुआ है, वह क्लब की हाज़िरी और ताश के खेल को दिल से पसन्द करती हैं, बल्कि अब तो अगर क्लब न जाना हो कभी तो पूछा करती हैं कि कैसी तबियत है। या अगर किसी दिन दो बजे से पहले यानी ग्यारह बजे रात को घर आगये तो उनका दिल धक्क से रह जाता है कि इलाही ख़ैर, न जाने इनको क्या होगया कि सरे शाम घर आगये हैं?"

हमने मुस्करा कर कहा—"ग्यारह बजे सरे शाम?"

फ़ैयाज़ ने कहा—"जी और क्या। बारह बजे तक हमारे यहाँ चिराग़ जलने का वक्त समझा जाता है, इस लिये कि रात दो बजे से शुरू होती है। तो जनाब, आपने देख लिया कि एक बड़ा जुर्म जब उनके सामने आया तो ये छोटे-छोटे जुर्म हुनर बन गये। वह दिन और आज का दिन कि बेगम साहबा ने कभी क्लब जाने या ताश खेलने की मुख़ालिफ़त नहीं की।"



७

रुपये का इन्तज़ाम तो गोया हो ही चुका था। अल्लाह खुश रखे बीवी को, बैंक से रुपया निकलवा कर दे दिया था और हम बराबर क्लब में रईस बने हुए थे। संयोग से उन दिनों राजा नल भी मेहरबान रहे। खूब-खूब जीते। क्लब के अक्सर मेम्बर हमारे ही कारण दिवालिया हो गये। अगर चाहते बीवी का रुपया वापस कर देते। मगर बुरे वक्त के लिये कुछ-न-कुछ जमा रहना चाहिये। क्लब के हारे हुए मेम्बरों पर इतना रुपया उधार चढ़ चुका था कि खेल के वक्त हमको अपने 'रिज़र्व फंड' को छूने की ज़रूरत ही न पड़ती थी। यह सब कुछ था मगर वह जो एक चीज़ है न दिल का चोर होना, उस कमबख्त की बदौलत दिल को इत्मीनान नहीं था। कभी यह सोचते कि आख़िर इसका अंजाम क्या होगा। मगर शैतान फ़ौरन जवाब देता कि यह दूरअंदेशी बुढ़ापे की निशानी है। कभी शराफ़त का दौरा पड़ता तो देर तक बीवी के भोलेपन पर ग़ौर किया करते। मगर फिर शैतान समझाता कि देखो मियाँ, यही सोच-विचार तुमको तबाह कर देगा। याद रखो, बीवी कभी मासूम नहीं होती। वह खुद अपना क़िस्सा सुनाता कि मेरी आँखों ने आदम और हौवा को देखा है। हौवा ने ही आदम को जन्नत से निकलवाया था। अब तुम बीवी के कारण अपनी दिलचस्पियाँ छोड़ना चाहते हो। अव्वल तो यह

दिलचस्पियाँ अगर तुमने छोड़ दीं तो इसका कोई बहुत अच्छा असर तुम्हारी बीवी पर नहीं पड़ सकता, जब तक कि तुम बता न दो कि मैं तुमसे चोरी करता रहा हूँ और इस तरह क्लब में रंगरलियाँ होती रही हैं। इस-इस तरह तुमसे रुपया हासिल करके इस-इस तरह गँवाया है। और अगर तुमने यह बता दिया तो याद रखो कि एक बार अपना एतबार खोकर फिर कभी क़ायम न कर सकोगे। इसलिये इस कारख़ाने को तो बस योंही चलने दो। दुनिया इसी का नाम है। मगर अब सचमुच यह सवाल था कि हमारा तो यह रोज़ का काम बन चुका था कि रोज़ाना डेढ़-दो बजे रात को घर लौटना, नित्य नये झूठ बोलना, दूसरे दिन के लिये झूठे वायदे करना, मुँह लपेट कर पड़ा रहना। जाहिर है कि कोई भी बीवी इस हालत को बरदाश्त नहीं कर सकती। फ़ैयाज़ से सलाह ली तो उसने अपनी राम कहानी सुना डाली। मगर एक बात थी कि फ़ैयाज़ की दलीलें थीं मज़बूत और दिल में उतरने वाली। फिर यह कि हमारे लिये तो इसका बेहतरीन मौका था। यानी शकीला मौजूद ही थीं। एक फ़र्ज़ी प्रेमिका ढूँढने की भी ज़रूरत न थी। बार-बार इस तरकीब पर अमल करने की कोशिश की मगर हर दफ़ा हिचकिचा कर रह गये। आख़िर एक दिन अपने उस्ताद फ़ैयाज़ से सलाह ली। हमने पूछा—"अरे भई ख़ुदा के लिये मुझे यह बताओ कि यह रोज़-रोज़ की बहाने-बाजियाँ और ये सदा बहार झूठ कब तक चलेंगे?"

फ़ैयाज़ ने बुज़ुर्गों की तरह कहा—"जब तक सच बोलने की हिम्मत न पैदा करो और बीवी से साफ़-साफ़ यह न कह दो कि मैं क्लब जाता हूँ और ताश खेलता हूँ।"

"यह तो क़ियामत तक नहीं हो सकता।"

फ़ैयाज़ ने यह सुनकर अजीब-सा सवाल किया—"क्यों? मार डालेंगी तुमको? ज़िबह कर देंगी? आख़िर करेंगी क्या? उनसे आप आख़िर यह क्यों नहीं कह सकते कि तुमको मेरी इन दिलचस्पियों

पर एतराज़ करने का कोई हक़ नहीं है। खास कर ऐसी हालत में जब कि सोसाइटी ने इन सब तफ़रीहों और दिलचस्पियों को नाजायज़ भी नहीं ठहराया है। न तुम दरअसल कोई बदमाशी करते हो, न चोर हो, न उठाईगीरे। दिल बहलाने को ज़रा ताश खेल लेते हो, यही न। फिर इसको आप इतना बड़ा जुर्म क्यों समझ रहे हैं कि दम ही निकला जाता है।"

हमने बिल्कुल सच बोलते हुए कहा—"भाई, तुम समझते नहीं हो, न जाने क्यों मेरा दम निकलता है बीवी से। क़िस्सा दरअसल यह है कि वह मुझ पर अपना रोब बैठाल चुकी हैं। उनकी दहशत छा चुकी है। अब उनके सामने हिम्मत का सवाल ही पैदा नहीं होता। इस क़िस्म की सिपाहियाना तरकीबें न बताओ। बल्कि तुम तो ठहरे छुटे हुए चार सौ बीस। कोई ऐसी तरकीब बताओ जिसको तिकड़म कहते हों, जिसमें हल्दी और फिटकरी वग़ैरा कुछ नहीं लगती और रंग चोखा आया करता है। आख़िर तुमने खुद अपने लिये कैसी अच्छी तरकीब निकाल ली थी।"

फ़ैयाज़ ने फड़क कर कहा—"हाँ तो फिर वैसी ही तरकीब करो। मगर यह ज़रा यूनानी इलाज के ढंग की है जिस में दो बातों का खास तौर पर ख़याल रखना होता है। यानी मुस्तक़िल मिज़ाजी और परहेज़। मुस्तक़िल मिज़ाजी तो यह होनी चाहिये कि चाहे कितनी ही देर लगे, मगर नतीजे की तरफ़ से मायूस न होना, और परहेज़ यह कि फिर चाहे बीवी कैसी ही मिस्कीन नज़र आये, उस पर कैसा ही प्यार क्यों न आये मगर उस पर यह राज़ कभी ज़ाहिर न करना जब तक कि वह खुद इस राज़ को न खोल दें या यह राज़ खुदबखुद उस पर न खुल जाये।"

हमने कहा—"जनाब हकीम साहब, मैं इस यूनानी इलाज के लिये तैयार हूँ, इस लिये कि अब इस चोरी की ज़िन्दगी से तंग आ चुका हूँ।"

फ़ैयाज़ ने सचमुच हकीम बनते हुए कहा—"फिर वही चोरी की ज़िन्दगी। यार बात यह है कि तुम कुछ निजी तौर पर भी घामड़ हो। तुम्हारे लिये तो ज़रूरत इसकी है कि पहले तुम्हारे ज़मीर को मारा जाये इसके बाद तुम इलाज के क़ाबिल हो सकते हो। तुमको दरअसल शराफ़त की दिक़ हो गई है। यह मरज़ इलाज के काबिल भी है बशर्ते कि तुम लुक़मान को हिकमत पढ़ाने की कभी कोशिश न करो और सच्चे दिल से वायदा करो कि मेरे इलाज के तरीक़े में कभी अपनी टाँग अड़ाने की कोशिश न करोगे।"

हमने वायदा करते हुए कहा—"मैं वायदा करता हूँ कि कभी दखल न दूँगा।"

फ़ैयाज ने सँभल कर बैठते हुए कहा—"अच्छा तो अब कल ही से आपका इलाज शुरू हो जायेगा। इस सिलसिले में मुझे नाज़ों से भी मदद लेनी पड़ेगी। कल तुम्हारी बेगम साहबा को चाय पर मेरे यहाँ बुलाया जायेगा और वहीं उनको दवा की पहली खुराक पिलाई जायेगी। हाँ यह भी याद रखिये कि इलाज होगा आपका मगर दवा पीनी पड़ेगी भाभी जान को। आपको शायद मालूम नहीं कि बीमारी दूर करने के लिये कड़ुवी दवा हकीमों के नज़दीक अक्सर ज़रूरी हुआ करती है। चुनांचे इस दवा की सारी कड़ुवाहट तो वह महसूस करेंगी और फ़ायदा होगा आपका। इलाज के इस नये तरीके का नाम है—"दुख सहें बी फ़ाख़्ता और कौवे अंडे खायें।"

हमने तंग आकर कहा—"ख़ुदा के लिये ख़ुराफ़ात बन्द करो और यह बताओ कि आख़िर उनसे कहा क्या जायेगा?"

फ़ैयाज़ ने आँखें निकाल कर कहा—"ख़ुराफ़ात? यानी ये हकीमाना बातें ख़ुराफ़ात? ऊँ हूँ! तुम्हारा इलाज नहीं हो सकता तुम सख़्त बदएतक़ाद क़िस्म के मरीज़ मालूम होते हो।"

हमने कहा—"अच्छा साहब माफ़ कर दीजिये और कम-से-कम यह तो बता दीजिये कि आख़िर उनसे कहा क्या जायेगा?"

फ़ैयाज़ ने कहा—"उनसे जो कुछ कहा जायेगा वह तुम खुद सुन लेना। उनको ऐसे कमरे में बिठाया जायेगा कि साथ वाले कमरे में बैठकर तुम सब कुछ सुन सकोगे। मगर तुमको अपना दिल सख्त करना पड़ेगा। मुमकिन है कि तुम सुन न सको या जो कुछ तुम्हारी वह सुनें उसके बाद उनका जो हाल हो, वह तुमसे बरदाश्त न हो सके। इन तमाम बातों की तरफ़ से इत्मीनान कर लो। हम लोग इसी लिये कमज़ोर दिल के लोगों को आप्रेशन थियेटर में आने की इजाज़त नहीं देते।"

अब हमने बेहद खुशामद करते हुए कहा—"भाई, मैं सब कुछ बरदाश्त कर लूँगा, मगर मुझे तैयार रखने के लिये पहले से बता दो कि उनसे क्या कहा जायेगा?"

फ़ैयाज़ ने सोचते हुए कहा—"उनको शकीला का क़िस्सा बता देना बहुत काफ़ी है।"

हमने एक दम उछल कर कहा—"ओ कमबख्त! तू खुदा की क़सम बेहद ज़हीन है। मेरे दिमाग़ में भी यही बात थी कि मैं तुमको खुद यही मशविरा दूँगा। मगर....।"

"मगर लुक़मान को तुमसे सबक़ लेने की ज़रूरत न पड़ी। अरे भई मैं खुद हैरान हूँ कि क़ुदरत ने मुझ नाचीज़ में यह क़ाबिलियत कैसे पैदा कर दी! वह जिसको जो चाहे जो दे। हाँ तो उनको यह बता दिया जायेगा कि शकीला से इश्क़ छन रहा है। और जल्द ही शादी होने वाली है। मंगनी के मौक़े पर तीन सौ रुपये की अँगूठी दी गई है।"

हमने कहा—"अरे रे रे। बिल्कुल चिपक कर रह जायेगी। खट से दिमाग़ में बैठेगी इसलिये कि हाल ही में एक हज़ार के वारे न्यारे कर चुका हूँ। खुद उनके नाम से बैंक में जमा था और उनसे ही निकलवाया है।"

फ़ैयाज़ ने बड़ी गम्भीरता से देर तक गर्दन हिलाते हुए कहा—

"जी जी, वह मुझे पहले से ही अन्दाज़ा था। मैं आप लोगों को सूँघ कर बता सकता हूँ कि आज कल कैसी गुज़र रही है। इसीलिये मैंने यह तरकीब निकाली। हाँ तो फिर मेरी बीवी तुम्हारी बेगम को बतायेंगी कि जैसे तुमने अपने इश्क़ के जोश में मुझसे सब कुछ कहा था और मैंने अपनी बीवी से कह कर ताक़ीद कर दी है कि इसकी ख़बर किसी को न हो। फिर शकीला की सूरत शक्ल बयान की जायेगी, शकीला के साथ तुम्हारी ख़त व किताबत, शकीला के साथ तुम्हारा इलाहाबाद जाना।"

हमने चौंककर कहा—"ओह, ज़ालिम, तुझको मेरा इलाहाबाद जाना भी इसी वक़्त के लिये याद रह गया था?"

फ़ैयाज़ ने कहा—"भाई साहब, कहानी की कड़ियाँ मिलाने के लिये इस तरह की छोटी-छोटी बातों को अपने दिमाग़ में रखता हूँ कि ख़ुदा जाने कब किस बात की ज़रूरत पड़ जाये। तो ख़ैर, मैं यह अर्ज़ कर रहा था कि इस तरह की बहुत सी बातें उनको बताकर फिर यह भी ज़ोर दिया जायेगा कि वह तुम पर ज़ाहिर न करें। इसके बाद यह राय दी जायेगी कि अब क़िस्मत पर भरोसा करो, कलेजे पर पत्थर रख लो, जो कुछ गुज़रे सब्र व सकून के साथ बरदाश्त करो वग़ैरह। यह सारे मशविरे ऐसे होंगे कि शायद वह उसी वक्त से उसके ख़िलाफ़ अमल करना शुरू कर दें। रोना तो ख़ैर ज़रूरी है। हो सकता है कि वह मेरी बीवी की तरह अक़्ल से काम न लें और पहले दिन से ही तुमसे जंग छिड़ जाये। अगर ऐसा हुआ तो यह बहुत अच्छा होगा। इसका मतलब यह होगा कि गोया यूनानी दवा ने भी फ़ौरन अपना असर दिखाया। तुमको तो हर हाल में इन बातों का सामना करना ही है। बकरे की माँ कब तक ख़ैर मनायेगी। मगर तुम बराबर इनकार करते रहना और जो असलियत है वह कहते रहना कि तुमको शकीला से ज़रा भी दिलचस्पी नहीं बल्कि इस तरह की उलझन है। मगर वह इसको तुम्हारा झूठ समझेंगी। इसके बाद उनकी खोज शुरू होगी।

हो सकता है कि मुझसे पूछें। मैं वैसे तुम्हारा राज़दार बनकर गोया इस क़िस्से को छिपाने की नाकाम कोशिश करूँगा और इस तरह इस क़िस्से पर पर्दा डालूँगा कि उनको और भी यक़ीन हो जायेगा। अगर ज़रूरत पेश आई तो मुख़्तलिफ़ ज़रियों से उनको यही ख़बर पहुँचाई जायेगी। मुख़्तसर यह कि इस सिलसिले में उनको सोलह आना तुम्हारे मक्कार, धोखेबाज़ और दग़ाबाज़ होने का यक़ीन हो जायेगा और शकीला से तुम्हारे मेल-जोल को यक़ीनी समझकर वह तुम्हारी तरफ़ से बिल्कुल मायूस हो जायेंगी। उनकी हालत ऐसी होगी कि तुम लाख संगदिल सही मगर तुम्हारा कलेजा मुँह को आने लगेगा। उस वक्त अगर तुम बहके और इस भाँडे को फोड़ने की कोशिश की तो याद रखो कि फिर ज़िन्दगी भर पछताओगे। हाँ अगर मुस्तक़िल मिज़ाजी से काम लेकर यह सब बातें झेल गये तो आख़िर में जब उनको मालूम होगा कि तुम महज़ क्लब की दिलचस्पियों और ताश वग़ैरह में उलझे हुए हो तो फिर देखना उनकी खुशी और उस वक्त देखना कि यही नागवार बातें किस तरह गवारा कर ली जाती है।"

हमने इस लम्बी स्कीम को सुनकर कहा—"अच्छा भाई, अब खुदा के लिये बख़्श दो। सुनते-सुनते कान पक गये, सर चकराने लगा। मगर इसमें शक नहीं कि हो ख़तरनाक क़िस्म के आदमी। तुम्हारे काटे का मंतर नहीं है।"

फ़ैयाज़ ने कहा—"ख़ैर अब मेरी खुशामद न कीजिये। बहरहाल अब यह तय है कि सुबह आपके यहाँ दावतनामा आयेगा और तीसरे पहर को आपकी बेगम साहबा ग़रीबख़ाने पर चाय पीने आयेंगी। आप उनसे छिपकर तशरीफ़ ला सकते हैं ताकि आप खुद सब देख सुन लें। अच्छा अब मैं चला, आदाब अर्ज़।"

८

फ़ैयाज़ के यहाँ बेगम साहबा के पहुँचने से कुछ पहले ही हम पहुँच चुके थे और हमको उस कमरे में बिठा दिया गया था जिसके बराबर वाले कमरे में हमारी बीवी पर बिजली गिराने का इन्तज़ाम किया गया था। नाज़ो से हमारा और हमारी बेगम रफ़ीआ या रफ़्फ़ो से फ़ैयाज़ का पर्दा नहीं था इसलिये इस ताक झाँक में कोई मुज़ायक़ा न था। शुरू-शुरू में कुछ काना पर्दा दोनों घरों में हुआ मगर फिर उसको बेकार समझकर उठा दिया गया। हमको उस कमरे में बैठे हुए कुछ ज़्यादा देर न हुई थी कि बेगम साहबा तशरीफ़ ले आईं। बड़ी मुहब्बत से दोनों मिलीं। बेगम ने नाज़ो से कहा—"भाई साहब से मेरा सलाम कहला दो ताकि उनको खबर तो हो जाये कि मैं आगई हूँ।"

उनको तो पहले ही समझा बुझा दिया गया था कि वह क्या कहें इसलिये उन्होंने बड़ी तल्खी से जवाब दिया आपके भाई साहब की खबर मुझको हो तो कहलवा भी दूँ। न जाने कहाँ गायब हैं। घर तो इसलिये बनाया गया है कि जब कहीं ठिकाना बाक़ी नहीं रहता तो मजबूरन घर आ जाते हैं। यह भी कोई तुम्हारे मियाँ हैं कि घर वालों की तरह घर में रहते हैं।"

बेगम ने हमारे पीठ पीछे भी हमारे साथ हमदर्दी जताते हुए कहा—

"वह भी कहाँ घर पर रहते हैं। अब तो मुद्दतों से बेचारे का यह हाल है और वापसी होती है कोई दो-ढाई बजे रात को।"

नाज़ो ने बड़ी उम्दा ऐक्टिंग करते हुए कहा—"अरे हाँ, ठीक तो है। वह अब कैसे घर पर रह सकते हैं। मगर तौबा है,....खैर कुछ नहीं।"

बेगम ने ताज्जुब से नाज़ो की तरफ़ देखते हुए कहा—"क्या बात है? आखिर क्या कहते-कहते रुक गईं।"

नाज़ो ने जैसे टालते हुए कहा—"अच्छा पान खाओगी या चाय मँगवाऊँ?"

बेगम ने अपनी ही कहा—"पहले यह बताओ कि तुम क्या कह रही थीं?

नाज़ो ने हँसते हुए कहा—"सचमुच मेरे पेट में बात हज़म नहीं होती। फ़ैयाज़ साहब ने किस सख़्ती से मना किया था कि कभी यह बात ज़बान पर न आये। मेरी कमबख़्ती यह कि ज़बान पर आई भी तो किसके सामने। जिनसे सब से ज़्यादा छिपाने की ज़रूरत थी।"

बेगम ने और भी उत्सुक होकर पूछा—"आख़िर बात क्या है? तुमको मेरी ही क़सम जो मुझसे कुछ छिपाओ।"

नाज़ो ने कहा—"अरे अब तो बताना ही पड़ेगा। नहीं तो तुमको भला चैन आयेगा? हालाँकि ऐसी बात कमबख़्त न सुनी जाये तो अच्छा है। खैर, तुम चाय पियो। इत्मीनान से बैठकर बता दी जायेगी हर बात।"

बेगम ने बेसब्री के साथ कहा—"तुमने तो उलझन में डाल दिया है। अब यही जी चाहता है कि पहले बात सुन ली जाये फिर चाय-वाय देखी जायगी।"

नाज़ो ने उठते हुए कहा—"वाहरी आपकी उलझन, कह तो चुकी हूँ कि सब कुछ बतादूँगी। ऐसी भी कौन-सी अच्छी ख़बर है कि फ़ौरन

ही सुना दी जाये। चाय मँगाती हूँ। उसके बाद यह मुआ क़िस्सा भी सुन लेना।"

यह कहकर उधर तो नाज़ो गईं चाय के इन्तज़ाम के लिये और यहाँ बेगम की आँखों में एक ख़ास सोच-विचार की चमक पैदा हो गई। शायद वह नाज़ो के बताने से पहले ही ख़ुद सब कुछ समझने की कोशिश कर रही थीं। लेकिन कुछ समझ में न आता था। खोई-खोई सी बैठी हुई थीं। और इधर हम दोनों निहायत ख़ामोशी के साथ यह तमाशा देख रहे थे। इसमें शक नहीं कि इस तमाशे की शुरूआत ट्रेजिडी से हुई थी मगर अंजाम के बारे में मालूम था कि कामेडी होगी। इस लिये बेगम के इस नक़्शे पर हँसी आ रही थी। वह कुछ ही देर बैठी होंगी कि चाय आगई और नाशता चुन दिया गया। मगर बेगम ने बिल्कुल रस्मी तौर पर नाशते से दिलचस्पी ली। मुँह उठाये हुए कुछ सोच रही थीं, और हाथ में जो चीज़ किसी भी प्लेट से आजाती थी मुँह में रख लेती थीं। वह तो कहिये कि नाज़ो ने टोक-टोक कर थोड़ा-बहुत उनको खिला दिया, वरना वह इतना भी न खातीं। आख़िर नाशता उठ जाने के बाद फिर वे दोनों इत्मीनान से बैठीं तो बेगम ने फिर पूछा—"हाँ अब बताओ, वह क्या बात थी?"

नाज़ो ने फिर बात टालने के अन्दाज़ में हिचकिचाते हुए कहा—"तौबा है अल्लाह! कोई बात भी तो नहीं थी। मैं तो योंही मज़ाक़ कर रही थी।"

बेगम ने ज़ोर देते हुए कहा—"ग़लत है। अब मुझसे छिपाने की कोशिश न करो। तुम्हारी इन बातों में मैं आने वाली नहीं हूँ। तुमने वायदा किया है तो तुमको बताना पड़ेगा।"

नाज़ो ने कहा—"अरे तुमको ख़ुद मालूम होगा। वही शकीला का क़िस्सा।"

बेगम ने ताज्जुब से कहा—"शकीला?....कौन शकीला?"

"वही क्लब में जो आती हैं लेडी डाक्टर शकीला, जिससे पिछले

हफ़्ते तुम्हारे मियाँ ने मंगनी की है। तुम तो ऐसा बन रही हो जैसे कुछ पता ही न हो।"

बेगम ने सन्नाटे में आते हुए कहा—"मंगनी? चलो हटो, अब चली हैं बेचारी मज़ाक़ करने। मेरा मियाँ ऐसा नहीं है कि इस तरह गली-गली मंगनी ब्याह करता फिरे। सच्च बताओ आख़िर कि यह क़िस्सा क्या है?"

"तो क्या सचमुच तुमको ख़बर नहीं है?"

"मुझको ख़बर होती तो मैं तुमसे क्यों पूछती। मगर यह उड़ाई किसने है?"

नाज़ो ने बनाते हुए कहा—"बस तुम इसको उड़ाई हुई ख़बर समझे जाओ और वहाँ मंगनी के बाद ब्याह भी हो जाये। सच पूछो तो जब फ़ैयाज़ साहब ने मुझसे कहा तो मुझे यक़ीन न आता था मगर जब रोज़ यही ज़िक्र रहने लगा कि आज यह हुआ, कल वह हुआ, आज यों दोनों इलाहाबाद गये, कल यह ख़त शकीला ने उनको लिखा, परसों यों शकीला रूठ गई थी और वह उसको मना रहे थे और आख़िर में यह भी सुन लिया कि लीजिये मंगनी भी होगई दोनों की। अरे यह क़िस्सा तो कोई चार-पाँच महीने से चल रहा है।"

बेगम ने ग़ौर करते हुए कहा—"हूँ-हूँ, अच्छा तो ज़रा तफ़सील से बताओ कि यह है क्या माजरा है? मैं तो बस यह समझ रही थी कि चार-पाँच महीने से काम कुछ ज़्यादा पड़ गया है। तरक्क़ी जो मिली है तो काम में भी तरक्क़ी हो गई है। आधी-आधी रात तक उसी काम में लगे रहते हैं। मुझे क्या मालूम कि वहाँ यह गुल खिल रहा है।"

नाज़ो ने बड़ी राज़दारी के साथ कहा—"गुल खिल भी चुका। अलबत्ता उसकी ख़ुशबू छिपाने की कोशिश हो रही है। फ़ैयाज़ साहब तो हर वक़्त के देखने वाले बल्कि शुरू में तो उनसे भी हर बात छिपाई गई। मगर वह ठहरे एक ही खोजिये। पता लगा ही लिया।

अब जब पता चल ही गया तो उनसे हज़ारों क़समें ली गईं कि फ़िल-हाल इस बात को छिपाकर रखें।"

बेगम ने कहा—"क्या नाम बताया तुमने शहला ?"

"शहला नहीं, शकीला ! अरे भई, यहाँ एक खा़न बहादुर साहब बैरिस्टर हैं उनकी यह लड़की हैं। कुछ ही दिन हुए विलायत से डाक्टरी पास करके आई हैं और जनाना हस्पताल की इंचार्ज हैं। जिस क्लब में ये लोग जाते हैं उसकी वह भी मेम्बर हैं। वहाँ हर वक्त का तो साथ। बस हो गई दोनों को एक दूसरे से दिलचस्पी। पहले बातें रहीं फिर दोनों एक दूसरे को खत लिखने लगे। क्लब में दोनों जाते मगर एक तरफ़ सर जोड़े बैठे रहते। आख़िर खुल्लम-खुल्ला दोनों लैला-मजनूँ बनकर रहने लगे। सूरत-शक्ल तो है ही मुई की अच्छी, लम्बे-लम्बे सुनहरे बाल, बादाम की-सी आँखें, नाजुक-नाजुक सा नक्शा। फिर यह कि अंग्रेज़ी पढ़ी, डाक्टरी पास। लोगों को तुम्हारे मियाँ के साथ उसकी दिलचस्पी ख़ार बनकर खटकने लगी। मगर वह तो जैसे गले का हार हो गई। सुना है कि उसने अपने बाप से साफ़ कह दिया है कि शादी करूँगी तो शोकी के साथ।"

बेगम ने पूछा—"यह शोकी कौन है ?"

"हाय मेरे अल्लाह ! यह भी नहीं मालूम। वह प्यार में शोकी ही तो कहती है तुम्हारे मियाँ को। हाँ, तो उसने अपने बाप से कह दिया कि शादी करूँगी तो शोकी से वरना उम्र भर कुँआरी रहूँगी। आख़िर वह लोग भी राज़ी हो गये। सुना है कि तीन सौ रुपये की सिर्फ़ एक अँगूठी दी है तुम्हारे मियाँ ने।"

बेगम ने समझते हुए कहा—"अच्छा यह बताओ कि यह क़िस्सा कब का है ?"

नाज़ों ने जैसे याद करते हुए कहा—"अभी कोई पन्द्रह-बीस दिन उधर की बात है।"

"ठीक कहती हो। मेरे हिसाब से भी इतने ही दिन हुए।"

"अभी तो तुम कह रही थीं कि तुमको कुछ पता ही नहीं है, और अब हिसाब भी लगाने लगीं।"

"नहीं, मुझे ख़बर तो कुछ भी नहीं है मगर पन्द्रह-बीस दिन उधर मुझसे न जाने क्या-क्या बहाने करके एक हज़ार रुपया लिया गया है। मुझे क्या पता था कि मेरी छाती पर मूँग दलने के लिये मुझसे ही रुपया लिया जा रहा है। अलबत्ता यह बात मेरी समझ में न आती थी कि ऐसा भी सरकारी काम क्या कि रोज़ डेढ़-दो बजे रात को फ़ुरसत मिलती है। दुनिया के किसी दफ़्तर में इतना काम तो किसी से न लिया जाता होगा। और फिर उनको देखती थी कि इतनी मेहनत के बावजूद न उनको इस नौकरी से शिकायत है न काम की ज़्यादती से जैसा परेशान होना चाहिये वैसा परेशान हैं। बल्कि मुझको तो हमेशा उन पर तरस आता था और मुझे डर था कि अगर यही हाल रहा तो वह अपनी तन्दुरुस्ती खो देंगे। मगर वहाँ तो दूसरा खेल हो रहा था।"

"ऐसा वैसा खेल! फ़ैयाज़ साहब कहते थे कि दिन भर दफ़्तर में टेलीफ़ोन होते हैं, तीसरे पहर दफ़्तर से वापसी पर उसके यहाँ चाय पी जाती है। और फिर क्लब में न उनको किसी खेल से दिलचस्पी है न किसी और तफ़रीह से। बस दोनों सब से अलग-थलग न जाने कौन-सी बातें करते हैं कि किसी तरह खतम ही नहीं होतीं। और वह उनसे ऐसे-ऐसे नाज़-नखरे करती है कि देखने वालों को ताज्जुब होता है। अच्छा यह तो बताओ कि क्या हाल ही में वह इलाहाबाद गये थे?"

"हाँ, पिछले ही हफ़्ते तो गये थे तीन-चार दिन के लिये।"

"बस तो ठीक है। असल में वह अपनी किसी मरीज़ के साथ इलाहाबाद गई थी। कोई रानी साहबा थीं, वह चार सौ रुपये रोज़ पर उसको लेकर गई थीं और उसने इन हज़रत को अपने साथ ले लिया था। सुना तो यह है कि इसी दिसम्बर की छुट्टियों में दोनों की सिविल मैरेज हो जायेगी।"

अब बेगम की हालत देखने के क़ाबिल थी। पहले तो अपने चेहरे

पर हवाइयाँ उड़ाती रहीं, इसके बाद गर्दन झुकाकर बैठ गईं और फिर फ़ैयाज़ की भविष्यवाणी एक-एक हर्फ़ सही होकर रही। यानी लगीं सिसकियाँ भर-भर कर रोने। उधर हमारी हालत ग़ैर होना शुरू हुई। कई बार इरादा किया कि इस मज़ाक़ को खतम कर दिया जाये मगर हर बार फ़ैयाज़ ने इस बुरी तरह घूरा है कि हम सहम कर रह गये। हाय इससे बढ़कर और क्या गुनाह हो सकता है कि हम अपने ज़रा से शौक़ के पीछे अपनी भोली-भाली बीवी पर यह क़ियामत ढा रहे थे। उसके इन आँसुओं की क़ीमत का अन्दाज़ा अगर हम कर सकते तो बेड़ा पार था। मगर वह यह मोती हमारे ऐसे अंधे के सामने बिखेर रही थी। बेचारी देर तक रोती रही और नाज़ो उसको समझाती रहीं कि इस तरह रोने-धोने से क्या फ़ायदा है। इस क़िस्म के मौक़ों पर तो दिल को मज़बूत रखने की ज़रूरत है। तुमने उनके साथ जो कुछ किया है उसको भी खुदा ने देखा है और वह जो कुछ तुम्हारे साथ कर रहे हैं उसका देखने वाला भी वही है। अब इस वक्त तो सवाल यह है कि इस शादी को किस तरह रुकवाया जाय।"

बेगम ने भर्राई हुई आवाज़ के साथ कहा—"शादी हर्गिज़ न रुकवाई जायेगी। अगर उनकी खुशी इसी में है तो यह भी सही। जब एक मर्तबा उनको किसी दूसरी औरत से दिलचस्पी पैदा हो गई तो उनको ज़रूर शादी कर लेनी चाहिये। मगर मुझे उनसे शिकायत सिर्फ़ यह है कि आख़िर मेरा क़सूर क्या था? मुझसे कौन-सी ऐसी कोताही हुई थी?"

यह कह कर वह फिर लगीं फूट-फूट कर रोने और हमने पहलू बदलना शुरू किये। मगर फ़ैयाज़ ने फिर आँखें दिखाईं इसलिये चुप होकर बैठ गये।

अब नाज़ो ने उनसे कहा—"बहन, इन मर्दों का भी कोई एतबार है। इनके तो आस-पास भी कहीं वफ़ा का गुज़र नहीं हुआ। हम तुम अपनी जान भी दे दें, सर भी काट कर रख दें तो हमारे साथ उनका

यही सलूक होगा जैसा कि तुम्हारे साथ हुआ है। बात यह है कि हम लाख कुछ करें मगर न तो हमको वह नुमायशी अदाएँ आ सकती हैं जो इन सोसाइटी गर्ल्ज़ को आती हैं, न हम उनके आमने-सामने बैठ कर ताश खेल सकती हैं, न हम सोसाइटी के तौर-तरीक़ों से इतनी वाक़िफ़ हैं, न हम हर क़िस्म की महफ़िलों में चमक सकती हैं इसलिये कि हमको ऐसा बनाया ही नहीं गया। मगर उम्मीद हमसे यही की जाती है और यही कमी है जो हममें महसूस की जाती है। मगर नतीजा इसका बुरा होता है। कुछ ही दिनों के बाद आटे-दाल का भाव मालूम हो जाता है। ये लोग तो उनसे ही खुश रह सकते हैं जो हर वक़्त अपने ठस्से इनको दिखायें, जो अपनी जूतियाँ सीधी करायें और अपने नाज़ उठवाती रहें। हमने तो इनको खुदा के बाद सब कुछ समझ कर सरों पर चढ़ा लिया है न, इसलिये पैर की जूती की इज्ज़त ज़्यादा है और हमारी उतनी भी नहीं।"

बेगम ने सब कुछ सुनकर कहा—"मगर वह तो ऐसे न थे। न जाने कौन सा जादू उन पर किया गया है।"

नाज़ो बोली—"अरे न कोई जादू करता है न कुछ। ये सब-के-सब एक ही क़िस्म के मदारी होते हैं। मैं तो फ़ैयाज़ साहब के बारे में हर वक़्त इस तरह की खबरें सुनने को तैयार रहती हूँ। और मुझको ताज्जुब है कि अब तक उनको किसी ने क्यों नहीं पूछा ?"

बेगम ने उसी लहजे में कहा—"चार-पाँच महीने से तो उनको न घर की किसी बात की खबर है न इस बात की कोई फ़िक्र कि मैं ज़िन्दा हूँ या मर गई हूँ। मुश्किल से एकाध बात चौबीस घन्टे में होती हो तो हो जाती हो, मगर इससे पहले तो उनको बग़ैर मेरे चैन ही न था।"

"उस वक़्त तक उनकी राहते-जान और कोई न थी। अब भला तुम किस खेत की मूली। जब उनको विलायत से लौटी हुई एक नूर की पुतली मिल गई है तो तुम किस गिनती में हो। शुक्र करो कि अब

तक तुमसे यह बात छिपाई जा रही है। कुछ दिनों के बाद यह पर्दा उठ जायेगा।"

बेगम बोलीं—"खुदा के लिये नाज़ो, बस करो। मैं दुनिया की हर चीज़ बरदाश्त कर सकती हूँ मगर मुझसे यह मुसीबत न सही जायेगी। मैं इसकी पूरी-पूरी छानबीन करूँगी और अगर यह सच है तो मेरा खुदा हाफ़िज़ है।"

नाज़ो ने कहा—"लो और सुनो। अब तक बेचारी को शक है। अरे बहन, मेरी लाख बातों की एक बात तो यह है कि बेहया बनकर जब तक न रहा जाये, ज़िन्दगी नहीं कट सकती। न छान-बीन करो न कुछ और। तुम को चुप की दाद जरूर मिलेगी।"

अब बेगम निहायत खामोशी के साथ आँसू बहाती रहीं और नाज़ो उनको इस तरह भयानक नक्शे दिखा-दिखा कर गोया तसल्ली देती रहीं और फ़ैयाज़ ने हमको उठने का इशारा किया। हम चुपके से उठकर फ़ैयाज़ के साथ बाहर आ गये।

घर से निकल कर क्लब की तरफ़ जाने का इरादा था। दिल ऐसा बुझा था कि क्लब जाने को जी ही न चाहता था। बार-बार यही खयाल आता था कि हम तो इस वक्त जाकर अपनी दिलचस्पियों में खो जायेंगे और वह बेचारी अब अंगारों पर लोटेगी। चुनांचे हमने फ़ैयाज़ से कहा—"भई इस वक्त क्लब जाने को जी नहीं चाहता। बस घर ही जाने का इरादा है।"

फ़ैयाज़ ने खा जाने के अन्दाज़ से आँखें निकाल कर कहा—मैं पहले ही जानता था कि तुम लाइलाज मरीज़ हो। पहली ही खूराक में में घबरा गये। हालाँकि तुमसे पहले ही कह दिया था कि तुमको ये सब नज़ारे देखना पड़ेंगे। अब आप घर जाकर क्या करेंगे? आखिर मालूम तो हो कि इरादा क्या है? बजाय इसके कि मेरा एहसान मानते कि पहली ही खूराक कैसी कारगर हुई। अब यह बदपरहेज़ी

अभी से करना चाहते हो। खबरदार जो घर जाने का नाम लिया। चलो सीधी तरह क्लब।"

हमने कहा—"मगर ग़ौर तो करो कि यह कैसी संगदिली और ज़ुल्म है कि अपनी ज़रा-सी दिलचस्पी के लिये हम उस बेचारी को इतनी सख़्त तकलीफ़ दे रहे हैं।"

फ़ैशाज़ बोले—"अपने ज़मीर (आत्मा) साहब से कहो कि फ़िलहाल आराम करें, अपनी ख़ानदानी शराफ़त से कहो कि वह ज़रा खामोशी के साथ तामाशा देखें। संगदिली और दरिन्दगी तो यह उस वक़्त होती जब सचमुच उनका हक़ मार रहे होते। मगर तुम्हारा इरादा नेक है, तुम सिर्फ़ एक ज़रा-सी आज़ादी हासिल करने के लिये, जो हर इन्सान का पैदायशी हक़ है, यह कोशिश कर रहे हो। अपने को चोर की जगह साहूकार साबित करना है, इसलिये जिस वक़्त वह इस ड्रामे के नतीजे पर पहुँचेगी, सारे हालात खुदबखुद सुधर जायेंगे। तुम इस वक़्त के रंज के बजाये नतीजे की खुशी के बारे में सोचो, क्या समझे? जो आगे इस तरह की कमज़ोरी ज़ाहिर की तो बेंच पर खड़े कर दिये जाओगे।"

९

डाक्टर शकीला तो सचमुच लाइलाज बीमारी बनती जा रही थीं, यहाँ तक कि अब उनके सिलसिले में क्लब वाले हमारा बाक़ायदा मज़ाक़ उड़ाया करते थे। उनकी अनुपस्थिति में तो ऐसी-ऐसी बातें होती थीं कि कुछ पूछिये नहीं। लेकिन उनके सामने भी अब खुल्लम-खुल्ला चोटें होने लगी थीं। पर उनको इसकी परवाह नहीं थी। चुनांचे आज भी जिस वक्त हम क्लब पहुँचे थे, यारों ने यही ज़िक्र छेड़ दिया। उन सब में रमेश पेश-पेश थे। क़िस्सा दरअसल यह है कि सबसे ज़्यादा इस सिलसिले में रमेश को दिलचस्पी इसलिये थी कि शकीला के सब से पहले शिकार यही हज़रत थे, बल्कि आम तौर पर तो यह यक़ीन हो गया था सबको कि जल्द ही दोनों का यह मेल-जोल शादी का रूप धारण कर लेगा। मगर रमेश से ग़लती यह हुई कि वह खुद भी भावुकता में बह गये। यानी शकीला को पूजना शुरू कर दिया। हालाँकि शकीला अजीब क़िस्म की औरत है। वह खुद तो प्रेम करना चाहती है लेकिन अगर कोई दूसरा उससे प्रेम करने लगे तो बस उससे दूर भागने लगती है। हम लोग तो उसको परछाईं कहते हैं कि अगर उससे दूर भागा जाये तो पीछा करती है और अगर उसका पीछा किया जाये तो दूर भागती है। रमेश बेचारा यह भुगत चुका है। पहले तो शकीला ने उस पर जान देनी शुरू कर दी, हर समय 'रम्मो' का जाप

था। रमेश के साथ रहना, रमेश के साथ उठना-बैठना, सारांश यह कि उसको बिना रमेश के चैन ही न था। मगर जब रमेश भी उसके लिये बेचैन रहने लगा और उसकी बेचैनी का शकीला को अन्दाज़ा हो गया तो उसने कतराना शुरू कर दिया। रमेश बहुत दिनों तक शकीला से खिचने के बाद अब उसकी तरफ़ आकृष्ट हुआ था और चाहता था कि यह सम्बन्ध पक्का हो जाये। पर शकीला अपने स्वभाव से लाचार थी। वह रमेश को अपनी ओर बढ़ते देखकर निराश हो गई। जब क्लब के दोस्तों ने रमेश की वकालत की तो उसने साफ़ कह दिया कि मैं न जाने क्यों यह सहन नहीं कर सकती कि जिससे मैं मुहब्बत करूँ वह भी मुझसे मुहब्बत करने लगे। यह तो एक तरह की तू-तू मैं-मैं हुई कि चूँकि मुहब्बत का जवाब मुहब्बत है इसलिये मुहब्बत के जवाब में मुहब्बत ज़रूर की जाये। मैं इस लेन-देन का क़ायल नहीं हूँ। वैसे यह दलील अजीब पागलपन की मालूम होती थी, मगर शकीला इस सिलसिले में घंटों बोल सकती थी और इस सिलसिले में रमेश का ऐसा-ऐसा मज़ाक़ उड़ाती थी कि बेचारा तङ्ग आ गया था। उससे हम लोगों ने अक्सर पूछा कि ख़ैर उस बेचारे ने तुमसे मुहब्बत की, यह तो उसकी शामत थी, मगर तुम को जो उससे मुहब्बत थी वह आख़िर क्या हुई? इसके जवाब में वह हमेशा यही कहा करती थी कि मेरी मुहब्बत को उसकी मुहब्बत खा गई। उसने शायद मेरी मुहब्बत को इतना सस्ता समझ रखा था कि उसको गोया उसकी मुहब्बत ख़रीद सकती थी। मगर जिस दिन मुझको उन हज़रत की मुहब्बत का पता चला, मैंने अपनी मुहब्बत को शर्म दिलाई कि देख कमबख़्त, अगर तू स्वाभिमानी है तो अपनी इस आबरू के जाने से डूब मर। मेरी मुहब्बत भी सचमुच हयादार, डूब मरी। रमेश साहब शुरू-शुरू में बड़े रंग लाये, अकेले में रोये, एकान्त वास किया, शकीला के दर पर धूनी रमाई और न जाने क्या-क्या यत्न किये। मगर जब शकीला ने बड़े ठंडे ढंग से उनको समझा दिया कि बचपन न करो, मैं अब साल

जन्म तुमसे दिलचस्पी नहीं ले सकती, तो आख़िर धीरे-धीरे उनको सब्र आ गया। और जब वह फिर आदमी बनकर क्लब आने-जाने लगे तो कुछ दिनों के बाद शकीला ने आम मजमे में फिर यह चर्चा छेड़ते हुए कहा—"हमारे रमेश साहब की मुहब्बत भी उनकी कितनी फ़रमाँबरदार है। जब चाहा शुरू होगई और जब इशारा किया ख़तम। ऐसी तावेदार मुहब्बत मुश्किल से ही मिल सकती है। मैं तो डर गई थी कि कहीं एक बेगुनाह का ख़ून मेरी गर्दन पर न पड़ जाये। मगर बड़ा अच्छा हुआ कि इनकी मुहब्बत मौसमी साबित हुई।"

इस तरह की चोटों से ज़ाहिर है कि रमेश का क्या हाल होता होगा। मगर अब कुछ दिनों से रमेश ने समझ से काम लेकर इस जुनून को छोड़ दिया था और अपने इस रोमांस को अपनी हिमाक़त मानकर वह स्वयं इस मज़ाक़ में हिस्सा लेने लगा था। हमारे सिलसिले में सब से आगे रमेश ही थे। चुनांचे आज भी शकीला की अनुपस्थिति से फ़ायदा उठाकर आप ने हमको देखते ही कहा—"आगये मजनूँ के जानशीन।"

इख़लाक़ ने यह सुनते ही कहा—"जी नहीं, आप इनको अपना या मजनूँ का जानशीन नहीं कह सकते। यह तो अब तक निहायत अक्लमन्दी से काम लेकर दूर ही भाग रहे हैं।

रमेश ने कहा—"अरे बड़ा चालाक है। मेरा अंजाम देख चुका है न इसलिये जान बूझ कर कतरा रहा है। शकीला की तबियत को समझकर बेचारा अपने जज़बात को छिपाये नहीं तो क्या करे।"

हमने कहा—"भैया ख़ुदा के फ़ज़ल से न मेरी आँखें कमज़ोर हैं न दिमाग़ में फ़ितूर है कि मैं शकीला के लिये अपने जज़बात छिपाता या आपकी तरह उछालता फिरूँ। मुझे तो इस क्लब से ही उनकी वजह से वहशत होने लगी है।"

इख़लाक़ ने कहा—"अरे भाई, कल का क़िस्सा भी सुना। उस

औरत ने सर में दर्द पैदा कर दिया। दो घन्टे तक गाना सुनाया है मसऊद के यहाँ। समझती यह है कि उस से बढ़कर गाने वाला शायद ही कोई और हो।"

फ़ैयाज़ ने कहा—"जी, गाने वाला? अरे साहब वह हरफ़न मौला है। उस दिन क्लब के सालाना डिनर में डाक्टर मुखर्जी के पीछे पड़ गई। इकनामिक्स में बड़े बड़े डाक्टर मुखर्जी के सामने ज़बान नहीं खोल सकते, मगर उस अल्लाह की बन्दी ने दो-ढाई घन्टे तक लगातार ऐसा दिमाग़ चाटा है कि बेचारे घबरा गये। मज़ा यह कि उनकी बात सुनती ही न थी और अपनी कहे जाती थी।"

रमेश ने कहा—"और उस दिन जब सक्सेना और जमील में शायरी पर बहस छिड़ी थी तो हमारी इसी डाक्टर के टाँग अड़ाने की वजह से उन्हें अपनी बात ही ख़तम कर देनी पड़ी।"

फ़ैयाज़ ने कहा—"भई सुनो, आज मैं ज़रा उनसे कुछ डाक्टरी की बातें शुरू करता हूँ। यह तो जानते ही हो कि मुझे डाक्टरी या हिकमत से क्या लगाव, मगर शकीला को तो यह समझाना है कि अगर वह शायरी, सियासत और तारीख़ सब पर राय दे सकती है तो मैं भी ऐसा गया गुज़रा नहीं हूँ कि डाक्टरी पर राय न दे सकूँ। फिर देखिये उनका क्या हाल होता है।"

इस प्रस्ताव को हम लोगों ने पसन्द किया और अभी इस पर तफ़सील से बात न होने पाई थी कि धड़ से एक दरवाज़ा खुला। खड़-बड़ कर के कुछ कुर्सियाँ खींची गईं और न जाने क्या गुनगुनाती हुई डाक्टर शकीला आ गईं। सबसे पहले हमको देख कर कहा—"हलो शौकी! मैं तो समझी थी कि आज तुम शायद न आ सको।"

इख़लाक़ ने कहा—"ख़ैर कोई बात नहीं है।" शकीला ने एक कुर्सी पर गिरते हुए कहा—"क्या मतलब?"

रमेश ने कहा—"यानी यही कि आप हमेशा ग़लत समझा करती हैं।"

शकीला ने रमेश की तरफ़ मुस्करा कर देखते हुए कहा—"यानी आपको समझने में जो ग़लती की है उसी तरफ़ इशारा है न ?"

सब हँस दिये और इखलाक़ ने कहा—"भई रमेश ! इस वक्त चिपक गई, शराफ़त के साथ मान लो।"

फ़ैयाज़ ने कहा—"हाँ साहबान, तो मैं यह कह रहा था कि एक़बाल के बारे में जोश का यह कहना कि—

हाय वह नादान शायर, हाय वह दाना हकीम मेरे नज़दीक सही नहीं है। 'जोश' ने उसको सिर्फ़ इसलिये हकीम कहा है कि उसकी शायरी पीछे हो जाये। 'जोश' का यह ज़ुल्म है क्योंकि एक़बाल के बारे में यह नहीं कहा जा सकता कि वह शायर बड़े थे या हकीम ?"

शकीला से न रहा गया और पट से बोलीं—"I Say, फ़ैयाज़, क्या एक़बाल हकीम भी था ?"

कुछ लोगों को तो हँसी आने लगी थी मगर शकीला उसको समझ न सकीं और फ़ैयाज़ ने बड़ी गम्भीरता से उनको अपनी तरफ़ आकर्षित कर कहा—"ऐसा वैसा हकीम। दुनिया भर में उसका नाम था। बड़े-बड़े डाक्टर उसका लोहा मानते थे। कुछ इलाज तो ऐसे मारके के उसने किये हैं कि हैरत होती है सोच कर। वह याद है इखलाक़ साहब। उसने अमीर अमानुल्ला खाँ का जो इलाज किया था ?"

इख़लाक़ ने कहा—"हाँ साहब, उसमें तो कमाल ही कर दिया। किसी की समझ में ही न आता था कि वह बच कैसे गये। मगर सुना है कि तीन नुस्ख़ों में बिल्कुल ठीक हो गये।"

फ़ैयाज़ ने कहा—"गुर्दे में दर्द था जिसकी वजह से मुस्तक़िल तौर पर नज़ला हो गया और आवाज़ बराबर बैठती जा रही थी।"

शकीला ने चौंक कर कहा—"क्या ? नानसेन्स ! यह तुम क्या कह रहे हो। गुर्दे में दर्द का नज़ले से क्या ताल्लुक़, और फिर आवाज़ का बैठ जाना।"

फ़ैयाज़ ने कहा—"जी हाँ, बिल्कुल यही शिकायतें थीं। आख़िर एक़बाल ने उनको सलाह दी कि वह पानी बिल्कुल न पियें, चुनाचे तीन महीने पानी या कोई दूसरी पतली चीज़ उनको बिल्कुल न दी गई।"

रमेश ने कहा—"बल्कि सुना है कि दवा तक गोलियों की शक्ल में दी जाती थी।"

फ़ैयाज़ ने कहा—"जी हाँ, इसका नतीजा यह हुआ कि गुर्दे का दर्द बड़ी मुश्किल से गुर्दे से निकल कर पानी की तलाश में मेदे तक गया और अब जो एक़बाल ने उसको मेदे के पास देखा तो एक जुल्लाब देकर ऐसा उस दर्द को निकला है कि हैरत होगई सब को।"

शकीला ने पागल हो जाने के अन्दाज़ से कहा—"न जाने आज तुम लोगों को क्या हो गया है। पागलों की-सी बातें कर रहे हो बिल्कुल। एक बात तो समझ में आने वाली है नहीं।"

इख़लाक़ ने कहा—"मेरी ख़ाला को भी एक बार यह शिकायत हो गई थी कि दाहिने पैर में दिल के धड़के का दौरा पड़ने लगा। किसी ने कहा कि गँठिया है, किसी ने बताया फ़ालिज का असर है मगर एक़बाल ने देखते ही पहिचान लिया कि यह दिल का धड़का है।"

शकीला ने चीख़ कर कहा—"पैर में दिल का धड़का।"

फ़ैयाज़ ने कहा—"क्यों क्या हुआ? दिल का ताल्लुक़ जिस्म के हर हिस्से से है या नहीं?"

शकीला ने कहा—"बाबा यह डाक्टरी है। इसमें दख़ल न दूं। अच्छा है।"

इख़लाक़ ने कहा—"यह हम दख़ल नहीं दे रहे हैं बल्कि यह एक़बाल की राय है जिसमें तरमीम की गुंजायश नहीं। आपको मालूम होना चाहिये कि वह इतना बड़ा हकीम था कि हकीम अजमल ख़ाँ या डाक्टर अन्सारी भी बीमार होते थे तो उससे इलाज कराते थे।"

शकीला ने जल कर कहा—"कराते होंगे इलाज। मगर बात तो तुम पागलों जैसी कर रहे हो कि पैर में दिल का धड़का।"

फ़ैयाज़ ने कहा—"जो बात आपकी समझ से बालातर हो उसमें आपको दख़ल देने की क्या ज़रूरत है ?"

शकीला ने कहा—"वाबा, मैंने भी कुछ डाक्टरी पढ़ी है। कम-से-कम तुम लोगों से कुछ ज़्यादा ही इन बातों को समझ सकती हूँ।"

रमेश ने कहा—"मगर मजबूरी तो यह है कि आपकी समझ में ये बातें नहीं आ रही हैं।"

शकीला ने कहा—"कौन ? आप बोले। आप तो ख़ैर जितने समझदार हैं उसका अन्दाज़ा करने से अक़्ल हैरान हो जाती है। मगर यह दूसरे पढ़े-लिखे लोगों का हाल देखकर तो मुझे सचमुच ताज्जुब हो रहा है। कहीं मेरे आने से पहले कोई दौरा तो नहीं पड़ चुका है।"

रमेश ने कहा—"जी नहीं, आप तो जानती ही हैं कि इन लोगों पर कभी आपकी मुहब्बत का दौरा भी नहीं पड़ा। और अब तो मेरे बारे में भी सब की राय है कि मेरा दिमाग़ ठीक है।"

रमेश से उलझने के बजाय अब शकीला मेरी ओर घूम पड़ी—"शौकी साहब, आपने चुप शाह का रोज़ा क्यों रखा है आज। आप को तो बस इसका इन्तज़ार होगा कि कब रमी शुरू हो जाये।"

इख़लाक़ ने कहा—"कान पकड़ लिये साहब इसके साथ रमी खेलने से। दस-पन्द्रह दिन से जो डाके डालने शुरू किये हैं इसने तो किसी तरह जीत ख़तम ही नहीं होती।"

रमेश ने कहा—"कल आपका दिन ख़राब था ज़रा। फ़रमाते हैं कि सिर्फ़ दो सौ चालीस की जीत रही।"

फ़ैयाज़ ने कहा—"तब तो आज इनको हारना ही चाहिये।" फिर हमारी तरफ़ देख कर बोले—"भई अब एक खेल तो ख़तम हुआ। आओ फिर जम ही जाये रमी।"

शायद फ़ैयाज़ शकीला को और बनाना चाहते थे मगर एक़बाल वाली बहस ही ख़तम होगई। बहर हाल सारे दोस्त अब मेज़ के गिर्द इकट्ठे हो गये और ताश की फड़ जम गई।

१०

आज कल हमारे घर का नक्शा कुछ अजीब सा था—

आँखों में नमी-सी है चुप-चुप से वह बैठे हैं।

नाज़ुक सी निगाहों में नाज़ुक सा फ़साना है मगर ज़ाहिर में बेगम साहबा हम पर खुलने न देती थीं कि उनको सब कुछ मालूम हो चुका है। और इधर हम इस तरह अनजान बने थे जैसे हमें क्या पता कि क्या हुआ है और क्या हो रहा है। मगर उनकी शक भरी निगाहों में, उनकी निराश मुस्कान और उनकी उदासी में अजीब वीरानियाँ थीं। मालूम यह होता था कि हर नज़र जो हमें देखने को उठती थी, उसमें निराशा और दर्द भरा होता था। हर ठंडी साँस के साथ अरमानों के खून की बू आती थी। वह जो कुछ न कहना चाहती थीं, उसकी साकार व्याख्या बन गई थीं। हर निगाह एक शिकायत करती थी, हर अन्दाज़ एक आह भरी कहानी सुनाता था और हर अदा हमको पुकार-पुकार कर बेवफ़ा कर रही थी। फ़ैयाज़ कमबख्त ने एक अजीब उलझन में डाल दिया था कि ये सब कुछ हम ख़ामोशी के साथ-साथ देख रहे थे। जानते थे कि हम बेक़सूर हैं और एक बेगुनाह पर ख़ाहमख़ाह ज़ुल्म तोड़ा जा रहा है, मगर फिर भी चुप रहने के लिये मजबूर थे। क़िस्सा

दरअसल यह है कि इसको ज़नमुरीदी कह लीजिये या कुछ और। मगर बीवी से मुहब्बत होना कोई बुरी बात तो है नहीं और मुहब्बत में बड़े-बड़े अफ़लातूनों को दबना ही पड़ता है। हमको भी अपनी बीवी से सचमुच मुहब्बत थी और हम सचमुच उनसे दबते थे इसलिये उनको भी हक़ था कि वह हमको दबायें, हम पर हुकूमत करें, हम पर अपना ज़ोर चलायें। चुनांचे इस क़िस्से से पहले यही सब कुछ हुआ करता था और आज कल उनकी तरफ़ से बरती जा रही थी नर्मी। बड़ी ही विनम्र, फ़रमाँबर और मिसकीन बनी थीं, जो हमारे लिये बहुत तकलीफ़देह थी। मगर इस तब्दीली को महसूस करते हुए भी हम ऐसे बने हुए थे मानो बड़े नन्हें हैं, बड़े भोले हैं। हालाँकि दिल ही जानता था जब वह हाथ धुलाने के लिये खुद खड़ी हो जाया करती थीं या दफ़्तर जाते समय टोपी पर ब्रश करने के लिये लपकती थीं। आज तक कभी इस तरह की सेवाएँ भूलकर भी उन्होंने न की थीं। मगर अब वह सब ही कुछ किया करती थीं। एक नई बात और नज़र आ रही थी कि आज कल बड़ी पाबन्दी से पाँचों वक़्त की नमाज़ पढ़ी जा रही थी और हर नमाज़ के बाद बड़ी तफ़सील से दुआयें माँगी जा रही थीं।

आज क़िस्सा दरअसल यह हुआ कि फ़ैयाज़ से हमको यह ख़बर मिल गई थी कि उनकी नाज़ो हमारे घर जाने वाली हैं। दूसरे एक अजीब बात यह भी मालूम हुई कि फ़ैयाज़ ने अपनी बीवी को दरअसल अपना राज़दार नहीं बनाया है बल्कि उनको भी यक़ीन दिलाया है कि हमारा और शकीला का मामला सही है, बल्कि नाज़ो से यहाँ तक कहा कि तुमको मुझपर जो सन्देह थे वह अब इस तरह पूरे हो रहे हैं कि शौकी और शकीला का रोमांस बड़े ज़ोरों पर है। बल्कि अगर तुमने रफ़्फ़ो को वक़्त पर ख़बरदार न कर दिया तो हो सकता है कि बेचारी का घर तबाह हो जाये। मैंने फ़ैयाज़ से इस झूठ का कारण पूछा तो उसने कहा कि इस तरह के मामलों में किसी का एतबार न करना

चाहिये। मालूम नहीं कब किसके दिल में आ जाये और वह भेद खोल दे। औरतों के पेट में बात मुश्किल से ही ठहर सकती है। मुझे खुद अपनी बीवी की तरफ़ से यह शक था कि वह रफ्फ़ो से इस बात को छिपा सकेंगी। दूसरे एक बहुत गहरी हमदर्दी जो इस तरह के मौक़ों पर एक औरत को दूसरी औरत से हो जाती है, स्वाभावतः पैदा न होगी। इस लिये मैंने नाज़ो को भी कुछ नहीं बताया है और यह सच्चे दिल से तुमको निहायत बदमाश, निहायत बेवफ़ा, निहायत ज़ालिम और सख़्त संगदिल समझती हैं और तुम्हारा मुक़ाबिला करके मुझको मोतियों से तौलने के क़ाबिल शौहर समझे हुए हैं।

फ़ैयाज़ से यह मालूम कर लेने के बाद कि हमारे यहाँ नाज़ो जा रही हैं, हमारे लिये यह ज़रूरी हो गया कि दफ़्तर से क्लब जाने के बजाय पहले घर जायें और अगर मौक़ा मिल सके तो ज़रा सुनें कि अब उनकी खिचड़ी कहाँ तक पकी है। हमको देखते ही बेगम के चेहरे का रंग उड़ गया और परेशान होकर हमारी तरफ़ आते हुए कहा—"क्यों, कैसी है तबियत ?"

हमने इस सवाल को न समझते हुए कहा—"अच्छा तो हूँ। यह तबियत के बारे में आपको क्यों शक हुआ ?"

बेगम ने लज्जित होते हुए लेकिन वास्तव में अनायास लज्जित करते हुए कहा—"बेवक़्त आगये इस लिये मैंने कहा, न जाने क्या बात है ?"

सचमुच बेचारी के लिये परेशान होने की भी बात थी। छः महीने से जिस वक़्त हम घर आते थे उसके बिल्कुल विपरीत आज यह बात हुई थी। वह स्वाभाविक रूप से यही समझीं कि तबियत ख़राब हो गई, नहीं तो भला यह और इस वक़्त घर आते। मगर जब उनको मालूम हुआ कि हम अच्छे खासे हैं तो उन्हें ताज्जुब ज़रूर हुआ होगा। बहर-हाल हमने कुछ वाजिबी सी बातें कीं और यह कह कर बाहर आगये कि कुछ सरकारी काग़ज़ात लेने आ गये थे, फ़ौरन वापस जा रहे हैं।

अभी हम लौटने भी न पाये थे कि नाज़ो आ पहुँचीं और हमको घर पर देखकर कहा—"अरे, भाई साहब ! मैंने तो सुना था कि आपके बारे में अख़बारों में इश्तहार निकल रहा है कि खोगये हैं, पुलिसवालों को हुलिया लिखकर दे दिया गया है। मगर आप तो ख़ुदा की मेहर-बानी से मौजूद हैं।"

हमने कहा—"यह शायद आपकी कशिश थी, वरना यहाँ इतनी फ़ुरसत कहाँ कि अपने घर को अपना घर समझें।"

नाज़ो ने कहा—"आपके सरकारी काम तो हमारी सरकार से भी बढ़ गये। तो आप जा कहाँ रहे हैं ? बैठिये न दो घड़ी। यह अच्छा तरीक़ा है कि घर में मेहमान आये और मेज़बान बाहर जा रहा है।"

"अगर तुम भी इस घर में मेहमान हो तो लानत है मेरे मेज़बान होने पर। दूसरे आपके इस तशरीफ़ लाने का एहसान मुझ पर तो है नहीं, रफ्फो के पास आई हैं, उनपर ही एहसान रखिये। मैं इजाज़त चाहता हूँ, मुझे बड़े ज़रूरी काम से फ़ौरन जाना है।"

यह कह कर हम तो बाहर चले गये और यहाँ शुरू हो गई कान-फ़्रेन्स की कार्रवाई, जिसको सुनने के लिये हम इस वक़्त अपना प्रोग्राम छोड़ कर आगये थे। बाहर जाकर बाहर से ही हम उस कमरे के पीछे वाले कमरे में आगये जिसमें ये दोनों बैठी हमारे बारे में बातें कर रही थीं।

हमारे वहाँ पहुँचने पर रफ्फो की आवाज़ सुनाई दी— "ख़ैर, यह तो तय है कि जाते हैं क्लब और वहीं से रात को ढाई बजे वापसी होती है। चार पाँच दिन तक मैंने ख़ुद देखा। उसके बाद अपने एक रिश्ते के छोटे भाई इरफ़ान से कहा कि वह ज़रा ख़बर रखें। उनकी भी यही इत्तला है कि क्लब के अलावा और कहीं नहीं जाते।"

नाज़ो ने कहा—"बड़ा तीर मारा आपने जो यह मुख़बिरी की। यह तो मैं पहले ही बता चुकी थी कि क्लब में ही दोनों मिलते हैं और सारे गुल वहीं खिल रहे हैं।"

रफ़्फ़ो ने जल्दी से कहा—"नहीं, वह जो तुमने कहा था कि शाम को शकीला के घर चाय पीते हैं, यह ख़बर या तो ग़लत है या अब उसके यहाँ किसी वजह से नहीं जाते। दफ्तर से सीधे क्लब जाते हैं और वहाँ से सीधे घर आते हैं।"

नाज़ो ने कहा—"ज़रूरत तो इसकी है कि क्लब के अन्दर के हालात मालूम हों।"

रफ़्फ़ो ने निराशा के साथ कहा—"वहाँ तक मेरी पहुँच भला कैसे हो सकती है। इसके लिये तो किसी तरह तुम फ़ैयाज़ साहब से रोज़ की ख़बरें मालूम कर लिया करो। ख़ैर, जो कुछ होना है वह तो होकर ही रहेगा। मगर मैं चाहती थी कि मुझे कम-से-कम सारे हालात मालूम होते रहें।"

नाज़ो ने कहा—"उनसे तो मैं बराबर पूछती रहती हूँ, बल्कि वह ख़ुद मुझे बताते रहते हैं। अच्छा तो यह होता कि वह ख़ुद तुम्हारे राज़दार बन जाते। मगर क़िस्सा दर असल यह है कि उनको तुम्हारे साथ भी हमदर्दी है और दोस्त के राज़ का भी ख़याल है। वह यह तो किसी तरह नहीं चाहते कि शकीला के साथ उनकी शादी हो जाये। बेहद नफ़रत करते हैं उससे। कल ही बहुत बुरा भला कह रहे थे कि 'शोकी' 'शोकी' कह कर जितना हो सकता है, बेवक़ूफ़ बना रही है और उन हज़रत को न जाने क्या हो गया है कि दुनिया से मुँह मोड़े हुए बस उसी को पूछ रहे हैं। सब हँसते हैं, मज़ाक़ उड़ाते हैं, आवाज़ें कसते हैं, मगर उनको परवाह नहीं है। कल कह रहे थे कि मैंने बहुत समझाया कि देखो तुम नागिन को आस्तीन में पाल रहे हो और यह जो इश्क़ का भूत उस पर या तुम पर सवार है, चार दिन की चाँदनी है। वह विलायत से लौटी लड़की है, और अगर तुमको उससे वफ़ा की उम्मीद है तो यह ग़लत है। सर पर हाथ रखकर रोना पड़ेगा और बेज़बान बीवी का सब्र ऐसा पड़ेगा कि तुमको किसी कल चैन न आयेगा। वह चुपचाप सब कुछ सुनते रहे और आख़िर में सिर्फ़ इतना कहा—

"इश्क़ पर ज़ोर नहीं, है यह वह आतिश 'ग़ालिब' कि लगाये न लगे और बुझाये न बने।"

रफ़्फ़ो ने एक ठंडी साँस भर कर कहा—ख़ैर, मैंने तो अपना मामला ख़ुदा को सौंप दिया है और बहुत कुछ सोचने के बाद यह तय किया है कि इसमें दर असल उनका क़सूर उतना नहीं है बल्कि ख़ुद मुझमें कोई ऐसी कमी है कि उन्हें दूसरी तरफ़ लगाव हुआ। अगर मुझमें कमी न होती तो वह क्यों शकीला की तरफ़ झुकते।"

नाज़ो ने कहा—"चलो हटो, आई हैं वहाँ से कमी-वेशी लेकर। अरे इस मर्द ज़ात को न कमी सूझती है न वेशी। ज़किया को देखा है तुमने? कैसी चाँद सी सूरत है। हज़ार-दो-हज़ार ख़ूबसूरतों में एक है। साँचे में ढली हुई। जो कोई देखे देखता ही रह जाये। और सुना है कि उसके मियाँ ने एक भिश्तिन से शादी कर ली। काली भुजंग, मोटी-ताज़ी पहलवान जैसी। मालूम हो जैसे हब्शिन। न बात करने का सलीक़ा, न पढ़ी-लिखी। और सूरत शक्ल तो जैसी है, मैं कह चुकी हूँ। मगर वह अल्लाह का बन्दा दिन-रात उसी के यहाँ पड़ा रहता है। और ज़किया बेचारी, जिसके लिये सब यही कहा करते थे कि मियाँ पैर धोकर पियेगा, अपनी क़िस्मत को पड़ी रोया करती है।"

रफ़्फ़ो ने कहा—"ऐसे मौक़ों पर तक़दीर का क़ायल होना पड़ता है।"

नाज़ो ने कहा—"नहीं जी, ये मर्द होते ही घिनावने हैं। जैसी रूह वैसे फ़रिश्ते। देख लेना जिन शकीला के हुस्न की बड़ी शोहरत है वह भी ऐसी ही कुछ निकलेगी।"

रफ़्फ़ो ने कहा—"मेरा तो ख़याल है कि मैंने उसको देख लिया है। परसों जब मैं क्लब की तरफ़ से वापस आ रही थी तो रिक्शा पर एक औरत क्लब के फाटक तक आई। नाटा क़द, फूले-फूले से उजड़े हुए बाल, साँवला रंग, मगर उस पर मेकअप ग़ज़ब का था। साड़ी बाँधे और हाथ में एक बेग लिये।"

नाज़ो बोली—"हाँ हाँ, वही होगी। फ़ैयाज़ साहब ने भी यही हुलिया उन मुसम्मात का बयान किया है। अब भला बताओ कि ऐसो कौन सी परी है।"

रफ़्फ़ो ने कहा—"मगर मुझे शक है। इसलिये कि शकीला के हुस्न की तो बहुत तारीफ़ सुनी है और यह औरत, जिसको मैंने देखा है, हुस्न के आस-पास भी नज़र नहीं आई।"

नाज़ो ने मुँह चिढ़ा कर कहा—"चलो हटो, हुस्न नहीं तो वह। अगर ऐसे भी ये मर्द आँख वाले होते तो अपनी बदमज़ाक़ियों के रोज़ नित्य नये नक्शे न पेश करते। उन लोगों के सर में न तो दिमाग़ होता है न चेहरे पर आँखें, बस सीने में दिल की जगह पत्थर रखे जिसकी क़िस्मत चाहते हैं फोड़ दिया करते हैं। ज़किया के मियाँ का क़िस्सा सुन ही चुकी हो। शमीम को भी तुमने देखा, जिनके मियाँ के पास वह औरत थी, मोटी छिपकली। सूरत देखकर मतली हो। लम्बी ताड़ ऐसी। और वह याद हैं तुमको डाक्टर सोहराब की बहन कुलसूम। हाय-हाय कैसी प्यारी सूरत थी। नाज़ुक-नाज़ुक सा नक्शा, नशे में चूर आँखें, गोरा और गुलाबी रंग, कामिनी-सी मूरत। सूरत देखकर प्यार आता था। मगर मियाँ कमबख्त ने जला-जलाकर मार डाला। एक औरत डाल ली थी। जो सुना है कि उनके ही किसी चपरासी की बीवी थी। थू थू। मतलब कहने का यह है कि इन मर्दों से ज़्यादा नाक़द्रा और कौन होगा। हीरे को हमेशा यह कमबख्त पत्थर तोड़ता है। कुलसूम ग़रीब जल-जल कर रही। आख़िर दिक़ हो गई और इसी कोफ़्त में दुनिया से रुख़्सत हो गई मगर मियाँ को राह-रास्त पर न ला सकी। हालाँकि सुना है बड़े चाव से शादी की थी। पहले ख़त चलते रहे, बड़ा इश्क़ बघारा गया। कुलसूम ने डाक्टर सोहराब से साफ़ कह दिया था कि मेरी शादी इनके साथ ही कर दो। एक दूसरी जगह बात ठहरी हुई थी। वहाँ से छुड़ा कर उनके साथ शादी की गई थी, जिसका यह नतीजा हुआ ?"

रफ़्फ़ो ने सब कुछ सुनकर कहा—"यह ठीक है, मगर बहन यह तो ऐसे न थे। कभी मैंने उनके बारे में इस तरह का शक नहीं किया।"

नाज़ो ने जलकर कहा—"बस तुम यही कहे जाओ ऐसे नहीं थे तो फिर आखिर ऐसे हो क्यों गये। मछली के बच्चे को तैरना कौन सिखाता है। यह कहो कि यह मर्द सब-के-सब बने बनाये ऐसे ही होते हैं। कुछ छिपे रुस्तम कुछ खुले काफ़िर। और जो इन बातों में नहीं हैं वह या तो फ़रिश्ते होते है या बीमार।"

रफ़्फ़ो को उस हालत में भी हँसी आगई—"तुम्हारा मतलब यह है कि खुदा न करे, मेरे मियाँ अब तक बीमार थे और अब खुदा ने उनको तन्दुरुस्त किया है।"

नाज़ो ने उसी गंभीरता से कहा—"मैं तो फ़ैयाज़ साहब से बराबर कहा करती हूँ कि या तुम बड़े ही चालाक हो कि अपनी कोई बात खुलने नहीं देते या तुम्हारी तन्दुरुस्ती ठीक नहीं रहती। वरना मुझे तो किसी मर्द का ज़रा-सा भी एतबार नहीं है। ये सत्तर हाँडियों का मज़ा चखने वाले निचले बैठ ही नहीं सकते।"

रफ़्फ़ो ने कहा—"खैर यह तो है, मगर अब यह बताओ कि क्लब के अन्दर के हालात कैसे मालूम किये जायें। बाहर-बाहर की सारी सुराग़-रसानी मैं करती रहती हूँ। मगर कोई ख़ास पता सिवाय इसके नहीं चला है कि वह दफ्तर से क्लब जाते हैं और क्लब से घर आ जाते हैं।"

नाज़ो ने कहा—"तरकीब बस यही है कि या तो तुम मेरे मियाँ को बुलाकर उनसे सारी बातें पूछ लिया करो या फिर अपने इरफ़ान को क्लब का मेम्बर बनवा दो।"

रफ़्फ़ो ने सोचते हुए कहा—"ठीक कहती हो। इरफ़ान दर असल मेरे रिश्ते के भाई हैं और मेरे मियाँ शायद उनको जानते भी नहीं हैं। इसीलिये मैंने उनको जासूसी पर मुक़र्रर किया था। अब मैं उनको

क्लब का मेम्बर बनवाने की कोशिश करती हूँ। तुम अपने मियाँ से उनकी सिफ़ारिश करा देना।"

इस बातचीत के दौरान में ही वहाँ चाय आ गई और अब हमारा ज़्यादा ठहरना भी मुनासिब न था, इसलिये खिसके वहाँ से।

११

इरफ़ान हमारे क्लब के मेम्बर बन चुके थे और फ़ैयाज़ की सलाह के अनुसार अब हम शकीला के साथ ज़्यादा रहने लगे थे। सब से अलग किसी कोने में बैठे शकीला के साथ दिमाग़ खपा रहे हैं और वह सर खा रही हैं। ऐसी अक़्लमन्द से, जो एक़बाल के हकीम होने का मतलब बनफ़शा और खत्मीवाली हिकमत समझ ले, क्या बात की जा सकती थी। मगर फ़ैयाज़ का हुक्म यही था कि हमेशा की ख़ुशी हासिल करने के लिये यह चन्द दिनों की कोफ़्त बरदाश्त करें। फ़ैयाज़ का कहना था कि इससे दो फ़ायदे होंगे। एक तो यह कि इरफ़ान के ज़रिये बेगम तक शकीला के क़िस्से पहुँचते रहेंगे, दूसरे शकीला से छुटकारे की सूरत भी यही है कि उससे भागने की जगह उससे घुल-मिल कर रहने की कोशिश की जाये। और जब बिल्कुल यह तय कर लिया जाये कि अब शकीला से कोई सरोकार नहीं रखना है तो बस उसी दिन इश्क़ ज़ाहिर कर दिया जाये। उसका नतीजा वही होगा जो रमेश का हो चुका है। चुनांचे इधर तो हम शकीला के साथ रहते थे

उधर इरफ़ान साहब बाक़ी मेम्बरों के बीच अजीब तफ़रीह का सामान बने हुए थे। बेचारे मौलवी क़िस्म के आदमी, नये-नये ग्रेजुएट। हाल ही में नहर के मुहकमे में न जाने किन साहब की अक्लमन्दी से आप को एक अच्छा ख़ासा ओहदा मिल गया था। न आदमियों में अब तक बैठे थे न सोसाइटी के तार तरीक़ों की जानकारी थी। कालिज में भी दीमक टाइप के लड़कों में गिने जाते थे जिनका काम सिवाय किताबें चाटने के और कुछ नहीं होता। ये लोग आदमी थोड़े ही होते हैं। इम्तहान पास करने की मशीन हैं कि उनको इम्तहान के कमरे में बिठाकर परचा दे दीजिये, यह सवाल हल करके नम्बर ले लेने के ज़िम्मेदार होते हैं। इसके अलावा न किसी से बात करने के क़ाबिल, न दुनिया के किसी मामले से इनको सरोकार।

ताश के खेलों में भी कभी-कभी ग़ुलाम चोर या ज़्यादा-से-ज़्यादा तुरुप खेला होगा। हालाँकि आज कल ताश के तमाम नये खेल कालिजों के होस्टल से निकलते हैं। मगर यह बेचारे तो महज़ विद्यार्थी थे। कालिज पढ़ने को जाते थे और वहाँ से आकर पढ़ा हुआ याद करते थे। उनको क्या पता था कि क़िस्मत में क्लब की मेम्बरी भी लिखी हुई है। मगर बहन की हमदर्दी से मजबूर थे। अब यह हाल था कि क्लब में हर चीज़से भड़कते थे। कोई आपसे बात करे तो किसी दूसरे की आड़ में आ जाते। ताश खेलने को कहा जाये तो अँगूठा चूसने लगें, शेर-शायरी की बात हो तो गुम-सुम बैठे रहें। सवाल यह था कि फिर आपने क्लब पर क्यों कृपा की? तो इसका जवाब खुद उनके पास भी न था। रमेश और इख़लाक़ उनको बेहद तंग किया करते थे। शायद फ़ैयाज़ ने रमेश और इख़लाक़ से सारा क़िस्सा बता दिया था। यही वजह थी कि जहाँ हम शकीला के साथ किसी तरफ़ गये, इरफ़ान के सामने ये सब मिलकर हमारे इस रोमान्स का ऐसा ज़िक्र छेड़ते थे कि बस जैसे हम दोनों की आजकल में ही शादी होने वाली है। इरफ़ान इस चर्चा को बड़ी दिलचस्पी से

सुनते थे और यही एक विषय ऐसा था कि यह कभी-कभी एकाध सवाल कर लिया करते थे, चाहे वह कैसा ही वेवक़ूफ़ी का क्यों न हो। शकीला से बहुत जलते थे। एक तो यह कि वह आपकी बहन की सौत होने वाली थी, दूसरे शकीला उनको छेड़ती भी बहुत थी। आज उसने इरफ़ान साहब को घेरकर आग्रह शुरू कर दिया कि आइये ताश खेलिये। इरफ़ान ने जब कहा कि मुझे खेल आता ही नहीं तो उसने कहा—"कोई मुश्किल नहीं है। मैं थोड़ी ही देर में सिखा दूँगी।"

इरफ़ान ने एक तरफ़ सिमटते हुए कहा—"कौन-सी अच्छी बात है जो सीखी जाये।"

शकीला ने कहा—"अच्छा तो फिर हम दोनों गुड़ियाँ खेला करें यहाँ।"

इरफ़ान तो शर्मा कर चुप हो रहे और बाकी लोग हँस दिये। इख़लाक़ ने कहा—"सचमुच इरफ़ान साहब, हम लोग बेहद शर्मिन्दा होते हैं कि आख़िर आपके लिये दिलचस्पी का क्या सामान जुटायें। ताश आप नहीं खेलते, बिलियर्ड टेबुल पर आप नहीं जाते, टेनिस से आपको दिलचस्पी नहीं। अगर किसी ख़ास खेल या किसी ख़ास तफ़रीह की ज़रूरत हो तो बतला दीजिये।"

इरफ़ान ने पहले तो जवाब देना ही न चाहा, इसके बाद बड़ी मुश्किल से सिर्फ़ इतना कहा—"जी नहीं, बस काफ़ी है।"

शकीला ने उनकी तरफ़ ग़ौर से देखते हुए कहा—"क्या मतलब हुआ आपका? क्या चीज़ काफ़ी है?"

इख़लाक़ ने कहा—"आपका मतलब शायद यह है कि आपके लिये फ़िलहाल यही काफ़ी है कि आप दूसरों की दिलचस्पियों को देखते रहें। दिलचस्पी हासिल करने का एक तरीका यह भी है कि किसी का घर जले और कोई तापे।"

इरफ़ान ने जल्दी से कहा—"जी नहीं, मेरा मतलब यह है कि खैर कुछ नहीं।"

रमेश ने कहा—"आखिर इसमें शर्म की कौन-सी बात है। कह दीजिये न, आपकी उम्र अब शर्माने-लजाने की तो है नहीं। माशा-अल्लाह खुद समझदार हैं। अपनी बुराई-भलाई को समझ सकते हैं।"

फ़ैयाज़ ने कहा—हाँ, हाँ, माशाअल्ला समझदार और बालिग़ तो हैं।"

इरफ़ान का शर्म के मारे या गुस्से से चेहरा सुर्ख हो गया। उसने उसने एक बार हिम्मत करके न जाने क्या कहना चाहा, मगर कहा सिर्फ़ यह कि "मैं ताश-वाश का खेलना पसन्द नहीं करता।"

शकीला ने कहा—"यह तो मालूम हुआ, मगर सवाल यह है कि फिर आप पसन्द क्या करते हैं।"

रमेश ने कहा—खैर यह बात आप न पूछिये। न जाने क्या कह बैठें।"

इस पर सब को एकदम हँसी आ गई तो इखलाक़ ने कहा—"आखिर आप लोगों को इरफ़ान साहब की दिलचस्पी की ऐसी खोज क्यों है। हर आदमी ज़ाती तौर पर अपनी दिलचस्पी हासिल करने के तरीक़े जानता है।"

हमने कहा—"तरीक़ों से बहस नहीं, लेकिन अगर दिलचस्पी का पता चल जाता तो अच्छा था।"

शकीला ने कहा—"जी नहीं, बहुत सी दिलचस्पियाँ ऐसी होती हैं जिनमें किसी और का हिस्सा लेना गवारा नहीं किया जा सकता।"

रमेश ने कहा—"मसलन....।"

फ़ैयाज़ बोले—"आप ही शौकी और शकीला के मेल-जोल को देखें—हम अगर अर्ज़ करेंगे तो शिकायत होगी।"

शकीला ने कहा—"मिस्टर फ़ैयाज़, आप अब ज़ाती हमला कर रहे हैं। शौकी मेरा दोस्त है और मैं आज़ाद हूँ कि अपने दोस्त के

साथ दोस्ती करूँ। इसमें किसी को शिकायत का क्या मौक़ा है।"

फ़ैयाज़ ने कहा—"किसी और को तो क्या, आप ही की शिकायत पैदा हो गई। बहरहाल मैं यह अर्ज़ कर रहा था कि आप उनकी दिलचस्पी में हिस्सा लेने पर क्यों तुली हुई हैं।"

शकीला ने कहा—"कोई ज़बरदस्ती थोड़े ही है। अगर इरफ़ान साहब ख़ुद हिस्सा देंगे तो ले लिया जायगा नहीं तो इनको एख़्तियार है। हमारा क्या इजारा"

इरफ़ान ने हिम्मत करके कह ही दिया—"मेरी दिलचस्पी यही है कि आप सब की दिलचस्पियाँ देखता रहता हूँ।"

इख़लाक़ ने कहा—"क्या ख़ूब शेर कहा है आपने—

हम देखने वालों को नज़र देख रहे हैं।"

रमेश ने इरफ़ान के पास खिसकते हुए कहा—"अच्छा यह बताइये इरफ़ान साहब कि आपको कभी किसी से इश्क़ हुआ है।"

इस बेतकल्लुफ़ सवाल पर सब को हँसी आगई। और इरफ़ान सच कुछ लड़कियों की तरह शर्माकर फ़ैयाज़ के पीछे छिपने की कोशिश करने लगे। शकीला ने रमेश को डाँटा—"यह क्या बेहूदा सवाल है। वह बेचारे क्या जानें ये बातें। इनकी तालीम आप लोगों की तरह नहीं हुई कि जिसे देखिये मजनूँ और फ़रहाद बना फिर रहा है।"

रमेश ने कहा—"माफ़ कीजियेगा। मुझे नहीं मालूम था कि इसकी तालीम में आपका भी हाथ है।

अब फिर एक ज़ोर का ठहाका लगा और इरफ़ान ने वहाँ से जाने की कोशिश की तो इख़लाक़ ने उनको रोका—"यह आप जा कहाँ रहे हैं? अरे भई तुम तो सचमुच लड़कियों की तरह शर्माते हो। आख़िर यह क्या हरकत है। पढ़-लिख कर कालिज से निकल आये, सरकारी ओहदेदार हो और यह हाल है?"

शकीला ने कहा—"तो सरकारी ओहदेदार के लिये आख़िर यह तो ज़रूरी नहीं कि वह इश्क़ भी करता फिरे।"

रमेश ने कहा—"मगर यह तो गोया ज़रूरी है कि वह लड़कियों की तरह बात-बात पर दुपट्टे से मुँह छिपाये, लजा जाये शर्म से बल खा जाये।"

इख़लाक़ ने इरफ़ान को अपने क़रीब बैठाते हुए कहा—"अब आपको चाहिये कि यह बचपन छोड़ें और एक ज़िम्मेदार इन्सान की तरह ज़रा रख-रखाव से रहें। अगर आपका यही हाल है तो समझ में नहीं आता कि आप अपनी सरकारी ज़िम्मेदारियों को कैसे पूरा करते होंगे। इस तरह तो आपके मातहत आपको उँगलियों पर नचाकर रख देंगे और आपके अफ़सर आपके बारे में न जाने क्या-क्या राय क़ायम करते होंगे।"

इरफ़ान ने इख़लाक़ को सचमुच बड़ा हमदर्द समझकर कहा—"जी हाँ। मगर....।"

रमेश ने कहा—"मगर शर्म आती है।"

शकीला ने डाँटा—"यह क्या हरकत है मि० रमेश आपकी। वह बेचारा एक सीधा-सादा आदमी है तो आप उसको बराबर छेड़ रहे हैं।"

रमेश ने कहा—"लीजिये जनाब, अब तो मैं कह सकता हूँ कि डाक्टर शकीला की इस तरफ़दारी में मुझे वफ़ा की बू आ रही है। आप लोगों का क्या ख़याल है?"

सब लोग हँस दिये, मगर शकीला ने फिर डाँटा—"रमेश तुम सचमुच पागल होते जा रहे हो। मैंने तुम्हें हज़ार मरतबा समझाया है कि तुमको बात करना नहीं आती तो चुप रहा करो।"

रमेश तो शकीला के सिलसिले में बेग़ैरत हो ही चुके थे, तुरन्त बोले—"मैं इसलिये चुप नहीं रहता कि फिर जो बात करनी आती है वह भी भूल जाऊँगा।"

इख़्लाक़ ने इरफ़ान को उसी तरह समझाते हुए कहा—"आख़िर आपको दुनिया के किसी मशग़ले से दिलचस्पी है, कभी कोई खेल खेला है ?"

इरफ़ान ने सोचते हुए कहा—जी हाँ, मुझे कुछ दिलचस्पी शिकार से रही है।"

फ़ैयाज़ ने कहा—"ख़ैर, इससे तो आप हम जानवरों को बचाये रखिये, और फ़रमाइये कुछ।"

इरफ़ान ने कहा—"और कभी-कभी शतरंज खेल लिया करता था।"

शकीला ने जैसे उछल कर कहा—"आई लव इट। मुझे बेहद पसन्द है। इख़्लाक़, वाक़ई शतरंज का इन्तज़ाम कर दो। मैं इरफ़ान के साथ खेला करूँगी।"

इख़्लाक़ ने कहा—"बहुत अच्छा। शतरंज का तो मैं इन्तज़ाम कर दूँगा, मगर अब मैं आपको राय दूँगा कि आप कभी-कभी ताशों से भी जी बहला लिया कीजिये। दूसरी बात यह है कि आपस में हँसा भी कीजिये। यह आपकी शर्म व हया कैसी ही शरीफ़ाना सही, मगर आप फिर भी मर्द हैं।"

रमेश ने हँसी के मारे लोट कर कहा—"इस फिर भी की दाद नहीं दी जा सकती। खूब कहा है कि आप फिर भी मर्द हैं।"

इस मौक़े पर शकीला को भी हँसी आगई और उसने बात टालने के लिये कहा—"यह रमेश सचमुच पागल होने वाला है। निहायत ख़तरनाक आसार हैं। ज़रा देखिये तो सही, कैसा पागलों की तरह हँस रहा है।"

रमेश ने हँसी पर क़ाबू पाते हुए कहा—"देखिये आप ने फिर मुझसे इस अन्दाज़ की बातें करना शुरू कीं। मुझे फिर कुछ-कुछ मुहब्बत की ग़लतफ़हमी हो जायगी।"

शकीला ने कहा—"ग़लत फ़हमी क्या, यह तो असलियत है।

मुहब्बत तो मैं तुमसे अब भी करती हूँ, मगर साथ-ही-साथ यह भी दुआ करती हूँ कि कहीं तुम न मुहब्बत करने लगो।"

इख़लाक़ कहने लगा—"हाँ तो मैं यह कह रहा था इरफ़ान साहब कि आप क्लब के मेम्बर बने हैं तो क्लब की दिलचस्पियों में भी हिस्सा लें। एक तो यह क्लब योंही ख़ुश्क क़िस्म का क्लब है। यहाँ की पहली शर्त यह है कि शराब पीने वाले क्लब के मेम्बर नहीं हो सकते। इसी लिये इस क्लब को कोई ख़ानक़ाह कहता है, किसी ने गर्ल्स स्कूल का नाम दे रखा है। सिविल-सर्विस वाले इसको यतीमख़ाना कहते हैं। मुख़्तसर यह कि महज शराब का 'बार' होने की वजह से इतने नाम रखे जाते हैं। अब अगर आपकी तरह चन्द मेम्बर और भी हो गये तो शायद इस क्लब का नाम हरमसराय हो जायगा। आज मेहरबानी करके आप ताश का खेल सीखिये, और ज़रा मुँह से बोला कीजिये न।"

रमेश ने कहा—"अब तो आपको कई दिन हो चुके। आख़िर यह शर्म व हया तो नई नवेली दुल्हनें भी चन्द दिन के बाद छोड़ देती हैं।"

इख़लाक़ ने ताश की गड्डी सँभालते हुए कहा—"बस अब हो चुकी शर्म। आज ही आप शुरू कीजिये। इन्शाअल्लाह चन्द दिनों में ही आप हमारे क्लब के सबसे बड़े ताश खेलने वाले मेम्बर होंगे।"

इरफ़ान कुछ हिचकिचाये, कुछ इनकार करने का इरादा किया। मगर जब इख़लाक़ ने उनको रमी का सबक़ देना शुरू किया तो एक फ़रमाँबरदार लड़के की तरह बैठ कर सीखने भी लगे।

—:६:—

१२

ख़ुदा बचाये इस कमबख़्त फ़ैयाज़ से। न जाने किस वक्त वह बातें सोचा करता है जो कम-से-कम हमारी समझ में तो नहीं आ सकतीं। बैठे बिठाये कहने लगा एक दिन—

"सुना है तुमने वह मिसरा—

शिकार करने को आये शिकार होके चले।"

हमने ताज्जुब से कहा—"क्या मतलब?"

कहने लगा—"मैं यह सोच रहा हूँ कि आपके यह साले इरफ़ान साहब जो हैं, इनका क्या बन्दोबस्त किया जाये?

हमने और भी ताज्जुब से कहा—"कैसा बन्दोबस्त। आख़िर आप पहेलियाँ क्यों बुझा रहे हैं। साफ़-साफ़ क्यों नहीं कहते, क्या बात है?"

फ़ैयाज़ ने कहा—"भई वह तुम्हारी बीवी की तरफ़ से तुम्हारी जासूसी करने के लिये क्लब का मेम्बर बना है न।"

"हाँ हाँ, तो फिर?"

"फिर यह कि उसे भी तो कुछ सज़ा या मज़ा मिलना चाहिये।"

"तो क्या करने वाले हैं आप उसके साथ?"

"इरादे तो बहुत कुछ हैं। मगर इन्सान का हर इरादा पूरा नहीं हुआ करता। फ़िलहाल तो यह ख़याल है कि क्यों न उसका शकीला से इश्क़ लड़ा दिया जाये। वह भी क्या याद करेंगे कि गये थे नमाज़

बख़्शवाने, रोज़े गले पड़ गये।"

मैंने सँभल कर बैठते हुए कहा—"यार है तो बड़ी दिलचस्प तरकीब। और तुम्हारी मामूली-से-मामूली तरकीब भी वह ख़तरनाक रंग लाती है कि मैं क्या कहूँ।"

फ़ैयाज ने बहुत ग़ौर करते हुए कहा—"अब मुझे सिर्फ़ यह सोचना है कि अगर इरफ़ान को शकीला की तरफ़ भेज देता हूँ तो उसका कोई असर असल मामले पर न पड़ेगा। यानी अगर वह इश्क़ में पड़ गये तो ज़ाहिर है कि सुराग़रसानी और जासूसी के कमाल ज़रा कम पेश कर सकेंगे। हलाँकि इस वक़्त इसी की ज़रूरत है कि ये हज़रत अपनी आपाजान को रोज़ की ख़बरें पहुँचाते रहें ताकि हमारी खिचड़ी इसी रफ़्तार से पकती रहे जिस रफ़्तार से पक रही है।"

हमने कहा—"यार एक बात बताओ कि यह खिचड़ी तुम कब तक पकाओगे। मेरा ख़याल है कि अगर रफ़ो को इस वक्त मालूम हो जाये कि मैं महज़ ताश खेलता हूँ और बाक़ी तमाम बातें ग़लत हैं तो वह निहायत ख़ुशी के साथ ताश खेलने की इजाज़त दे देंगी।"

फ़ैयाज़ ने दाँत पीसकर कहा—"घामड़, गाओदी, यार तुम मेरे सामने से हट जाओ, सख्त ग़ुस्सा आ रहा है। न हुए तुम मेरी औलाद। ख़ुदा की क़सम इतना मारता, इतना मारता कि आइन्दा के लिये सारी नस्ल गंजी हो जाती। हज़ार मर्तबा कह चुका हूँ कि भाई, जब तुम्हारी समझ में एक बात आही नहीं सकती तो बिला वजह टाँग न अड़ाया करो। तुम दरअसल इन पेचीदा गुत्थियों को सुलझा ही नहीं सकते। इसके लिये ज़रूरत होती है दिमाग़ की। तुम्हारे दिमाग़ में एक तो पहले ही घास भरी हुई थी और उसको भी तुम्हारी बेगम साहबा इस हद तक चर गई हैं कि अब तुमसे किसी समझदारी की उम्मीद कम-से-कम मुझको तो हो नहीं सकती।"

हमने कहा—"और मेरा ख़याल यह था कि अब भेद खोलने का वक़्त आ चुका है।"

फ़ैयाज़ ने ग़ुस्से से दाँत पीसकर कहा—"आपका ख़याल ख़ाम है, आपकी अक़्ल ख़राब है और आप पूरे चुग़द हैं। यह आख़िरी बार आपको समझा रहा हूँ। इसके बाद आपको मालूम होना चाहिये कि यही स्कीम आपके गले इस बुरी तरह पड़ेगी कि फिर क़ियामत तक सफ़ाइयाँ पेश करते रहना, मगर जान न बचेगी।"

हमने फ़ैयाज़ की ख़तरनाकी का ख़याल करते हुए कहा—"ख़ुदा के लिये मेरे हाल पर तरस खाओ। मैं तुम्हारी हरकतों को ख़ूब समझता हूँ। यह तुम्हारे बायें हाथ का खेल है कि इसी मज़ाक़ को संजीदा बनाकर मेरी ज़िन्दगी को दुशवार बना सकते हो।"

फ़ैयाज़ ने फिर अपनी नार्मल हालत पर आकर कहा—"बस तो फिर जो कुछ मैं कह रहा हूँ उसको महज़ ग़ौर से सुना करो। अपनी ज़ंग लगी अक़्ल को बीच में लाने की कोशिश कभी न करो और इस बात को गाँठ में बाँध लो कि तुमने अगर मेरी सलाह के बग़ैर जान बूझकर या अनजाने में कभी इस राज़ को खोलने की कोशिश की तो ऐसी जगह मारूँगा जहाँ पानी भी न मिले। और वही जो आपकी बेगम साहबा हैं न, आपके लिये मौत के फ़रिश्ते का काम देंगी।"

हमने कानों पर हाथ रखकर कहा—"अच्छा भाई अच्छा, वायदा करता हूँ कि तुम्हारे हुक्म के बग़ैर चूँ तक न करूँगा।"

फ़ैयाज़ ने विचारकों और नेताओं की तरह पहले आस्मान की तरफ़ देखा, दाँतों में उंगली दबाई, कुछ मुँह टेढ़ा किया, एकाध बार हाथ चलाये और फिर इस तरह कहना शुरू किया मानो कोई देवता बोल रहा हो—"क़िस्सा असल यह है कि वह जो तुम्हारा साला इरफ़ान है उसके आस-पास क्या दूर-दूर तक इश्क़ के कीड़े नहीं नज़र आते। इश्क़ करने वालों में जो एक ख़ास चुग़दपना होता है वह तो ख़ैर उसमें पैदायशी तौर पर है मगर इसके साथ-ही-साथ इश्क़ करने वालों के लिये दूसरी जो बातें ज़रूरी हैं उसका उनके यहाँ ज़िक्र नहीं। इश्क़ की फ़्लासफ़ी को मेरे ख़याल में तुम ख़ुद भी नहीं समझ सकते

हो यह कुछ एलेक्ट्रिसिटी टाइप की चीज़ है, यानी निगेटिव और पॉज़ि-टिव। दो तरह के तारों का मिलना करन्ट पैदा करने के लिये जरूरी होता है। इसी तरह इश्क़ के लिये काबलियत और हिमाक़त दोनों का होना ज़रूरी है। अगर हिमाक़त-ही-हिमाक़त है तो आदमी बेवकूफ़ बनकर रह जाता है, अगर क़ाबिलियत ही क़ाबिलियत है तो आदमी या तो पढ़ लिखकर वकील या बैरिस्टर हो जाता है और न पढ़ सका तो पुलिस में भरती हो जाता है। लेकिन अगर यह दोनों खूबियाँ बराबर मौजूद हैं तो उसका आशिक़ होना ज़रूरी है। आपके इन साले साहब के बारे में मैं इस नतीजे पर पहुँचा हूँ कि यह जिस आसानी से आपके साले बन गये उसी मुश्किल के साथ किसी को अपना साला बनायेंगे।"

हमने फ़ैयाज़ की बातों के बेतुकीपन से तंग आकर कहा—"खुदा के लिये मेरे हाल पर रहम करो। तुम क़ाबिलियत बघार रहे हो और मेरा दम निकला जा रहा है।"

फ़ैयाज़ एक दम बरस पड़ा—"क़ाबिलियत बघार रहा हूँ क्या मानी? आपको मालूम होना चाहिये जनाब वाला कि आपका यही ख़ाकसार अपने नौ दोस्तों का घर बरबाद कर चुका है। ज़रा से चुट-कुले में तो मियाँ-बीवी में तलाक़ की नौबत आ जाती है। इसलिये आप इस तरह की बातें न किया कीजिये। हाँ, तो आपके साले की बात हो रही थी। मुझको बस एक यही फ़िक्र है कि हिमाक़त और क़ाबि-लियत का तवाज़ुन (सन्तुलन) कैसे बराबर करूँ। शकीला के अन्दाज़ से तो यह मालूम होता है कि वह उनकी तरफ़ बड़ी आसानी से अपना दिल उछाल सकती है। इसलिये फ़िलहाल आपके साले को न छेड़ा जाये बल्कि शकीला को ही इस बात के लिये तैयार किया जाये कि वह उनके इश्क़ में मरना शुरू करदे। खुदा की ज़ात से उम्मीद तो यह है कि अगर ये साहबज़ादे जैसा कि तुम कहते हो, सचमुच बालिग़ हो चुके हैं इनपर ज़रूर असर होना चाहिये। और अगर ऐसा न हुआ तो

फिर अल्लाह मालिक है। असर पैदा करायेंगे। हम खुद तो बहुत कम आशिक़ हुए हैं मगर खुदा झूठ न बुलावाये, इन्हीं हाथों से सैकड़ों आशिक़ निकल चुके हैं। भानमती साहब क़िबला हमारे खास बुज़ुर्गों में से थे जिनके बारे में आपने सुना होगा कि—कहाँ की ईंट कहाँ का रोड़ा, भानमती ने नाता जोड़ा। तो मैं यह कह रहा था कि आजकल के नौ जवानों में इश्क़ की रूह फूँकना कुछ ऐसा ज़्यादा मुश्किल काम नहीं है। शकीला तो इश्क़ के मामले में एवरेडी टाइप की औरत है। अगर आपके साले साहब क्लब में लोगों की चोटें कुछ दिनों सह गये तो फिर बचकर कहाँ जाते हैं। इस सब के लिये ज़रा वक़्त और इत्मीनान की ज़रूरत है। आपने अगर जल्दबाज़ी से काम लेने की कोशिश की तो मेरी यह शानदार स्कीम मेरा तो कुछ बिगाड़ेगी नहीं, आप ही को ले डूबेगी।"

हमने बड़ी श्रद्धा से कहा—"मुरशिद! मैं तो अपनी क़िस्मत आपको सौंप ही चुका हूँ। अलबत्ता सिर्फ़ यह चाहता हूँ कि मरने से कुछ देर पहले मेरे और बीवी के बीच सफ़ाई हो जाये तो अच्छा है।"

फ़ैयाज़ ने उसी गम्भीर स्वर में कहा—"तुम चूँकि सतही इन्सान हो इसलिये तुम्हारी यह ख्वाहिश है। अगर ज़रा भी गहराई में जाते तो तुम कभी ज़िन्दगी में सफ़ाई की तमन्ना न करते। ज़रा सोचो तो कि जब तुम मरोगे और एकाएक तुम्हारी बीवी को खबर होगी कि उनके मरहूम शौहर के बारे में जो बातें मशहूर थीं, वह कितनी ग़लत थीं तो वह कैसा तड़प-तड़प कर रोयेंगी। एक-एक से बयान करेंगी कि हाय मरते दम तक अपनी खूबियाँ छिपाईं, अपनी पाक-बाज़ियाँ कभी न खुलने दीं, अपनी नेकियों पर हमेशा पर्दा डाला। सुनने वाले सुनेंगे और कहेंगे कि जन्नती लोग ऐसे ही होते हैं। हो सकता है कि इसी सिलसिले में तुम्हारा उर्स होने लगे, क़ौवालियाँ हों, चादरें चढ़ें, गागरें उठें और औरतें अपने बदमाश शौहरों को तुम्हारी क़ब्र की खाक तबर्रुक (प्रसाद) समझकर चटाया करें, मन्नतें मानें कि या

शौहर शाह अगर मेरा मियाँ राह रास्त पर आगया तो मैं चादर चढ़ा-ऊँगी, तेल और गुड़ के गुलगुले लेकर निहायत भयानक आवाज के क़ौवालों के साथ आपके मज़ार तक आऊँगी।"

हमने हँसते हुए कहा—"मसखरे, अब अपना यह स्वाँग खतम भी करेगा या नहीं। मेरा मतलब तो सिर्फ़ यह है कि अपनी स्कीम को इतना न बढ़ाओ कि समेटने में मुद्दत लग जाये।"

फ़ैयाज़ ने बेपरवाही से कहा—"क्या बच्चों की-सी बातें करते हो। यह तो अपने हाथ का काम है। जहाँ पर कहो क़िस्सा खतम कर दिया जाये। लेकिन मैं चाहता हूँ कि इरफ़ान और शकीला के इश्क़ की दिलचस्पियाँ भी दिखलाऊँ तुमको। मैं कल ही क्युपिड के तर्कश का एक तीर इरफ़ान के लिये ज़ाया करूँगा। अच्छा भाई अब तुम घर जाओ। मैं निहायत खामोशी के साथ अपनी स्कीम पर ग़ौर करना चाहता हूँ। किसी बेवक़ूफ़ आदमी की मौजूदगी में अक्ल की बातें ठीक से नहीं सोची जा सकतीं। आदाब अर्ज़।"

१३

इरफ़ान साहब हमारे यहाँ किस वक़्त जाते थे, किस वक़्त अपनी बहन को रिपोर्ट देते थे और किस वक्त हमारे ख़िलाफ़ साज़िशें होती थीं, यह सारी बातें हम से बहुत छिपाई जाती थीं, पर हम भी ताक में तो थे ही। इरफ़ान शायद यह समझते थे कि सिर्फ़ वही अपने दफ्तर से छुट्टी पर हैं हालाँकि हम भी दफ़्तर बस इसी हद तक जाते थे कि घर

से तो निकले दफ़्तर जाने के लिए और घूम कर उस कमरे में जा बैठे जहाँ से नाज़ों और रफ़्क़ो की बातें सुन चुके थे। आज भी हमारे दफ़्तर जाने के लिए घर से निकलते ही इरफ़ान साहब आ गए। हमने अपने कमरे से सुना, कि इरफ़ान ने आते ही अपनी बहन से पूछा—
"भाई साहब गए दफ़्तर ?"

बेगम ने कहा—"जी हाँ तशरीफ़ ले गये। दफ़्तर भी वह पता नहीं किस मजबूरी से जाते हैं अगर घर पर टेलीफ़ोन लगा दिया जाय तो शायद दफ़्र भी न जायें। खैर तुम अपनी कहो। कुछ पता चला कि यह शादी कब तक हो रही है ?"

इरफ़ान ने रूमाल से पसीना पोंछते हुए कहा—"आपा मैं सच कहता हूँ एक ही छटी हुई है यह औरत भी। जितनी ऊपर नज़र आती है उसकी दुगुनी शायद ज़मीन के नीचे है। क्लब के जितने मेम्बर हैं सब को उँगलियों पर नचा के रख देती है। भला ग़ज़ब खुदा का, मुझे भी आप छेड़ना चाहती हैं। मुँह झाड़ सर पहाड़। न बात करने का सलीक़ा न शरीफ़ बहू बेटियों के ढङ्ग। बस, सूरत देख के तो मैं आप से सच कहता हूँ, यह हाल होता है जैसे चाय की प्याली में मक्खी पड़ गई हो। मगर हमारे भाई साहब को खुदा जाने क्या हो गया है कि जब देखिये उसकी दुम के पीछे लगे हुए हैं। कल फ़ालसाही रंग की बनारसी साड़ी बांधे हुए आप तशरीफ़ लाईं। चेहरे के ऊपर इतना ज़्यादा पौडर घुमा हुआ था जैसे खमीरी रोटी में फफूँद लग गई हो। मगर ठस्सा ऐसा था जैसे सब को मार ही तो डालेंगी। भाई साहब ने पहले तो आँखों-ही-आँखों में उनकी बलाएँ लीं, उसके बाद भी जब न रहा गया तो सबके सामने ही कह दिया—'शकीला बड़ी अच्छी मालूम हो रही हो।' और उस कम्बख़्त को देखिये कि शर्माने की जगह आप ने अंग्रेज़ी में फ़रमाया—"क्या वाक़ई ? खुदा की क़सम हरएक उनकी बातों पर हँसता है। मगर उनको किसी की परवाह थोड़े ही है। खुल्लम-खुल्ला हाथ-में-हाथ डाले इधर-से-उधर फिरा करती है। अरे

साहब, मैं आप से क्या कहूँ कल भाई साहब ने उसको ऐसी-ऐसी क़समें देकर आइसक्रीम खिलाई है कि आप की तो उम्र भर इतनी खुशामद न की होगी।"

बेगम ने ठन्डी साँस भर कर कहा—"मेरी खुशामद क्यों करते भइया। मैं भी कोई सोसाइटी 'बटर फ्लाइ' होती या अल्लाह न करे मेरी भी वही हालत होती जो शकीला की है, कि आज इसके हाथ-में-हाथ, कल उसके हाथ-में-हाथ, तो मेरी भी क़द्र की जाती। मगर मैं तो उनकी खि़दमत के लिए दी गई हूँ न। मेरा काम तो सिर्फ़ यह है कि मैं उनकी इज़्ज़त-आबरू लिए बैठी रहूँ और वह अपनी शराफ़त उछालते फिरें।"

हम खा़मोशी से ये बातें सुन रहे थे और ताज्जुब भी कर रहे थे कि यह इरफ़ान जो सब के सामने बिल्कुल गूंगा भी नज़र आता है और बेयकूफ़ी तो उस वक्त की बातचीत से भी ज़ाहिर थी मगर साथ-ही-साथ यह भेद भी खुल रहा था कि यह हज़रत चालाक भी हैं। मसलन फ़ालसाही रंग की साड़ी देख कर हमारे तारीफ़ करने वाली बात सर से पैर तक ग़लत थी। आइसक्रीम वाला क़िस्सा भी सफ़ेद झूठ था। कई बार सोचा कि कमरे से निकल कर ज़रा इन हज़रत से पूँछूँ तो सही कि क्यों बे झूठे यह क्या हरकत है? मगर फिर ख़याल आया कि इस तरह की ज़िम्मेदारी लेने के बाद लोग अपनी कारगुज़ारी इसी तरह दिखा सकते हैं। दूसरे उनकी इन बातों से हमारी स्कीम गोया और भी क़ामयाब हो रही थी। बेगम को सिर्फ़ यह मालूम करने की फ़िक्र थी कि आख़िर शादी की बात कहाँ तक सही है। और अगर शादी होने वाली है तो कब तक, और यह हज़रत असल बात छोड़, अपनी बात को मज़ेदार बनाने के लिए झूठ का नमक-मिर्च लगा रहे थे। ज़ाहिर है कि यह तो कह नहीं सकते थे कि क्लब में जाकर साँप सूँघ जाता है, ग़ैर लोगों के सामने शर्मा कर रह जाता हूँ। उनको तो हर हालत में अपनी क़ाबलियत का सिक्का दिखाना था। ख़ैर, वह तो

सोलह आने बेवकूफ़ थे ही मगर अब बेगम साहेबा की बेवक़ूफ़ी में भी कोई शक नहीं रहा था। जिन्होंने अपने काम के लिए इरफ़ान जैसे अहमक़ को चुना जो अपनी बहन के सामने पूरी ऐक्टिंग के साथ फ़रमा रहे थे—"अरे आपा, तुम्हारी क़सम एक-से-एक बेहया पड़ा है वहाँ। तौबा-तौबा, काश वह खेलें और वह भी रुपये लगाकर जूए की तरह। मुझसे भी एक साहब ने कहा कि तुम भी ताश सीख लो तो मैंने कानों पर हाथ रख कर कहा—बख़्शो बी बिल्ली, चूहा लंडूरा ही भला।"

बेगम ने इस बात को कोई अहमियत न देते हुए कहा—"ख़ैर ताशों में तो कोई हर्ज नहीं है। मर्द यही सब किया ही करते हैं। कोई घुड़दौड़ जाता है, कोई ताश खेलता है, किसी को सिनेमा का शौक़ है। इन बातों की तो जो रोकथाम करे वह बेवक़ूफ़ है।"

इरफ़ान ने बिल्कुल ज़नाने अन्दाज़ में कहा—"मर्दों का तो ख़ैर वह काम भी है जो भाई साहब कर रहे हैं। रह गया जूए के लिए आप का यह कहना कि इसमें कोई हर्ज नहीं तो यह मेरी समझ में नहीं आया। अब तक तो हमारे ख़ानदान में जुआरी हुआ नहीं अब यह नई बातें हो रही हैं।"

बेगम ने बड़ी माक़ूल बात कही और ख़ुदा की क़सम तबीयत ख़ुश कर दी। बोलीं—"भईया अब वह ज़माना नहीं रहा है कि जूए को जूआ समझा जाय। अब तो यह पढ़े लिखे और ऊँची सोसाइटी के लोगों की एक तफ़रीह बन गया है जिसे बुरा नहीं समझा जाता।"

इरफ़ान ने बड़ी-बूढ़ियों की तरह कहा—"अच्छी तफ़रीह है। इस का मतलब तो यह हुआ कि वह अगर आप से जूआ खेलने के लिए रुपया माँगे तो शायद आप रुपया उठा कर भी दे दें।"

बेगम ने कहा—"बेशक दे दूँ, इसलिए कि रुपया माँगना उनकी शराफ़त है। नहीं तो वह बग़ैर माँगे जो चाहे कर सकते हैं। कमाई आख़िर किसकी है? जो आदमी मेहनत करके कमा सकता है वह अपनी तफ़रीह पर ख़र्च करने का हक़ भी रखता है।"

इरफ़ान ने निराश हो कर कहा—"बस तो फिर ख़ुदा ही मालिक है इस घर का। जिस घर में जूते वाली मनहूसियत पहुँची उस घर का पनपना कोई आसान बात नहीं और फिर जब आप का यह हाल है तो आपको भाई साहब से शिकायत आख़िर क्या है?"

बेगम ने अपने गाउदी भाई को समझाते हुए कहा—"मैं उनकी हर बात बर्दाश्त कर सकती हूँ। तफ़रीह तो मैं ख़ुद चाहती हूँ कि वह करें। रुपये की मेरी नज़रों में कोई क़ीमत नहीं है। लेकिन मेरी सबसे क़ीमती चीज़ तो वह ख़ुद हैं और मैं किसी क़ीमत पर उनको छोड़ने को तैयार नहीं हूँ। शकीला मुझसे जो चाहे ले ले, मेरे गहनों का एक-एक तार, मेरे बैंक का एक-एक पैसा, मेरे घर की एक-एक चीज़ मगर उनको मेरे लिए छोड़ दे।"

इरफ़ान ने एकदम जोश के साथ कहा—"अजी उसकी ऐसी-तैसी। बल्कि मुझे आप पर भी ग़ुस्सा आ रहा है। जब भाई साहब को आप की परवाह नहीं है तो न हो। वह एक नहीं पाँच शादियाँ करें। क्या आपके बाप के पास आपको उम्र भर बिठाकर खिलाने के लिए कोई कमी है!"

बेगम ने जोश के साथ और शायद अपने ग़ुस्से को दबा कर कहा—"बस इरफ़ान बस, मैं इस तरह की बातें तुम से क्या अब्बाजान से भी सुनना पसन्द न करूँगी।"

हमको इस बात चीत से यह महसूस हो रहा था कि जैसे अपनी तन्दुरुस्ती सुधारने के लिए गुलमर्ग की किसी वादी में आये हुए हैं। इरफ़ान ऐसे बेवक़ूफ़ की बातों का बुरा मानना किसी समझदार आदमी का काम नहीं हो सकता। और इस सिलसिले में बेगम के शरीफ़ाना ख़यालात और जज़बात सुनने-देखने के बाद अगर हम यह कहें कि हम फूले नहीं समाते थे तो शायद ग़लत न होगा। जी चाहता था कि इसी वक़्त कमरे से निकल कर बेगम के क़दमों पर जा गिरें।

लेकिन फ़ैयाज़ का भूत हर बार निगाहों का सामने आकर आँखें दिखाता था कि खबरदार जो आगे क़दम बढ़ाया।"

यह भी सही है कि फ़ैयाज़ ने जो कुछ कहा था वह सोलह आने दुरुस्त मालूम हो रहा था। बेगम हमारे क्लब जाने और जूआ खेलने को सिर्फ़ इसलिए बुरा नहीं मान रही थीं कि उन्हें हमसे इससे कहीं बड़ी बुराई का डर पैदा हो गया था।

इरफ़ान साहब इस वक़्त झाड़ खाने के बाद ऐसे चुप हो कर बैठ रहे थे कि हमें यक़ीन हो गया, कि अब वह कोई और बात नहीं करेंगे। हमारा जी चाहता था कि अभी जाकर फ़ैयाज़ को सारी बातें सुनाकर उससे कहें कि क्या इतनी अच्छी बीवी पर यह सब ज़ुल्म तोड़ना कमीनापन नहीं। मगर दफ़्तर पहुँचना ज़्यादा जरूरी था इसलिए हम चुपके से बाहर आये और दफ़्तर के लिए रवाना हो गए।

—०—

१४

फ़ैयाज़ ने क्युपिड के तरकश का वह तीर, जिसे इरफ़ान पर ज़ाया करने को कहा था, जाया कर दिया था। और पता नहीं शकीला या इरफ़ान दोनों में से किसी एक को या दोनों को अलग-अलग क्या यही पढ़ा दी थी कि आजकल इरफ़ान और शकीला की बहुत गाढ़ी छन रही थी। इरफ़ान की वह कहानियों वाली शर्म तो धीरे-धीरे दूर हो चली थी पर जो ज़नानापन उनके स्वभाव में था वह अपनी जगह

वैसा ही बना था। शकीला से आज तक तो सब लोग यह समझ-कर मिल लेंगे कि वह एक औरत है और मर्द का फ़र्क़ अपनी जगह पर क़ायम रहा होगा। मगर इरफ़ान शायद उसको अपनी गोइयाँ समझ कर मिल रहे रहे थे। लॉन के जिस कोने में शकीला उनको लेकर बैठती थी उसका नाम क्लब के मेम्बरों ने 'लेडीज़ कार्नर' रख छोड़ा था। रमेश कहा करता था कि अब तक तो क्लब में सिर्फ एक ही औरत थी पर अब इरफ़ान के कारण दो नज़र आने लगीं। एख़-लाक इन दोनों के मेल से बेहद खुश था। उनका खयाल यह था कि क्लब के मेम्बरों को एक ही समय में इन दोनों मुसीबतों से छुटकारा मिल गया। फ़ैयाज़ अपनी कामयाबी पर बेहद खुश थे और उनको खुश होना भी चाहिए था क्योंकि इश्क़ के लिए उन्होंने इरफ़ान ऐसे जानवर को सधा लिया था। एक दिन इरफ़ान और शकीला को लान के बिल्कुल आख़री कोने पर बातें करते देख फ़ैयाज़ साहब के चेहरे पर कामियाबी की चमक पैदा हुई तो हमने उनसे कहा—"यार फ़ैयाज़, तू एक सरकस क्यों नहीं खोलता ?"

फ़ैयाज़ ने एकदम चौंककर कहा—"सरकस ?"

हमने फिर ज़ोर देकर कहा—"हाँ, हाँ सरकस। क़सम खुदा की बड़े फ़ायदे की चीज़ है, और तू इस लाइन में इतना कामियाब रहेगा कि जिस तनख्वाह की आजकल नौकरी कर रहा है न, उसी तनखाह के नौकर खुद रख सकेगा।"

फ़ैयाज़ ने हमको सिर से पैर तक ताज्जुब से देख कर कहा—"तबीयत तो अच्छी है आपकी ? यह आखिर बैठे-बैठे आप बहकी-बहकी सी बातें क्यों करने लगते हैं ?"

हमने उसके कन्धे पर थपकी देते हुए कहा—"नहीं यार सचमुच तुझको जानवरों को साधने में जो कमाल हासिल है उसका तक़ाज़ा यही है कि इस काबलियत से कुछ फ़ायदा उठाओ। अगर तुम इरफ़ान को इश्क़ करना सिखा सकते हो तो बन्दर को सलाम करना, भालू

को हुक्का पीना, गधे को कुर्सी पर बैठना और बनमानुस को हाथ मिलाना बहुत आसानी से सिखा लोगे।"

फ़ैयाज़ हंसकर बोले—"अच्छा यह बात है। मगर अब मेरी यह स्कीम ज़रा बदल गई है अब तक तो यह मज़ाक़ था पर अब मैं यह सोच रहा हूँ कि हम लोगों की उम्र महज़ दिल्लगी की नहीं है। कुछ-न-कुछ ठोस क़िस्म का काम भी करना चाहिये। क्यों न इरफ़ान और शकीला की शादी करा दी जाय।"

हमने एकदम चौंककर कहा—"अईं; शादी कैसे हो सकती है?"

फ़ैयाज़ ने निहायत लापरवाही से कहा—"जैसे शादी हुआ करती है। भई! आख़िर इसमें तवालत क्या है? इरफ़ान की अब तक शादी नहीं हुई है। शकीला भी कुवांरी है। लड़का मेरे नज़दीक अभी तक सँभला हुआ है, लड़की भी जहाँ तक मेरा ख़्याल है अभी तक महफ़ूज़ है। आँख का पानी जरूर मर गया है मगर मोती का आब शायद अभी बाक़ी है। अगर शकीला ने यह आब भी खो दी तो यह कोई अच्छी बात न होगी।"

हमने झुँझला कर कहा—"आप क्या दुनिया भर के ठीकेदार हैं, ख़ुदाई फ़ौजदार हैं, आख़िर क़िस्सा क्या है?"

हमसे चुप रहने का इशारा करके बड़े रोब के साथ कालर को पकड़कर गर्दन हिलाते हुए फ़ैयाज़ ने कहा—"तुम समझते नहीं हो। इसमें ठीकेदारी या ख़ुदाई फ़ौजदारी की बात नहीं है बल्कि दूसरी बातों के साथ-साथ यह भी एक बात है जो मेरे दिमाग़ में चक्कर लगा रही है यह तो आपको मालूम ही है कि मेरे दिमाग़ में ग़लत बातें ज़रा कम आती हैं।"

हमने फ़ैयाज़ को समझाते हुए कहा—"इन मामलों में तुम न पड़ना।"

फ़ैयाज़ ने बात काटकर कहा—"क्यों, आख़िर क्यों न पड़ूं इस मामले में?"

हमने ऊँच-नीच समझाने के इरादे से कहना शुरू किया—"बात यह है कि दोनों घरानों के ख़यालात और रहन-सहन में कितना फ़र्क है, आपको शायद इस बात का पता नहीं है। दूसरे आपको यह भी पता नहीं कि ये दोनों एक-दूसरे के कितने क़रीब आए हैं...........।"

फ़ैयाज़ ने हमारी बात काटकर कहा—"यार एक बात बताओ यह जो तुम्हारी खोपड़ी में अक़्ल है वह तुमने कहीं से सेकेन्ड हैन्ड में तो नहीं ख़रीदी है। मेरा तो ख़याल है कि तुम्हारे दिमाग़ का एक-आध पुर्ज़ा ढीला है या कहीं गिर गया। इस लड़ाई के ज़माने में अब वह पुर्ज़े मिल भी नहीं सकते। अरे अक़्ल के दुश्मन! अगर यह दोनों इतने ही समझदार होते तो आपस में इश्क़ क्यों करते। जो लोग दूसरों के उकसाने पर एक-दूसरे से मुहब्बत कर सकते हैं, वह यक़ीनन इस क़ाबिल नहीं हो सकते कि अपने बारे में कोई संजीदा फ़ैसला कर सकें।"

हमने जल कर कहा—"और तमाम संजीदा फ़ैसले करने के लिए गोया आपने ठीका ले लिया है।"

फ़ैयाज़ ने सिग्रेट केस पर तबले की कोई गत बजाते हुए कहा—"भाई साहब, मैं ख़ुदा की तरफ़ से अन्धों के शहर में आइना बेचने के लिए नहीं आया हूँ बल्कि चाहता यह हूँ कि जहाँ तक मुझसे हो सके इन अन्धों को रास्ता बताता रहूँ। आप मेरी इस स्कीम को शायद इस लिए अहमक़ाना समझ रहे होंगे कि ख़ुद निहायत आला दर्जे के अहमक़ हैं। मगर मैं आपको यक़ीन दिलाता हूँ कि यह बड़ी ही फड़कती हुई जोड़ है। न शकीला को अपनी टक्कर का ऐसा बेवक़ूफ़ शौहर मिल सकता है जैसा कि इरफ़ान है न इरफ़ान को अपने पाए की ऐसी बेवक़ूफ़ बीवी मिल सकती है। अब चाहे वह इरफ़ान के सामने ज़िन्दगी भर एक़बाल को हकीम कहती रहे तो भी किसी को शिकायत का मौक़ा नहीं। आपने शायद इस बात पर ग़ौर नहीं किया है कि शकीला एक समझदार क़िसम के शौहर की बीवी बनकर क़यामत तक नहीं रह सकती।

मियाँ बीवी के बारे में सतरह बास की छानबीन के बाद मैंने जो चार्ट बनाया है उसको अगर आप देखें तो आँखें खुल जायँ। उस चार्ट के मुताबिक शकीला को लाजमी तौर पर इरफ़ान की बीवी होना चाहिये। शकीला की तबीयत ऐसी है कि वह मुहब्बत करना चाहती है और उस आदमी से भागती है जो उससे मुहब्बत करे। इरफ़ान मरते-मरते मर जायेंगे पर उनमें कभी यह हिम्मत नहीं होगी कि वह अपनी मुहब्बत ज़ाहिर कर सकें इसलिए इस हैसियत से तो दोनों की निभ जायेगी ही। दूसरी बात यह है कि शकीला को एक शौहर चाहिये जो उसकी अह-मक़ाना बातों को समझने या न समझने के बारे में घबराहट में कोई फ़ैसला न कर सके। यह घबराहट आप के साले को इतनी ज़्यादा मिली है कि वह इससे माला-माल नज़र आते हैं। फिर यह दूसरों की भलाई का काम भी है। यानी शकीला से किसी अच्छे-खासे समझदार मर्द को और इरफ़ान से किसी भली और समझदार लड़की को बचाना। अगर यह दोनों शादी करके आपस में एक दूसरे से गुथ गये तो एक लड़का और एक लड़की गोया एक बहुत बड़ी मुसीबत से बच जायेंगे। लड़का जो शकीला का शौहर बनने से बचा और लड़की वह जो इर-फ़ान की बीवी बनने से बची। अब तुम इसको चाहे जो कुछ समझो लेकिन मैं इसे बहुत बड़ा काम समझता हूँ।"

हमने हार मानते हुए कहा—"अच्छा साहब अच्छा, आप जो कुछ फ़रमा रहे हैं वह सवा सोलह आने ठीक है। मगर मैं सिर्फ़ यह चाहता था कि आप मेरे बारे में भी कुछ फ़रमा देते। यह तो मैं आपसे कह चुका हूँ कि मेरी बीवी को मेरे ताश खेलने पर कोई एतराज़ नहीं है। यह भी आपको मालूम हो चुका है कि वह मेरी दिलचस्पी को पसन्द कर सकती हैं। फिर आखिर उनको जो सज़ा दी जा रही है उसकी कोई मीयाद भी है या नहीं।"

फ़ैयाज़ ने बहुत बड़े जज के अन्दाज़ में कहा—"यह बिल्कुल ग़लत है। मैं आपसे कई बार कह चुका हूँ और फिर कहता हूँ कि इन

बातों को समझने की क़ाबिलयत आपके इस बड़े सरवाली छोटी-सी अक़्ल में मुशकिल से ही पैदा हो सकती है। इस वक्त आपकी बीवी का हाल बिल्कुल उस माँ का-सा है जिसका निहायत अवारा बच्चा बीमार पड़ गया है और मरने के करीब है। अब वह गिड़गिड़ा कर यह दुवाएँ माँग रही है कि या अल्लाह यह अवारा हो कर ही जीए, यह बदमाश होकर ही जिन्दा रहे। लेकिन उसका यह मतलब नहीं है कि वह उसकी आवारगी और बदमाशी को बर्दाश्त किये लेती है, बल्कि वह तो महज़ बुरा वक्त टाल रही है। मौत के मुँह से जिस वक्त लड़का निकल कर फिर बदमाशी करेगा तब वह फिर उसके ख़िलाफ़ हो जायगी। अगर जनाब ने इस वक़्त अपनी बीवी को बता दिया कि यह सब क़िस्सा झूठा है, न कोई शादी हो रही न कोई सवत आ रही है तो वह यक़ीनन बहुत खुश होंगी। लेकिन आपका नतीजा कुछ अच्छा नहीं होगा। वह फिर अपनी माँगें घुमा-फिरा कर आपसे मनवाना चाहेंगी और जिस आज़ादी के लिए आपने इस वक्त जो जंग लड़ी है वही आज़ादी तावाने जंग के तौर पर उनके सुपुर्द करना पड़ेगी।"

हमने कुछ न समझते हुए कहा—"भाई साहब सवाल तो यह है कि जो झगड़ा आपने फैलाया है उसको समेटना आख़िर आप कब शुरू करेंगे?"

फ़ैयाज़ ने कहा—"मैंने जो तरीक़ा अपनाया है उससे हालात अपने आप सुधर जायँगे। अब दरअसल मुझे या तुमको कुछ करना धरना नहीं है, बल्कि अपने को हालात के हाथों सौंप कर यह इन्तज़ार करना है कि वह खुद कब असलियत को ढूँढने के लिए निकलती हैं और कब ढूँढ़ती हैं। इस बीच में हमारा काम सिर्फ़ यह रह जाता है कि हम दूसरी छोटी-छोटी बातों को जहाँ तक हो सके दिलचस्प और साथ-ही-साथ अगर आसानी से हो सके तो फ़ायदेमन्द बनाते चलें। मसलन, शकीला और इरफ़ान के क़िस्से को ले लीजिये। देखने में

यह क़िस्सा आपके आपके असल मामले से अलग नज़र आता है मगर हालात साबित करेंगे कि यह भी उस सिलसिले की एक बहुत अहम कड़ी है। मेरा या आपका या किसी और का आपकी बीवी पर इस राज़ को खोलना उतना ही नुक़सान देह है जितना खुद उनका इस राज़ की तह तक पहुँचना फ़ायदेमन्द हो सकता है और देख लीजियेगा कि वह बहुत जल्द अपने आप इस तह तक पहुँच जायेंगी!"

हमने फ़ैयाज़ की सब बातें मानते हुए कहा—"खुदा करे ऐसा ही हो। मगर अब तो तबियत उलझ कर रह गई है।"

शकीला और इरफ़ान उसी तरफ आते हुए दिखाई दिए इस-लिए हम लोगों ने बात-चीत को यहीं ख़तम कर दिया।



१५

बेगम साहेबा को अपने प्यारे भाई इरफ़ान की हिमाक़तों का पूरा एहसास था और शायद यही वजह थी कि उन्हें इरफ़ान की तरफ़ से पूरा इतमीनान न था। नाज़ों के आने-जाने का सिलसिला बराबर जारी था। कभी बेगम साहेबा उनके यहाँ चली गईं और कभी वह हमारे यहाँ आ गईं। फ़ैयाज़ से इस तरह की सारी ख़बरें हमको मिल जाया करती थीं और हम उसी प्रोग्राम के मुताबिक कभी फ़ैयाज़ के यहाँ पहुँच जाते थे कभी खुद अपने घर के उस कमरे में जहाँ से हम हमेशा यह

साज़िशी बातें सुना करते थे। आज नाज़ो हमारे घर आई हुई थीं और बेगम उनसे सर जोड़कर बहुत ही अहम सलाह मशविरे कर रही थीं। हम अपने उसी कमरे में एक ट्रंक पर बैठे हुए खामोशी से सब बातें सुन रहे थे।

बेगम की आवाज़ सुनाई पड़ी—"बात यह है बहन, कि मुझे इस इरफ़ान की तरफ़ से कुछ इतमीनान नहीं है। एक तो परले सिरे का बेवकूफ़, दूसरे आला दर्जे का झूठा। न जाने कितनी बातें सच कहता है कितनी बातें झूठ। मैं तो सिर्फ़ यह चाहती थी कि मुझे क्लब का हाल मालूम होता रहे। मगर इरफ़ान ने यह तरीक़ा अपना रक्खा है कि लगातार उनकी तरफ़ से बहकाने और भड़काने में मसरूफ़ है।"

नाज़ो ने कहा—"यह तुमने कैसे समझ लिया कि वह तुमको बहकाने और भड़काने की कोशिश कर रहा है। हो सकता है कि जो कुछ वह कहता हो वही सच हो। भड़काने या बहकाने से आख़िर उसको फ़ायदा क्या। और यह तुम कैसे समझ सकती हो कि वह झूठ बोल रहा है।"

बेगम ने नाज़ो को समझाया—"अरे तुम्हें मालूम नहीं कि इरफ़ान की बचपन से लेकर इस वक़्त तक की एक-एक हालत मेरी नज़र के सामने से गुज़री है। झूठ वह इरादा करके नहीं बोलते बल्कि यह उनकी एक ख़ास अदा है। और पहचानने वाले फ़ौरन पहचान लेते हैं कि कौन-सी बात उन्होंने सच कही है और कौन सी झूठ। सच बोलते वक़्त उनकी हालत में कोई ख़ास तबदीली नहीं होती, लेकिन जहाँ से झूठ शुरू करते हैं, अजीब-अजीब लच्छन ज़ाहिर होते हैं। मसलन कुछ हकलाना शुरू कर देते हैं, आँखें जल्दी-जल्दी खोलते और बन्द करते हैं, नथुने फुला लेते हैं, दाहिनी कनपटी फड़कने लगती है............।"

नाज़ो को बड़े ज़ोर से हँसी आ गई और बड़ी मुश्किल से हँसी पर क़ाबू पाकर बोली—"बड़ी-बड़ी पहचानें तुमने उसकी मौकरए कर

रक्खी हैं। मगर मैं तो यह पूँछती हूँ कि आखिर उसको इस सिलसिले में झूठ बोलने की जरूरत ही क्या है?

बेगम ने कहा—"ज़रूरत? यह ज़रूरत क्या कम है कि इस तरह से वह गोया मुझको खुश करके शाबाशी पाना चाहते हैं।"

नाज़ो ने कहा—"फिर आखिर क्या सूरत निकाली जाय।"

बेगम ने जैसे एक फ़ैसला कर लेने के बाद कहा—"सूरत अब सिर्फ़ यही है कि मैं फ़ैयाज़ भाई को बुलवाती हूँ और उनकी हर तरह खुशामद करके उन्हें अपना राज़दार बनाने की कोशिश करूँगी।"

नाज़ो ने जैसे सोचते हुए कहा—"भाई तुम समझ लो। ऐसा न हो कि वह खफ़ा हो जायँ कि मैंने तुमसे यह सब क्या कहा।"

बेगम ने पर्चा लिखते हुए कहा—"वह खफ़ा नहीं होंगे। इसकी ज़िम्मेदार मैं हूँ। अभी यह पर्चा भेजवाए देती हूँ। अगर घर पर हुए तो फ़ौरन आ जायेंगे।"

बेगम ने पर्चा लिखकर तुरन्त नौकर के हाथ फ़ैयाज़ के घर भेज दिया। और इस बीच में वहाँ तो चाय पानी शुरू हो गया। ज़्यादा देर न हुई थी कि फ़ैयाज़ की मोटर की आवाज सुनाई दी। इसलिए हम लपक कर फिर अपनी जगह पर पहुँच गए।

फ़ैयाज़ ने अन्दर आते हुए दूर से कहा—"आदाब अर्ज़ करता हूँ भाभी। यह आज मेरी तलबी हुई क्यों आप के हुजूर में।"

बेगम बोलीं—"आप तो शायरी के मूड में हैं। मैंने तो आपको इसलिए बुलाया था कि आपसे कुछ जरूरी बातें करूँगी।"

फ़ैयाज़ ने कहा—"खैरियत तो है?"

बेगम ने कहा—"जी हाँ, आप खैरियत न पूछेंगे तो कौन पूछेगा।"

फ़ैयाज़ ने बनते हुए कहा—"खुदा की क़सम मैं बिल्कुल समझा नहीं आपकी बात।"

बेगम ने कहा—"मामला तो खैर आप जानते हैं और उसको बढ़ाने में आपका पूरा न सही कुछ हाथ तो ज़रूर है।"

फ़ैयाज़ ने फिर उसी तरह बनते हुए कहा—"मैं अब भी नहीं समझा आपका मतलब !"

बेगम ने कहा—"फ़ैयाज़ भाई, देखिए अब छिपाने से कोई फ़ायदा नहीं। आपको मालूम है कि आपके क्लब में आजकल क्या खेल-खेला जा रहा है। मुझे यह भी पता है कि अपने दोस्त के मुक़ाबिले में आप की हमदर्दियाँ हमारे साथ हैं फिर भी मुझे आप से यह शिकायत है कि आपने अब तक मुझसे यह सब छिपाने की कोशिश की।"

फ़ैयाज़ ने रंगे हाथों पकड़े गए चोर की तरह पहले तो घबराने की ऐक्टिंग की फिर जैसे लाचार हो कर कहा—"साहब बात असल में यह है कि मैं ज़रा इन मामलों से दूर ही रहना पसंद करता हूँ। मियाँ-बीवी का झगड़ा ही क्या। आँखों के एक इशारे और होठों की एक मुस्कुराहट से बड़ी-बड़ी खाइयाँ पाट दी जाती हैं मगर बीच में पड़ने वालों का गला ख़ामख़ाह में कटता है। उन हज़रत को अगर ख़बर हो गई तो वह यही कहेंगे कि मेरी बीवी को भड़काया। आपसे कुछ नहीं कहता हूँ तो आप कहती हैं कि मैं जुर्म को छिपा रहा हूँ। ऐसी हालत में क्या यह नहीं हो सकता कि आप मेरे हाल पर रहम खायें और मुझसे कुछ न पूछें।"

बेगम ने फ़ैयाज़ को क़ायल करते हुए कहा—"देखिये भाई साहब कुछ न कहने की सूरत में भी आप कह तो सब कुछ गये। आपकी बात-चीत से कम-से-कम यह तो मालूम ही हो गया कि इस क़िस्से का सारा हाल आपको मालूम है फिर इसको छिपाने की कोशिश सिवाय अक़्लमन्दी के और क्या कही जा सकती है। मुझे सारे हालात ख़ुद मालूम हैं मगर मैं आपको अपना भाई समझकर आपसे सिर्फ़ इतनी हमदर्दी चाहती हूँ कि आप मुझको क्लब के अन्दरूनी हालात की ख़बर देते रहें ताकि जो कुछ होने वाला है वह कम-से-कम मेरे जानते में हो।"

फ़ैयाज़ ने शरारत के साथ हँसते हुए कहा—"ख़ैर, भाई बनाने की तकलीफ़ तो कीजिये नहीं। मैं भाई बनकर ऐसी अच्छी भाभी से

हाथ नहीं धो सकता। एक मर्द की इससे बढ़कर और क्या बदनसीबी हो सकती है कि वह दुनिया की तमाम हसीन औरतों का भाई बनकर रह जाय। मैं इस घाटे के लिए तैयार नहीं। हाँ, अगर आप इस तकलीफ़देह क़िस्से को जानने के लिए ऐसी ही बेचैन हैं, तो जो कुछ आप पूछियेगा, बताता रहूँगा। लेकिन एक बात फिर अर्ज़ कर दूँ कि आपके शौहर साहब मेरे बहुत ही गहरे दोस्त हैं और मैं इस तरह गोया उनकी नाराज़ी मोल ले रहा हूँ। जहाँ तक आपसे हो सके मेरे और उनके ताल्लुक़ात को खराब न होने दीजिये। आगे आपको अख़्तियार है।"

बेगम ने छूटते ही सवाल किया—"अच्छा अब यह बताइये कि आपकी नई भावज कब तक आ रही हैं और यह शादी आखिर कब तक हो जायेगी।"

फ़ैयाज़ ने मानो अपने उपर बहुत जबरदस्ती करके कहा—"भाभी क्या बताऊँ, कुछ कहा नहीं जाता और बिना कहे रहा नहीं जाता। मैंने इस सिलसिले में जहाँ तक मुझसे हो सकता था हर तरह रुकावट पैदा करने की कोशिश की। आपके मियाँ को समझाया, शकीला को डराया धमकाया, उसके बाप को न जाने क्या-क्या पट्टी पढ़ाई, ज़ात-बिरादरी का सवाल पैदा किया पर कोई कामियाबी नहीं सकी। शकीला उनके लिए सब कुछ छोड़ने के लिए तैयार है और आपके शौहर तो, माफ़ कीजियेगा अव्वल दर्जे के बेवक़ूफ़ हैं। जब मैंने उनको बहुत समझाया तो आख़िरी बात उन्होंने यह कही कि भाई शकीला मुझे नहीं छोड़ सकती यूँ चाहे मुझे सारी दुनिया छोड़ दे। उनकी दलील यह है कि मैं उसको कैसे छोड़ सकता हूँ जबकि वह मेरे लिए सब कुछ छोड़ने के लिये तैयार है। और भाभी मैंने अन्दाज़ा किया है कि सचमुच वह कम्बख़्त तो कुछ दीवानी-सी हो गई है। मैंने तो उससे यहाँ तक कहा कि भाई अगर तुझे इश्क ही करना है तो मैं मौजूद हूँ। मेरी बीबी मुझे निहायत आसानी से इजाज़त दे देगी।"

नाज़ो ने चमककर एकदम कहा—"अरे सुना कि नहीं, ज़रा हवास ठिकाने रखना। संजीदा बातों में मज़ाक़ मुझे अच्छा नहीं लगता है। चले हैं वहाँ से इश्क़ फ़रमाने मैं कोई रफ़्फ़ो तो हूँ नहीं फिर घर में बैठी टिसवे बहाती रहूँ। क्लब में पहुँच के उस कुतिया की ऐसी ख़बर लूं कि सूरत भी न पहचानी जाय।"

फ़ैयाज़ ने मुँह चिढ़ाते हुए कहा—"ऐसी ही तो आप रुस्तमे हिन्द हैं। क़सम ख़ुदा की अगर वह एक हाथ रसीद करे तो आप उन्नीस क़लाबाज़ियाँ खा जायँ। ये तमाम हौसले उसी वक़्त तक हैं जब तक मैं ज़रा शराफ़त से काम ले रहा हूँ। अभी अगर संजीदगी से किसी और का शिकार हो जाऊँ तो बेगम साहेबा की तबीयत लाफ़ होकर रह जायेगी।"

बेगम ने इस बात चीत को बेकार समझ कर कहा—"आप दोनों मियाँ-बीवी तो घर पर जाकर तफ़सील से लड़ियेगा। इस वक़्त तो मुझे यह बताइये कि आख़िर आपके दोस्त का प्रोग्राम क्या है, यानी शादी के बारे में क्या तै हुआ है?"

फ़ैयाज़ ने कहा—"मुझे सचमुच कुछ नहीं मालूम। आप यक़ीन जानिए कि मैं उन दोनों के इस मेल-जोल से इतना घबराता हूँ कि मुझे शकीला से तो ख़ैर नफ़रत थी ही, आपके मियाँ साहब से भी कोई लगाव बाक़ी नहीं रहा। हाँ शकीला के बाप से यह पता ज़रूर चला था कि दिसम्बर की छुट्टियों में शायद यह शादी हो जायेगी बशर्ते कि आप के मियाँ ने फ़िरोज़ाबाद वाली कोठी और बाग़ शकीला के नाम लिख दिया।"

नाज़ो ने ताज्जुब से कहा—"फ़िरोज़ाबाद वाली कोठी और बाग़! उस पर उनका क्या हक़ है? वह तो रफ़्फ़ो की मिलकियत है न?"

बेगम ने इसको मामूली बात समझकर कहा—"ख़ैर यह तो कोई बात नहीं। अगर वह महज़ जायदाद के लिए ही उनसे शादी करना चाहती

है तो मैं बड़ी ख़ुशी के साथ उसके नाम लिखने को तैयार हूँ। मगर सवाल तो यह है कि आपके दोस्त ने इसका क्या जवाब दिया है?"

फ़ैयाज़ ने बिना किसी झिझक के एक दम यह शान्दार झूठ बोल दिया—"जायदाद लिखने को तो तैयार हैं मगर फ़िरोज़ाबादवाली नहीं बल्कि लखनऊ वाली जो ख़ुद उनकी है। इसलिए कि शायद इस सिलसिले में वह आप का एहसान नहीं लेना चाहते। मगर शकीला के बाप की कोशिश यही है कि फ़िरोज़ाबाद वाली जायदाद के बदले में लखनऊ वाली जायदाद तो लिख दी जाय आप के नाम और फ़िरोज़ाबाद वाली जायदाद शकीला को इसलिए दे दी जाय कि वहाँ से क़रीब ही मैनपुरी में उनका असली वतन है। तो अब यह समझिये कि इस मामूली सी बात की वजह से मामलात ज़रा गड़बड़ में पड़े हुए हैं वरना अब तक यह शादी हो चुकी होती।"

बेगम ने फ़ैयाज़ को पान दिया और पान खाते ही फ़ैयाज़ को न जाने क्या सूझी कि उसने बेगम से कहा—"भाभी आप मुझे फ़िरोज़ाबाद वाली जायदाद के कागज़ात ज़रा दिखाइये तो।"

यह सुनते ही हमारा दम निकल गया। इस लिए कि यह काग़ज़ात उसी कमरे में, बल्कि उसी बक्स के अन्दर बन्द थे जिस पर हम बैठे हुए यह सारी बातें सुन रहे थे। अब सवाल यह था कि भागें तो कहाँ और छुपें तो कहाँ। कमरे के बाहर माली पानी दे रहा था। दूसरे दर्वाज़े से बेगम तशरीफ़ लाने वाली थीं। सोचने का वक़्त न था। घबरा कर हम उस कोने में छिप गये जहाँ खस की टट्टियों के पीछे मकड़ियों ने बहुत महफ़ूज़ जगह समझ कर हज़ारों जाले तान रक्खे थे। शुक्र है कि हमारे छिपते ही बेगम कमरे में आईं और काग़जात बक्स खोल कर निकाल ही रही थीं कि हमारा पैर एक टिन के डिब्बे पर इस तरह पड़ा कि हम तो खैर दम साध कर रह गये मगर बेगम 'उ-उ' का नारा बुलन्द कर के उछल पड़ीं। फ़ैयाज़ और नाज़ो घबरा कर दौड़ पड़े कि क्या क़िस्सा है। बेगम ने दोनों को इतमीनान दिलाते हुए

कहा—"कुछ नहीं, इन कम्बख़्तों के मारे नाक में दम है। एक से एक आदम क़द चूहा मरा पड़ा है। कम्बख़्त चूहेदान तक तो घसीट कर ले जाते हैं। बिल्ली पाली थी उसको भी कम्बख़्तों ने मार भगाया।

यह आदम क़द चूहा चुपचाप अपनी तारीफ़ सुनता रहा और बेगम काग़ज़ात लेकर बाहर निकल गईं। अब हम उस कमरे में न ठहर सके। जाले न जाने कहाँ-कहाँ चिपक गए थे और मकड़ियाँ सपरिवार हमारे जिस्म पर जगह-जगह चहल क़दमी कर रही थीं। हमने झाँककर माली को देखा और जब वह नज़र न आया तो चुपके से एक तरफ़ को रेंग गए।

१६

क्लब का वातावरण आजकल कुछ अजीब-अजीब सा था। फ़ैयाज़ अपनी जगह पर डिक्टेटर बने हुए थे। हम एक अजीब कश-मकश में थे कि देखें हमारा ऊंट किस करवट बैठता है। एख़लाक़ और रमेश वग़ैरह ख़ामोश तमाशाइयों में थे। शकीला और इरफ़ान का तो पूछना ही क्या। शकीला पर तो कोई ताज्जुब नहीं, पर इरफ़ान को देख-देख कर ताज्जुब भी होता था और हँसी भी आती थी और फ़ैयाज़ की जादूगरी का क़ायल होना पड़ता था कि इस बंजर भूमि में भी इश्क़ का पेड़ उगा दिया। कौन सोच सकता था कि इरफ़ान साहब कभी रूमान के पास भी फटक सकते हैं। मगर वहाँ तो दोनों ने इश्क़

में ऐसी संजीदगी दिखलाई थी कि लैला-मजनू और शीरीं-फ़रहाद उनके सामने मात थे।

शकीला खुल्लम-खुल्ला सबसे कह चुकी थी कि वह इरफ़ान को हर तरह समझ चुकने के बाद इस नतीजे पर पहुँच गई है कि इरफ़ान उसकी जिन्दगी का एक अनिवार्य अंग है। और उसने अपना यह फ़ैसला भी हर एक को सुना दिया था कि ज़िन्दगी के इस दौड़ में बिना इरफ़ान के वह एक क़दम भी आगे नहीं बढ़ सकती। फ़ैयाज़ साहब तो ऐसे मौक़ों की तलाश में ही रहते हैं। खुदाई फ़ौजदार जो ठहरे। फिर इरफ़ान और शकीला का यह इश्क़ तो गोया उनकी ही कोशिशों का एक कामयाब नतीजा था। आप इन दोनों के 'गार-जियन' बने हुए थे। मशविरे दे रहे हैं, डांट रहे हैं, चेतावनियाँ दे रहे हैं, तमाम ऊँच-नीच समझा रहे हैं, सारांश यह कि दोनों के फ़ैयाज़ साहब बुज़ुर्ग बने थे और यह दोनों फ़ैयाज़ साहब के मुरीद। इरफ़ान इस सिलसिले में 'हाँ' तो नहीं कहते थे पर 'नहीं' कहना ही हाँ का दर्जा रखता है। उनकी मसल तो वही थी कि 'मन चाहे मुड़िया हिलाए।'

आज भी क्लब में हम लोगों ने इधर-उधर से लोगों को पकड़ कर अपनी,रमी का कोरम पूरा कर लिया। इन तीनों को देखा कि हम सब से बहुत दूर एक तरफ़ कुर्सियाँ डाले अपनी कानफ़्रेन्स करते रहे। आख़िर रमेश से न रहा गया तो उसने कह ही दिया—"भई यह ग़लत है। बेहद जी चाह रहा है कि इन लोगों की बातें सुनी जाय। शकीला और इरफ़ान तक की कानफ़्रेंस तो बर्दाश्त की जा सकती थी मगर यह फ़ैयाज़ साहब आख़िर क्या कर रहे हैं? मैं तो ज़रूर सुनूँगा कि ये लोग आपस में क्या बातें कर रहे हैं।"

ख़ैरियत यह थी कि इरफ़ान, शकीला या फ़ैयाज़ हम लोगों के बिल्कुल सामने नहीं थे वरना वे हमारा यहाँ से उठना देख लेते।

रमेश के आग्रह पर हम सबके सब उन के क़रीब पहुँच कर आड़ ले कर खड़े हो गए और उनकी बातें सुनने लगे।

फ़ैयाज़ कह रहे थे—"आप तो हैं बेवक़ूफ़ ? खान बहादुर साहब को आखिर क्या इनकार हो सकता है। दूसरे जब मैं यह कह चुका कि उनको समझाने की ज़िम्मेदारी मेरी है तब फिर आपका दम क्यों निकला जा रहा है।"

शकीला ने कहा—"फ़ैयाज़ साहब मैं तो खुद कहती हूँ, आप समझाइये। मगर आप यह जो कह रहे हैं कि शादी के बाद समझा लिया जायेगा बस यही मेरी समझ में नहीं आता।"

फ़ैयाज़ ने फिर दलील के साथ कहना शुरू किया—"देखिये साहब, या तो यह तै कर लीजिए कि आप मुझसे ज़्यादा अक़लमन्द हैं। वरना जो कुछ मैं कह रहा हूँ, कीजिये। आपके अब्बाजान के लिये तो सिर्फ़ इतना काफ़ी है कि गोया आप शादी कर रही हैं चाहे आपका शौहर कोई भी गदहा हो। वरना क़ायदे से तो उनको आपसे शादी की उम्मीद ही न करनी चाहिये। इसको यूँ समझिये कि यह तो एक तरह का एहसान है जो आप उन पर और अपने खानदान पर इस शादी के सिलसिले में करेंगी। इसमें बुरा मानने की बात नहीं, जो आज़ादी आपको हासिल है उसके बाद उनको अपनी नाक की तरफ़ से किसी वक़्त भी कोई इतमीनान न होना चाहिये।

शकीला ने बुरा मानने का इरादा किया ही था कि फ़ैयाज़ ने फिर डांटा—"पहले पूरी बात सुन लो इसके बाद त्यौरियों पर बल डालना। मैं एक सच्ची बात कह रहा हूँ जो हमेशा कड़वी होती है। तो मैं यह कह रहा था कि अब किसी से पूछने-ताछने की जरूरत नहीं। इन सब बातों के लिए आखिर मैं मौजूद हूँ कि नहीं। इस बेचारे को देखो, खुदा की मेहरबानी से माँ-बाप सब कोई मौजूद हैं। मगर ऐसी फरमाबरदारी के साथ यतीम बना हुआ मेरे सामने बैठा है और हर बात का अख्तियार मुझको दे रक्खा है। अब तो अगर यह ज़रा

भी इन्कार करे तो खुदा की क़सम मारते-मारते हुलिया बिगाड़ दूँ। मैं तो सिर्फ़ यह चाहता हूँ कि भई तुम एक शरीफ़ खानदान की लड़की हो। यह भी एक शरीफ़ घराने का चिराग़ है आखिर खामख़ाह बद-नामी क्यों हो? शैतान को अपना काम करते कुछ ज़्यादा देर नहीं लगती। दोनों तरफ़ भरपूर जवानी है, दिलों में एक दूसरे के लिए जज़बात, तनहाई की यह मुलाक़ातें, इस ठंडे मौसम की यह काफ़िर चाँदनी, पता नहीं किस वक्त क्या वारदात हो जाय। उसी वक्त से मैं डरता हूँ। और इसी वजह से यह चाहता हूँ कि किसी तरह जल्दी-से-जल्दी दोनों क़ानूनी और समाजी तौर पर एक दूसरे के हो जाओ।"

शकीला ने अपने बुज़ुर्ग उपदेशक की एक-एक बात गांठ में बांधते हुए कहा—"बहरहाल यह बात तो होना ही चाहिये। मुझसे ज़्यादा मुशकिलें उनको हैं। मगर जब यह हर बात के लिए तैयार है तो मैं भी सब कुछ बरदाश्त करूँगी। बस मैं चाहती यह थी किसी तरह आप डेडी को इसमें शरीक कर लेते।"

फ़ैयाज़ ने फिर डाँट बताई—"डेडी-वेडी कुछ नहीं जो मैं कहता हूँ वह होगा। या फिर यह कह दो मुझे कोई हक़ ही नहीं।"

शकीला ने जल्दी से कहा—"हक़ का सवाल नहीं फ़ैयाज़ साहब, आप तो बुरा मान जाते हैं। मैं तो सिर्फ़ यह चाहती हूँ कि किसी तरह का कोई झगड़ा न पैदा हो, बल्कि अगर आप की राय हो तो इरफ़ान के बाप को भी इसमें शरीक कर दिया जाय।"

इरफ़ान घबराकर अपने खास लहजे में भिनभिनाया—"नहीं, अब्बामियाँ नहीं।"

शकीला ने उसको घूरते हुए कहा—"क्या, मतलब?"

इरफ़ान ने फ़ैयाज़ की तरफ़ ऐसे देखते हुए कहा मानो फ़रियाद कर रहा हो—"देखिये फ़ैयाज़ साहब, यह समझती-बूझती तो हैं नहीं, डाटने लगती हैं, अब्बामियाँ भला यह सुन कर ज़िन्दा छोड़ेंगे मुझे।"

फ़ैयाज़ ने इरफ़ान की तारीफ़ करते हुए कहा—"लड़का ठीक कह रहा है। न इनके अब्बा की ज़रूरत है न आपके डेडी की। वह दोनों अपनी अपनी शादियाँ बिना आपकी सलाह के पहले ही कर चुके। तुम समझती नहीं हो शकीला, यह इन बुड्ढों की खास आदत होती है कि इनको अपने छोटों के मुहब्बत भरे जज़्बात का ख़ून करने में बड़ा मज़ा आता है। भला बताइये कि एक लड़का और लड़की निहायत ख़ुशी से एक दूसरे से शादी करने को तैयार हैं तो इन हज़रात की गिरह से क्या जाता है? मगर नहीं, वह जब तक हज़ार रुकावटें नहीं पैदा करेंगे उस वक्त तक उनको चैन थोड़े ही आएगा। ज़हरे-इश्क मसनवी पढ़ी है तुमने। उस बेचारी को बनारस भेजा जा रहा था। नतीजा क्या हुआ, ज़हर लगा पान खाया और सो रही। अगर यही इरादा आपका भी हो तो मंगवाता हूँ पानदान और करता हूँ जनाज़े का इन्तज़ाम।"

शकीला ने हँस कर कहा—"आपकी बातें बड़ी दिलचस्प होती हैं।"

फ़ैयाज़ ने फिर अपना लेक्चर जारी रखते हुए कहा—"इस सिलसिले में तो ख़ैर मैं आदाब अर्ज़ करता हूँ। मगर मैं इस वक्त जो बातें कर रहा हूँ वह दिलचस्पी पैदा करने के लिए नहीं है बल्कि मैं संजीदगी से कह रहा हूँ कि इस सिलसिले में अब ज़्यादा देर करना ठीक नहीं। चुपके से अदालती तौर पर सिविल मैरेज हो जाए, अपने कुछ खास-खास दोस्त शरीक हों और क्लब में एक छोटा सा डिनर। इसके बाद इन बुज़ुर्गों को खबर होती रहेगी। उछलेंगे, कूदेंगे और रह जायेंगे। इस वक्त तो यह डर है कि मान लीजिये इन दोनों में से कोई बुज़ुर्ग ज़्यादा उछल गया तो इसका असर बिला वजह शादी पर पड़ेगा। मैं इस अक़लमन्दी का क़ायल नहीं हूँ कि चलती गाड़ी में रोड़े अटकाए जायँ। कहो क्या कहती हो? मेरे पास ज़्यादा वक्त नहीं है कि आप लोगों के साथ सर खपाता रहूँ।"

शकीला ने इरफ़ान की तरफ़ देखते हुए कहा—"तुम भी तो कुछ बोलो।"

इरफ़ान ने दियासलाई की तीली चबाते हुए कहा—"हम क्या जानें, जो आप लोगों की राय हो वह कीजिये।" .

फ़ैयाज़ ने इरफ़ान की पीठ पर हाथ मारते हुए कहा—"शाबाश! इसको कहते हैं अक़लमन्दी कि भई अगर अपने पास अक़ल नहीं है तो वह बेचारा दूसरे की अक़ल से काम ले रहा है। आपकी तरह थोड़े ही कि अक़ल ग़ायब और हिमाक़त हाज़िर। बहरहाल अब इरफ़ान तो अपनी राय दे चुका। आपको जो कुछ कहना हो कहिये और मेरी जान छोड़िये, इसलिए कि और इन्तज़ाम तो मुझी को करना है।"

शकीला ने कुछ देर सन्नाटे में आने के बाद इरफ़ान का हाथ अपने हाथ में लेते हुए और सचमुच इन्तहाई जज़बात में डूब कर कहा—"मैं तो अपने को इनके हवाले कर चुकी हूँ। अब अगर आप की यही मरज़ी है कि हम लोगों के माँ-बाप को बाद में ख़बर हो तो मुझे इसमें भी कोई उज्र नहीं। जो दिन और जो तारीख़ चाहिये रख लीजिये।"

फ़ैयाज़ ने शकीला की पीठ थपकाते हुए कहा—"बस यह एक बात कही है। अब मैं कल तक तुम लोगों को तारीख़ बता दूँगा। चलो देर हो रही है, उठें यहाँ से।"

यह लोग उस तरफ़ उठे और इधर हम लोग वहाँ से रवाना हो गये।

१७

इरफ़ान गोया अब तक हमारे यहाँ मुख़बिरी कर रहे थे। रोज़ाना जाने के बजाय पहले तो उनकी हाज़री तीसरे दिन होने लगी और उसके

बाद हफ्ते में दो बार रह गई। मगर बेगम को भी उनकी कोई खास पर-वाह नहीं थी। इस लिए कि अपने इसी काम के सिलसिले में वह अपने को हर तरीके से इन्तहाई बेवकूफ साबित कर चुके थे। बेगम उनकी बातें सुन तो लिया करती थी मगर किसी एक बात को भी ध्यान देने के योग्य न समझती थीं। लेकिन हम अब भी उसकी हर एक बात अपने उसी कोने में बैठ कर बड़े गौर से सुना करते थे महज़ यह अंदाज़ा करने के लिये कि एक बेवकूफ़ झूठ बोलने वाला आदमी अपनी सूझ-बूझ से कैसे-कैसे काम लेता है। झूठ बोलने वाले के बारे में यह बात तो गोया तय है कि वह जिससे झूठ बोलता है उसको यक़ीनन बेवकूफ़ समझता है और झूठ बोलने को आर्ट का दर्जा देकर यह साबित करने की कोशिश करता है मानो वह अपनी इस कला के द्वारा एक ऐसा जादू कर रहा है कि एक गलत चीज़ को सही साबित करके दिखा देगा। इसमें शक नहीं कि कला की दृष्टि से झूठ का बहुत बड़ा दर्जा है और अगर सही माने में कोई कलाकार इस कला के कमाल दिखाना शुरू कर दे तो झूठ की महानता का अन्दाज़ा होता है कि यह भी कितनी ऊँची और महान कला है। एक झूठ बोलने वाले के लिए यह बहुत जरूरी है कि वह शिक्षित भी हो, अक़्लमन्द भी हो, साधारण जानकारी पर भी हावी हो, राजनीति का भी ज्ञाता हो, हँसोड़ हो, हाज़िर जवाब हो और अच्छा साहित्यकार भी हो। परन्तु जब तक अदाकारी में उसे दखल न हो उस वक्त तक उसको झूठ बोल कर झूठ की महानता को ठेस पहुँचाने का इरादा न करना चाहिए। एक बेवकूफ़ और नौसिखिया जब कभी झूठ बोलने की कोशिश करता है तब लोग फ़ौरन ताड़ लेते हैं कि यह झूठा है। इसके चेहरे पर तख्ती लटक रही है और इससे बढ़ कर नीच इन्सान मुशकिल से ही कोई हो सकता है। लेकिन जब एक कलाकार झूठ बोलता है तो उसके झूठ को राजनैतिक, ऐतिहासिक और दूसरी महान हैसियतें दी जाती हैं और यह कलाकार अपने इन्हीं कलापूर्ण झूठों के सहारे ऊँचे-से-ऊँचे

दर्जे पर पहुँचता है डिक्टेटरी करता है। कहीं हिटलर कहलाता है कहीं मुसोलिनी सारांश यह कि अगर बदनाम ही होता है तो नामवरी के साथ और ईमान की बात भी यही है कि झूठ बोलना हर ऐरे-गैरे का काम हो ही नहीं सकता। बल्कि अगर हम हुक्मरान होते और हमसे कोई पूछता कि दुनिया का सबसे ज्यादा मुश्किल काम क्या है तो हम आँख बन्द कर के कह देते "झूठ बोलना।" असल में एक तो होता है झूठ बोलना और एक होता है झूठ बकना। झूठ बोलने का हक़ जैसा कि हम कह चुके हैं हिटलर और मुसोलिनी जैसे लोगों को हासिल हो सकता है और झूठ बकने के लिए जिसका जी चाहे बक ले। चुनांचे या तो कोई बहुत बड़ा राजनीतिज्ञ झूठ बोलता है या कोई गरले दर्जे का बेवक़ूफ़ झूठ बकता है। बीच के लोग आम तौर पर सच बोला करते हैं। इरफ़ान साहब जो कुछ भी थे उसका आप अन्दाज़ा स्वयं कर लीजिए यानी उधर तो शकीला के साथ जनाब की शादी तै हो चुकी थी और इधर अपनी बहन के गोया मुख़बिर भी बने हुए थे। जब आते थे, एक-आध नई गढ़ी हुई कहानी अपनी बहन को सुनाकर अपने नज़दीक यह समझते थे कि औरत बेवक़ूफ़ तो होती ही है। जैसे उनसे भी ज्यादा बेवक़ूफ़ कोई हो सकता है। खूब हाथ-पैर चला कर, आँखें मटकाकर और मुनासिब मौक़ों पर मुँह बना-बनाकर झूठ बोलने की कोशिश करते थे। मगर खुदा न करे कि किसी के बारे में यह ख्याल पैदा हो जाय कि यह आदमी बेवक़ूफ़ भी है और अपनी बेवक़ूफ़ी से बेख़बर भी। चुनांचे बेगम के अन्दाज़ से मालूम होता था कि वह इन हज़रत की बातों को सिर्फ़ इस ख्याल से सुनकर चुप हो जाती थी कि जैसे भी कुछ हैं अपने रिश्तेदार ही तो हैं। वरन् उनके इस झूठ का जवाब तो यह था कि सूरत पहचानी न जाती और अगर बेगम सब्र और शराफ़त से काम न लेतीं तो इरफ़ान साहब का दोनों कानों के बीच में सर नज़र आता। हमको उनकी बातें सुन-सुन कर कभी-कभी तो इतने ज़ोर की हँसी आती थी कि उसे दबाना मुश्किल हो जाता था। अब चूँकि शकीला

साहेबा आप की बीवी बननेवाली थीं इसलिए आपकी जासूसी की रिपोर्टों का लेहजा ज़्यादा बदला हुआ था। कहने लगे—"अरे आपा मैं आपसे सच कहता हूँ वह औरत अपनी जात से बहुत नेक है। अगर वह शराफ़त से काम न लेती और अपने माँ-बाप की इज़्ज़त की तरफ़ से ज़रा भी गाफ़िल होती तो हमारे भाई साहब अब तक न जाने क्या कर चुके होते।"

बेगम ने ऊन के गोले में तीली धँसाते हुए कहा—"गोया वह बड़ी शरीफ़ज़ादी हैं और तुम्हारे भाई साहब बड़े कमीने।"

इरफ़ान ने सिटपिटाकर कहा—"न, न न, मेरा यह मतलब नहीं.... बल्कि मैं यह कहना चाहता था कि....यानी मेरा मतलब यह था कि मैंने इतने दिनों में शकीला को अच्छी तरह समझ लिया है। अगर भाई साहब की तरफ़ से ज़ोर न दिया जाय और भाई साहब ही उसको घेरे न रहें तो उसकी तरफ़ से किसी ख़ास बात का सवाल ही नहीं उठता।"

बेगम ने माथे पर बल डालकर कहा—"यह जनाब का अन्दाज़ा है न, इसलिए इसका ग़लत होना ज़रूरी है। मैं न क्लब के हालात को जानती हूँ, न मैंने आजतक शकीला की सूरत देखी है और न तुम्हारे भाई साहब ने मुझसे कुछ कहा है। मगर तुम्हारी इस बातचीत का अन्दाज़ा करने के बाद मैं इस नतीजे पर पहुँची हूँ कि तुम वहाँ जाकर और सब कुछ देखने और समझने के बाद भी कोरे-के-कोरे हो और तुमसे ज़्यादा मैं घर बैठकर समझ चुकी हूँ। उन मुसम्मात का महज़ 'शोकी' कहना ही यह साबित करता है कि उनको किस हद तक दिलचस्पी है।"

इरफ़ान ने गर्दन हिलाते हुए कहा—"यह तो है।"

बेगम ने उनके इस समर्थन से और भी जल कर कहा—"अब आप कह रहे हैं यह तो है। और अभी जो आप फ़रमा रहे थे वह क्या है? हज़ार मर्तबा तुमसे कहा कि भई तुम खुदा के लिए कोई रायज़नी

न किया करो। सिर्फ़ जो हालात देखो वह ज्यों-के-त्यों बयान कर दो। मगर तुम अपनी क़ाबलियत से मजबूर हो। हालात कम बताते हो राय ज़्यादा देते हो।"

इरफ़ान ने अपने नज़दीक बहुत बड़ी बात कही—"अच्छा, तो गोया आपका मतलब यह है कि जैसे अखबारों में एक तो होता है न्यूज़ रीडर और एक होता है न्यूज़ एडीटर। तो गोया मैं न्यूज़ एडीटर रक्खा गया हूँ।"

बेगम ने बग़ैर मुसकुराए हुए कहा—"जी हाँ, रक्खे गये थे मगर मैं सोच रही हूँ कि उस जगह से भी हटा दूँ। मुझे तो ताज्जुब होता है कि तुमने आख़िर बी० ए० का इम्तहान कैसे पास कर लिया? बात असल में यह है कि जिस साल तुम पास हुए हो उसी साल मुल्क की आज़ादी के सिलसिले में हर जेल से पन्द्रह क़ैदी छोड़े गए थे और हर यूनीवर्सिटी से पन्द्रह लड़के रियायती तौर पर पास किए गए थे वरन् तुम्हारे ऐसे स्टूडेन्ट को जो यूनीवर्सिटी बी० ए० की डिग्री दे दे वह तो इस क़ाबिल है कि उस पर पैट्रौल छिड़ककर दियासलाई दिखा दी जाय।"

इरफ़ान ने बेशर्मी के साथ हँसते हुए कहा—"अरे आपा आप क्या समझ सकती हैं कि मैंने किस शान के साथ बी० ए० पास किया है। क़सम खुदा की आज तक प्रोफ़ेसर तारीफ़ करते हैं।"

बेगम ने आँखों-में-आँखें डालकर कहा—"ज़रा उन प्रोफ़ेसरों को किसी दिन यहाँ ले आवो। हिसाब का इम्तहान तो उसी वक्त ले लूँगी। पचास मारूँगी और एक गिनूँगी। बात यह है न, जैसी रूह वैसे फ़रिश्ते। आप ही के प्रोफ़ेसर हैं न? और फिर मज़ा यह है कि आपको अपनी बेवक़ूफ़ी पर हँसी भी आती है। जाहिल होना कोई बुरी बात नहीं लेकिन आप के ऐसे पढ़े-लिखे जाहिलों का तो कोई इलाज ही नहीं। अब जो गलती यूनीवर्सिटी कर चुकी थी वह ग़लती

नहर में महकमे वालों से भी हुई है कि आप उसमें एक अच्छे ओहदे पर रख लिए गए। खुदा उन नहरों पर रहम करे।"

इरफ़ान ने इस बहस को खत्म करने के लिए कहा—"खैर अब मेरी लियाक़त और नालायक़ी को तो छोड़िए। मैं तो अब हो ही गया नहर का एक अफ़सर। लेकिन अब तो सवाल है भाई साहब का। उनके बारे में आप क्या तै करती हैं और मेरे लिए क्या हुक्म है?"

बेगम ने लापरवाही से कहा—"आप उनकी फ़िक्र न करें वह खुद समझदार हैं। अगर आप महज़ क्लब की खबरें बगैर अपनी रायज़नी के पहुँचा सकते हैं तो शुक्रिया। वरना आपसे कोई शिकायत तो हो ही नहीं सकती।"

इरफ़ान ने कहा—"यह आखिर बात क्या है कि आप मुझसे कुछ खफ़ा हैं।"

बेगम ने सच बोलते हुए कहा—"बुरा न मानों तो कहूँ, और खुशामद न समझो तो तुम्हारे मुँह पर कह दूँ। तुम हो बेवक़ूफ़ और मैं सब कुछ कर सकती हूँ मगर किसी बेवक़ूफ़ से खुश नहीं रह सकती। क़िसमत ने तुम को बना दिया है इसलिए मजबूर हूँ। वरना अगर हाकिम होती और मुझे अखतियार होता तो तुम को शहर से निकलवा देती। तुम्हारा ऐसा शौहर मिलता तो खुदकुशी कर लेती। अगर ऐसा पीर मिलता तो काफ़िर हो जाती। मगर अब करूँ तो क्या करूँ? आप ठहरे मेरे भाई और शर्म आती है मुझको कि जो कोई तुमको देखता है मेरा भाई भी समझता है और बेवक़ूफ़ भी, हालाँकि तुम बेचारे मजबूर हो। कोई आदमी खुशी से कभी बेवक़ूफ़ नहीं बनता बल्कि शायर की तरह बेवक़ूफ़ पैदा होता है। यह चीज़ पढ़ने-लिखने या सीखने-सिखाने से पैदा नहीं होती बल्कि खुदा जिसको चाहे दे दे। फ़रिश्तों से कुछ सूरतें तो बक़ायादा बनवाई गईं थीं और कुछ फ़ुरसत के वक़्त जी बहलाने के लिए उन्होंने कार्टून बना लिए थे। मक़सद था उनका

आपस में आपकी सूरत से दिल बहलाना। लेकिन ग़लती से दुनिया की तरफ़ आने वाली भीड़ में आप भी चले आए और यह मुसीबत नाज़िल हुई इस खान्दान पर।"

इरफ़ान ने अपनी टोपी उठाते हुए कहा—"आज आपकी तबीयत कुछ बहुत खुश मालूम होती है और मुझे आप सचमुच बेवक़ूफ़ बनाने पर तुली हुई हैं, लिहाज़ा मैं तो चला। आदाबअर्ज़।"

बेगम इरफ़ान से इतनी जली हुई थी कि उन्होंने इरफ़ान के सलाम का जवाब देना भी ज़रूरी नहीं समझा।

१८

फ़ैयाज़ साहब से आजकल मुलाक़ात ज़रा मुशकिल से होती थी। दोनों घरों के शादी के इन्तज़ाम और बेचारा अकेला आदमी, लड़की के बाप बने हुए थे और लड़के के भी बुज़ुर्ग। बड़ी मुशकिल से एक दिन मुलाकात हुई और जब हमने न मिलने की शिकायत की तो कहने लगे—"अब कहिए तो आपकी नाज़बरदारी करूँ या आपकी वजह से जो काम अपने सिर ले रक्खा है उसको अन्जाम तक पहुँचाऊँ। बड़े झगड़े पड़े हैं शादी में वह जो चुग़ाद हैं न, आपके साले साहब उन हज़रत ने पता नहीं किस-किस से इस बात का ज़िक्र कर दिया है और यह खबर गश्त करती हुई खान बहादुर साहब तक पहुँच गई। वह बुड्ढा कहता है कि मैं दुल्हा और दुल्हन दोनों को गोली मार दूँगा। दुल्हन तो खैर अपने इश्क़ के सिलसिले में बाप के हाथों शहीद होने के लिए इस वजह से तैयार है कि उसे मालूम है, खान

बहादुर साहब बन्दूक नहीं रखते मगर इरफ़ान ने जब से यह सुना है, उसका दम निकला जा रहा है कि कहीं खान बहादुर साहब बिना बन्दूक के ही उनको गोली न मार दें। लाख-लाख समझाता हूँ कि बरखुरदार इस तरह के मामलों में ऐसे हालात का मुक़ाबला करना ही पड़ता है। लैला के बाप ने तो मजनू के लिये न जाने कितने आदमी रख छोड़े थे कि जहाँ मिले पकड़कर खूब ठोंको मगर वह लैला की मुहब्बत से बाज़ न आया और आप हैं कि इस पहले ही जुल्लाब मे मरे जाते हैं। मगर साहब वह कुछ ऐसा डर गया है कि आजकल दरिया के किनारे वाली सड़क से घूमकर क्लब आता है कि कहीं रास्ते में खान बहादुर साहब की गोली उसके इन्तज़ार में टहल न रही हो। शकीला की मुस्तक़िल मिजाज़ी देखिये कि खान बहादुर साहब ने जब उससे पूछा तब उसने साफ़ साफ़ कह दिया कि जी हाँ यह किस्सा बिल्कुल सच्चा है और अगर आपने मुख़ालफ़त की तब भी मैं इरफ़ान से वादा कर चुकी हूँ, अपने वादे पर कायम रहूँगी इसलिये कि लड़की एक बार जज़बाती तौर पर किसी की होती है और फिर ज़िन्दगी भर उसी की रहती है। खान बहादुर साहब ने उसको हर तरह डराया धम-काया, नीचे कूदे, चीखे चिल्लाये, घर सर पर उठा लिया। मुख्तसर यह कि जो कुछ इस बुढ़ापे में कर सकते थे कर गुज़रे। मगर शकीला जहाँ थी वहीं रही। आख़िर नौबत यहाँ तक पहुँची कि खुद मुझको खान बहादुर साहब के पास जाना पड़ा। वह ज़रा कारआमद क़िस्म के बेवक़ूफ़ हैं। मैंने उनको सारे ऊँच-नीच समझाने के बाद इस हद तक राज़ी कर लिया है कि वह इरफ़ान से मिलना चाहते हैं उनका भी ख़्याल ठीक है। बुड्ढा कहता है कि मुझे न ज़ात-पाँत की फ़िक्र है न मुझे इससे कोई बहस कि वह लड़का किस किस्म का है। लेकिन अगर यह बात मुनासिब थी तो आख़िर मुझसे छिपाई क्यों गई? छिपाई तो वह चीज़ जाती है जो किसी-न-किसी लिहाज़ से नामुनासिब हो। बहरहाल मैंने उन बड़े मियाँ पर अपना मन्तर पढ़कर फूँक दिया है और

आज तीन दिन से वह इरफ़ान से मिलने का इन्तज़ार कर रहे हैं। लेकिन अब इरफ़ान को कौन समझाये ? उनका दम निकला जाता है। मैं चाहता हूँ कि इस वक़्त तुम मिल गये हो तो हम दोनों मिल कर इरफ़ान को खान बहादुर साहब के पास ले चलें। इरफ़ान यहीं क्लब में मौजूद है। मैं उसको लाता हूँ। तुम यहीं इन्तज़ार करो।"

यह कह कर फ़ैयाज़ गए और उलटे पैरों इरफ़ान को लेकर वापस भी आ गये। हम कुछ सोचना चाहते थे पर इतनी मुहलत ही न मिल सकी। घन्टा भर तक हम दोनों इरफ़ान को समझाते रहे और वह हज़रत इस तरह अपनी जान बचाने की कोशिश करते रहे जैसे बकरी क़साई से भागती है। बड़ी मुशकिल से उनके काँपते हुए जिस्म को सम्भालते हुये और धड़कते हुये दिल को थामे हुए हम लोग उनकी होने वाली ससुराल तक पहुँचे। खानबहादुर साहब ने बहुत ज़ोर से डांटा—"आदाब अर्ज़!"

इरफ़ान सहम कर जहाँ थे वहीं रह गये।

फ़ैयाज़ ने इरफ़ान का परिचय कराते हुये कहा—"खान बहादुर साहब, आप ही हैं मिस्टर इरफ़ान—लखनऊ यूनीवर्सिटी के ग्रेजुएट और नहर के मुहकमें के एक आला ओहदेदार।"

खान बहादुर साहब ने ऐनक लगाकर इरफ़ान की तरफ़ देखा और एक मिनट तक लगातार देखते रहने के बाद अब जो बढ़े हैं अपना ने सिगार उठाने तो इरफ़ान ने समझा कि निशाना बाँध चुके हैं, बन्दूक़ उठा रहे हैं। बड़ी हसरत से हम दोनों की तरफ़ देखा, होंठों-ही होंठों में कुछ कहने की कोशिश की। शायद कलमा पढ़ा होगा लेकिन खानबहादुर साहब ने इस बीच अपना सिगार सुलगा कर इस ख़तरे को दूर कर दिया यानी फ़िलहाल इरफ़ान की आई बला टल गई। खानबहादुर साहब ने सिगार के दो भयानक कश लेते हुए कहा—"जी! तो मिस्टर इरफ़ान, आप मेरी लड़की शकीला के साथ शादी करना चाहते हैं?"

इरफ़ान ने सोचा कि मरते वक्त झूठ न बोला जाय। बड़ी हिम्मत से काम लेकर कह गया—"जी....वह....यानी....गोया....मेरा मतलब यह....कि शायद....जी हाँ।"

ख़ानबहादुर साहब ने उनको घूरते हुए कहा—"क्यों ?....आख़िर क्यों ? यानी क्यों शादी करना चाहते हैं ?"

वह तो ख़ैर इरफ़ान थे, लेकिन यह सवाल अगर दुनिया का कोई ससुर अपने होने वाले दामाद से करे तो शायद कोई दामाद भी ऐसा नहीं हो सकता जो साफ़-साफ़ यह बता सके कि वह शादी क्यों करना चाहता है।

चुनांचे बेचारा इरफ़ान भी गड़बड़ा कर रह गया। लेकिन ख़ान-बहादुर साहब ने अपने सवाल को ख़ुद ही तफ़सील के साथ दोह-राया—"मेरा मतलब यह है कि आपने अपनी बीवी बनाने के लिये मेरी लड़की यानी शकीला को किसी ख़ास वजह से चुना होगा और वह ख़ास वजह शायद आप मुहब्बत को बतायेंगे जिसको मैं एक क़िस्म की बेहूदगी के अलावा कोई और दर्जा नहीं देता। बेहूदगी मैं इस लिये कहता हूँ कि शकीला की माँ से पहले मैंने एक लड़की से मुहब्बत की। उस मुहब्बत का नतीजा यह हुआ कि मुझे गोया शादी करनी पड़ी और शादी का नतीजा यह हुआ कि वह मुहब्बत ख़तम हो गई। फिर रंजिशें शुरू हुईं, लड़ाइयाँ हुईं दो साल तक ज़िन्दगी तंग रही और आख़िर मुझे तलाक़ देना पड़ा। शकीला के माँ के साथ मैंने डर के मारे शुरू से लेकर आज तक मुहब्बत कभी नहीं की, नतीजा यह कि हम दोनों अब तक ज़िन्दा हैं। वह बीवी है और मैं मियाँ। हम लोगों की दो लड़कियाँ हैं। एक यह शकीला और एक इससे बड़ी जमीला। बड़ी लड़की तीन साल हुये एक इञ्जीनियर से मुहब्बत कर के शादी कर चुकी है और हम लोग इसका इन्तज़ार कर रहे हैं कि उन दोनों के दरमियान कब तलाक़ की नौबत पहुँचती है। वही सूरत शकीला के सिलसिले में पेश आने वाली है। तो मैं यह पूछना चाहता

हूँ मिस्टर इरफ़ान कि आप शकीला से आखिर क्यों शादी कर रहे हैं ?"

खानबहादुर साहब के इस बयान पर हम और फ़ैयाज़ दोनों हैरान थे। इरफ़ान बेचारा किस खेत की मूली। इस सवाल पर उन्होंने पहले हम को फिर फ़ैयाज़ को देखा तो फ़ैयाज ने इरफ़ान की वकालत करते हुये कहा—"खानबहादुर साहब, बात असल में यह है कि इन दोनों की तबियतें क़ुदरती तौर पर एक दूसरे से इतनी मिलती-जुलती हैं कि इन दोनों की यह ख्वाहिश है, चाहे आप इसको मुहब्बत कहिये या और कुछ कि इन दोनों की आपस में शादी हो जाय। यह एक क़ुदरती माँग है और हम सबका फ़र्ज़ यह है कि इस सिलसिले में इनकी मदद करें।"

खानबहादुर साहब ने ऐनक की ओट से हमारी तरफ़ देखते हुए कहा—"ठीक है, ठीक है। मगर मैं न तबीयतों के एक होने का कायल हूँ न मेरे नज़दीक इसका कोई असर ज़िन्दगी पर पड़ता है। मेरी ज़िन्दगी का तजुर्बा यह है कि शकीला की माँ हमेशा से बहुत हँसमुख रही हैं बहुत बातूनी भी और मैं क़ुदरती तौर पर संजीदा क़िस्म का आदमी हूँ। मेरी ज़िन्दगी का रेकार्ड यह है कि एकबार भी बिला जरूरत नहीं हँसा। यह मिर्च ज़्यादा खाती हैं और मैं नमक ज़्यादा पसंद करता हूँ। उनको कच्चे गाने पसंद हैं और मैं पक्के गानों का शैदाई हूँ। वह शराब से बेहद नफ़रत करती हैं और मैं अपनी ज़िन्दगी में उस दिन को शामिल ही नहीं समझता जिसका सूरज डूबने के बाद मेरे लिए एक भरा हुआ जाम न निकले।"

फ़ैयाज़ ने खुशामद का बड़ा अच्छा मौक़ा देखकर कहा—"सुब-हान अल्लाह! किस क़दर पाकीज़ा ज़ुबान और कैसा शायराना बयान है।"

खानबहादुर साहब ने जल्दी से कहा—"न, न न, अगर यह शायराना बयान है तो मैं माफ़ी चाहता हूँ। मुझे शायरी से तो बेहद नफ़रत है। मेरे एक किरायेदार थे जब मैंने उनके साइनबोर्ड पर उनका तखल्लुस देखा तो फ़ौरन उनको नोटिस दे दिया कि अब मकान खाली

कर दीजिये। एक साहब ने मुझे एक बार अपनी गज़ल सुना दी। उस दिन के बाद से वह जब कभी आते हैं तो मैं अन्दर ही से कहलवा देता हूँ कि मैं घर पर नहीं। एक बार जनाब मैं एक मुशायरे में फँस गया तो साहब मुझे धड़कन होने लगी कि यहाँ तो दर्जनों शायर हैं। अब अगर किसी महफ़िल में जाता हूँ तो पहले पता लगा लेता हूँ कि यहाँ वह बात तो नहीं होने वाली है जिसे शायरी कहते हैं।"

फ़ैयाज़ ने मौक़ा मुनासिब समझकर कहा—"यह अजीब इत्तफ़ाक़ है, हमारे इरफ़ान साहब को भी शायरी से ऐसी ही नफ़रत है।"

खानबहादुर साहब ने बड़े ज़ोर से कहा—"जी अब आपको शायरी से नफ़रत है? यह तो कोई मुनासिब बात नहीं है। अगर आपको शेर व शायरी से दिलचस्पी होती तो मैं यह समझ सकता कि आप मेरी लड़की शकीला से शादी करने के बाद इस मामले में उसका साथ दे सकेंगे। वह इस मामले में बिल्कुल मेरी उल्टी है। बल्कि मेरे और उसके बीच जो सबसे बड़ा इख़्तलाफ़ है वह यही है। ख़ैर, बाप बेटी का इख़्तलाफ़ ही क्या? लेकिन मियाँ-बीवी के बीच यह इख़्तलाफ़ होना तो दोनों की जिन्दगी ख़राब कर देगा। शायरी से मिस्टर इरफ़ान की नफ़रत बड़ी अच्छी चीज़ थी बशर्ते कि वह मेरे साथ शादी के उम्मीदवार होते।"

हम सबको एक दम हँसी आ गई तो खानबहादुर साहब ने वैसे ही गम्भीर लोहजे में कहा—"न न न, हँसी की बात नहीं बल्कि जो कुछ मैं कह रहा हूँ उस पर ग़ौर कीजिये। अभी आप कह रहे थे कि दोनों की तबीयतें मिलती-जुलती हैं लेकिन यह तो बहुत बड़ा इख़्तलाफ़ है।"

फ़ैयाज़ ने बैठे-बिठाये यह मुसीबत मोल ले ली। खुशामद में एक बात कह गये और अब बड़े मियाँ से जान छुड़ाये न छूटती थी। आखिर हमने फ़ैयाज़ की ओर देखते हुए कहा—"मेरे ख़्याल में फ़ैयाज़ साहब, आप का यह ख़्याल कुछ दुरुस्त नहीं इन दोनों के बीच तो खूब-खूब शेर व शायरी की बातें होती रहती हैं।"

खानबहादुर साहब ने बात काट कर कहा—"बातचीत दूसरी चीज़ है। हो सकता है। कि बातचीत यही होती हो कि वह कहती हो कि मुझे दिलचस्पी है और यह कहते हों कि मैं बेज़ार हूँ। शुरू-शुरू में तो जवानी के जोश की वजह से यह इख्तलाफ जज़बात के पर्वत के सामने राई नज़र आता है लेकिन जब शादी हो चुकेगी, अरमान पूरे हो चुकेंगे, तब यही इख्तिलाफ़ पर्वत होगा और यही जज़बात राई होंगे। क्या समझे आप! सिगरेट पीजियेगा या कुछ और मँगवाऊँ!"

फ़ैयाज़ ने कहा—"काफ़ी है।

खानबहादुर साहब ने जल्दी से कहा—"काफ़ी तो शायद न होगी चाय मँगा सकता हूँ।"

फ़ैयाज़ ने कहा—"जी नहीं, मेरा मतलब यह था कि सिग्रेट काफ़ी है।"

खान बहादुर साहब ने ग़ौर करते हुए कहा—"काफ़ी यानी बहुत! इसकी जमा (बहुवचन) क्या है इरफ़ान साहब!"

इरफ़ान ने ज़िन्दगी भर में शायद पहली बार समझदारी की बात घबरा कर जल्दी से कहदी—"क़ाफ़ी की जमा क्या हो सकती है, जमा तो बहुत सी चीज़ों को कहते हैं और काफ़ी के माने खुद बहुत के हैं।"

खानबहादुर साहब ने खुश होकर कहा—"बहुत खूब, बहुत खूब। आपकी शायद इसी तरह की कोई बात शकीला को पसन्द आ गई होगी। यह ठीक है, मेरी राय में आप जरूर शादी कर लीजिये मगर मैं यह मालूम करना चाहता हूँ कि आपने शादी के फ़िलसफ़े पर ग़ौर भी किया है या महज़ शादी कर रहे हैं।"

इरफ़ान उस वक्त पता नहीं किस तरह ठीक बोले जा रहा था कहने लगा—"ग़ौर तो मैंने नहीं किया, इसलिए कि जब तक शादी का इत्तिफ़ाक़ न हो ग़ौर हो भी कैसे सकता है। ग़ौर करने लिए यह ज़रूरी है कि जिस चीज़ पर ग़ौर किया जा रहा हो वह कम-से-कम

निगाहों के सामने नहीं तो खयालों की हद में ज़रूर हो। अभी तो मैंने अपनी मौजूदा ज़िन्दगी पर ग़ौर करने के बाद यह फ़ैसला किया है कि शादी कर लूँ। अब शादी करने के बाद........।"

खानबहादुर साहब ने बात काट कर कहा—"शादी करने के बाद यह ग़ौर करूँगा कि अब क्या करूँ। गोया—

अब तो घबरा यह कहते हैं कि मर जायेंगे।

मर के भी चैन न पाया तो किधर जायेंगे!

मगर यह तो मैं शेर पढ़ गया। उम्र की वजह से दिमाग़ इतना बेकार हो चला है कि देखिये शेर तक पढ़ जाता हूँ, तो ख़ैर मैं यह कह रहा था कि मुझे कोई एतराज़ नहीं आप लोग तारीख वग़ैरह तै करने के बाद मुझको इत्तिला दे दीजियेगा ताकि मैं अपने प्रोग्राम में इस चीज़ को भी लिख लूं। और हाँ सनीचर के दिन एक बजे के बाद या इतवार के दिन यह इत्तिला न होनी चाहिये इसलिए कि बैंक बन्द हो जाता है और मैं इस मौक़े पर एक मामूली सी रक़म अपनी लड़की को देना चाहता हूँ। मैं चेक दे देता मगर हो सकता है कि हाथ कांपने की वजह से दस्तखत में कुछ गड़बड़ हो जाय और आप मेरे लिए कोई ग़लत राय क़ायम कर लें। अब आप हज़रत जा सकते हैं और जिस दिन आप का जी चाहे और आप मेरे यहाँ खाने पर आना चाहें तो मेरे खानसामा को इत्तिला दे दीजियेगा। आदाब अर्ज़।"

१६

क्लब में आजकल हर तरफ़ इरफ़ान और शकीला की शादी की चर्चा थी मगर फिर भी यह एहतियात बरती जा रही थी कि क्लब से

बाहर यह चर्चा न पहुँचे। इरफ़ान को तो खैर अपने बाप का डर था लेकिन फ़ैयाज़ को इरफ़ान के बाप से ज़्यादा इस बात का ख़्याल था कि अगर यह खबर इरफ़ान के बाप को पहुँची तो फिर बेगम तक ज़रूर पहुँच जायेगी और उनको खबर पहुँचने के मानी ये थे कि जैसे सारा खेल ही खत्म हो गया। फ़ैयाज़ इस सिलसिले में बहुत ज़्यादा एह-तियात बरत रहे थे। क्लब के मेम्बरों की तरफ़ से तो कोई डर नहीं था लेकिन खुद दूल्हामियाँ इतने नामाकूल थे कि उनकी तरफ़ से क़दम-क़दम पर यह डर था कि न जाने यह क्या कह डालें और कहीं डर के मारे घर में ही किसी से यह भेद न खोल दें। जहाँ तक हो सकता था उनको समझाने की पूरी कोशिश की जा रही थी और खानबहादुर साहब के यहाँ के क़िस्से के कारण कुछ उनको भी ख़्याल हो गया था कि उनकी बेवकूफ़ी की वजह से इस किस्से ने बिला वजह खान बहा-दुर साहब तक तूल खींचा। आज क्लब के मेम्बरों ने उन्हें मुबारक-बाद देने के लिए एक खास जलसा किया था क्योंकि इरफ़ान खान-बहादुर साहब के यहाँ जाकर ज़िन्दा लौट आये। कोई फूलों के हार लाया था, कोई न्योछावर के लिए उड़द और तेल, किसी ने इस मौक़े के लिए .कविता कही थी। इरफ़ान ने इस मौक़े पर भागने की लाख कोशिश की पर लोगों ने उसे घेर कर बिठा ही लिया। उस को रोकने वालों में शकीला भी शामिल थीं जो इरफ़ान से बराबर कहे जा रही थीं कि तुम अपने आपको बेवक़ूफ़ साबित करने की कोशिश क्यों कर रहे हो। दोस्त ही आपस में मज़ाक़ न करेंगे तो कौन करेगा। मुझको देखो कि तुम्हारी वजह से मेरा भी मजाक़ उड़ता है पर मैं तो इस तरह रस्सियाँ नहीं तुड़ाती।

जलसे की कार्यवाही शुरू हुई तो सब से पहले फ़ैयाज़ ने खड़े हो कर उस बहादुर सिपाही को मानपत्र भेंट किया जो बड़ी बहादुरी से अपने खौफ़नाक ससुर के सामने सर से कफ़न बाँध कर गया और उस मैदान से भागने के बजाय कामयाब होकर लौटा। मानपत्र में उस.संग्राम

कारनामों का ज़िक्र था जो इस जाँबाज़ सिपाही ने खान बहादुर साहब के यहाँ पेश किये न यह सूरमा डरा, न सहमा, न झिझका, न झपका बल्कि मौत से जिस बहादुरी के साथ खेला है उसके बदले में मिलना तो चाहिए था विक्टोरिया-क्रास मगर फ़िलहाल इसे शकीला मिलने वाली है। इस मानपत्र का मज़ाक वैसे तो सभी ने लिया पर सब से ज़्यादा मज़ा शकीला ले रही थी। मान पत्र के बाद इरफ़ान की शान में कई कविताएँ पढ़ी गईं, उनका सदक़ा उतारा गया और हार पहनाये गये। क्लब के सेक्रेटरी की हैसियत से इखलाक़ ने कहा—"हज़रात इस मुबारक मौक़े पर क्लब की वर्किंग कमेटी की बड़ी ख्वाहिश थी कि मिस्टर इरफ़ान को चांदी और सोने में तौला जाय मगर क्लब की माली हालत ने इस बात की इजाज़त नहीं दी। यह हो भी सकता था बशर्ते कि क्लब के मेम्बरों के जिम्मों चंदे की काफ़ी रक़म बाक़ी न होती। खुद मिस्टर इरफ़ान की तरफ़ बयासी रुपये निकलते हैं। बहरहाल चूँकि इस रस्म का न होना एक तरह की बदशगुनी है इसलिए आपको अख़बारों के पुराने फ़ाइलों से तौलने की तजवीज़ मैं पेश करता हूँ।"

इस प्रस्ताव का वैसे तो सब ने समर्थन किया पर शकीला ने इसको पसंद न किया और यह कहकर इस मज़ाक़ को खत्म कर दिया—"बस सख्यारों की एक हद हुआ करती है।" इसलिए जलसे की कार्यवाही खतम कर दी गई। मगर जलसे के बाद भी इरफ़ान का खानबहादुर साहब के यहाँ जाना एक खास विषय बना रहा।

फ़ैयाज़ ने संजीदगी के साथ कहा—"खैर यह तो मज़ाक़ था मगर मैं सचमुच हैरान हूँ कि इरफ़ान में खानबहादुर साहब के सामने पहुँच कर किस ग़ज़ब की हिम्मत और हाज़िरजवाबी पैदा हो गई थी। यानी इखलाक़, तुम सोच भी नहीं सकते कि इसने कैसे-कैसे जवाब उनको दिये हैं।"

हमने कहा—"साहब इनके जवाबों से ज़्यादा मैं खानबहादुर

साहब के सवालों पर हैरान हूँ कि उनको कैसे-कैसे सवाल सूझ रहे थे। एक दम से काफ़ी की जगा पूछ बैठे थे।"

शकीला ने हँसी से बेकाबू होते हुए कहा—"अरे उनकी बातें आपने अभी सुनी कहाँ? यह बात करते हैं तो न जाने कहाँ-से-कहाँ पहुँच जाते हैं। आज ही आप लोगों के आने का ज़िक्र बयान करते हुए एकदम से कहने लगे कि इरफ़ान का नाम क्या है? मैंने उनको बड़ी मुशकिल से समझाया कि इरफ़ान का नाम इरफ़ान ही है। यह बात उनमें कुछ उम्र की वजह से पैदा नहीं हुई बल्कि हमेशा से यही हाल है।"

रमेश ने गरदन हिलाते हुए कहा—"तो यह कहिए कि यह जो आप में और आप की बात चीत में अकसर बेतुकापन पैदा हो जाता है यह आपकी नसली और खानदानी खूबी है।"

शकीला ने रमेश की तरफ़ त्योरियों पर बल डाल कर देखते हुए कहा—"और जनाब की नसली और खानदानी खूबी शायद ये ताने और व्यंग्य है। मैं तुमसे कल से जली बैठी हूँ रमेश कि बुरा तो मानें आप मेरी बात पर और गुस्सा उतारें बेचारे इरफ़ान पर। गोया धोबी से बस न चला तो गधे के कान ऐंठे।"

रमेश ने तड़प कर कहा—"अरे, सुबहान अल्लाह क्या बात कही है। सुन रहे हैं मिस्टर इरफ़ान शादी की तारीख़ तै नहीं हुई पर आप के बारे में यह तै हो गया कि आप गधे हैं।"

फ़ैयाज़ ने एकदम से चौंककर कहा—"अरे भाई यह किस्सा छोड़ो। शादी की तारीख़ का तै होना सब से ज़्यादा ज़रूरी है।"

हमने कहा—"मेरा ख़्याल यह है कि खानबहादुर साहब ने अगरचे सारी बात हम पर छोड़ दी है फिर भी हमारा यह फ़र्ज़ है कि हम तारीख़ उनसे ही तै करायें। उन्होंने कहा है कि हम लोग दिन चाहे उनके खानसामा को इत्तिला देकर खाने पर जा सकते हैं

इसलिए आज खानसामा को खत लिखिए कि कल हम लोग खाने पर आ रहे हैं और कल ही यह तारीख़ उनकी सलाह से तै पा जाय।"

फ़ैयाज़ ने इस राय का समर्थन तो किया मगर चूँकि यह बात उनकी शान के खिलाफ़ थी कि किसी की राय और खास तौर से हमारी राय को वह एकदम से मानले इसलिए कुछ ग़ौर करने के बाद बोले —"राय तो आपकी ठीक है मगर आपने इस बात पर ग़ौर नहीं किया है कि हमको पहले आपस में एक तारीख तै कर लेना चाहिये। इसके बाद उसी तारीख़ के बारे में उनसे सलाह कर लेंगे। वरन अगर हमनें उनसे तारीख़ पूछी और उन्होंने यह सवाल कर दिया कि अब की २८ दिसम्बर को कौन सी तारीख़ होगी, या यह पूछ बैठे कि जुमा किस दिन है तो बताइए हमारे पास इसका क्या जवाब होगा?"

शकीला अपने अब्बा जान की यह बातें सुन-सुन कर बहुत खुश हो रही थीं, आख़िर उन्होंने कहा—"आप खुद कोई तारीख़ तै कीजिये उनको इस झगड़े में न डालिये नहीं तो पता नहीं क्या-क्या उलझनें पैदा कर के आप के प्रोग्राम को ऐसा गड़बड़ कर देंगे कि आप के सँभाले भी न सँभल सके।"

रमेश ने माथे पर हाथ मार कर कहा—"हाय! कमबख्ती! क्या ज़माना आ लगा है कि ये आजकल की लड़कियाँ अपने ब्याह की बात में बढ़-बढ़ कर बोल रही हैं।"

शकीला ने छूटते ही कहा—"मुझे क्या मालूम था यहाँ रमेश-ख़ाला बैठी हैं।"

मात रमेश पर चिपक कर रह गई और सबने इतने क़हक़हे लगाये कि रमेश बदहवास हो कर रह गया। यहाँ तक कि चलते-चलते उससे जिस जिसने बात की ख़ाला कह कर की।

२०

नाज़ो और रफ़्फ़ो की जो कानफ़्रेन्सें हो रही थीं उनमें कभी-कभी फ़ैयाज़ साहब भी शामिल हुआ करते थे और जिस कान्फ़्रेन्स में वह शरीक होते थे उसका तमाशा देखने के लिए हम ज़रूर घर पर मौजूद रहते थे और उस कमरे से जहाँ बक़ौल बेगम के एक-से-एक क़दे-आदम चूहा मरा पड़ा था, कानफ़्रेन्स की कार्यवाही देखा करते थे। आज भी फ़ैयाज़ साहब तशरीफ़ लाए हुए थे और कानफ़्रेन्स में बड़े मार्के का लेक्चर दे रहे थे। यह लेक्चर इरफ़ान के बारे में कुछ ज़्यादा था। अफ़सोस यह है कि हमने पूरा लेक्चर नहीं सुना, अलबत्ता जिस वक़्त हम पहुँचे हैं वह कह रहे थे—"हैरत होती है भाभी कि यह इरफ़ान आपके भाई हैं कैसे? आप माशा अल्लाह एक बर्क़-बला, आपके काटे का मन्तर नहीं। ऐसी-ऐसी बातें कहती हैं कि ग़ैरतदार पानी भी न मांगे। और एक वह हैं बुद्धू सहराई कि एक बन्दा जिससे बात कर लें, एक महीने तक समझ-बूझ उसके पास नहीं फटक सकती। अरमान रह गया कि कभी तो कोई समझदारी की बात करते। लेकिन जब कहते हैं, एक ऐसी सड़ी हुई बात कहते हैं कि सुन कर हैराने और समझ कर रोने को दिल चाहता है। अपने महकमे में भी बड़े नेकनाम हो रहे हैं। सुना है कि एक चौकीदार को, जिसने पिछले महीने यह दरख़ास्त दी थी कि मेरा बाप मर गया है, मिट्टी में जाने की इजाज़त

दी जाय, कल यह हुक्म दिया है कि जा सकते हो। मोहकमे के क्लर्क इस हुक्म को लिए फिरते हैं और एक-एक को दिखाते हैं कि यह है हमारे बड़े साहब का कारनामा।"

बेगम ने हँसी से बेक़ाबू होते हुए कहा—"यह आपने गढ़ी है या सचमुच ऐसा हुआ है। उन की समझदारी से तो ख़ैर कुछ भी दूर नहीं मगर आप भी तो क़िस्से गढ़ने में कमाल ही करते हैं।"

फ़ैयाज़ ने गम्भीरता से कहा—"नहीं भाभी यह मेरी मनगढ़ंत नहीं है बल्कि क़िस्सा असल में यह है कि आपके भाई साहब के कुछ काग़-जात दबे रह गये थे वह जो बरामद हुए तो आपने सब पर एक दम से हुक्म लिखना शुरू कर दिया इन्हीं में यह दरख़ास्त भी थी ले हाज़ा यह बग़ैर हुक्म के कैसे रह जाती। ख़ैर यह तो जो कुछ वह करते हैं उसको वह जाने और उनका कम्बख़्त महकमा। मगर आपने जो काम उनको सौंप रक्खा है उसके बारे में मुझे ख़ुद आप की समझदारी की तरफ़ से शक पैदा हो रहा है कि आख़िर आपने उनको क्या समझकर इस काम के लायक़ समझा। आपको पता है कि वह इस सिलसिले में क्या-क्या कर रहे हैं। हद यह है कि ख़ुद शकीला से पूछा करते हैं कि कहिए कब हो रही है आपकी शादी और वह भी अकेले में जब क्लब का कोई मर्द मेम्बर आस-पास न हो। शकीला भी यह समझती है कि चलो एक से दो भले। अब तक तो बेचारी अकेली औरत थी वहाँ, अब आपके भाई साहब ने इस कमी को भी पूरा कर दिया है। मुझे तो डर है कि कहीं किसी दिन वह आपके मियाँ को यह न बता बैठें कि वह आपके रिश्तेदार हैं।"

बेगम ने घबरा कर कहा—"कहीं ऐसा ग़ज़ब न कर दें वरन् सारा भांडा ही फूट जायेगा। इतना तो ख़ैर मैं भी जानती हूँ कि वह सिर्फ़ बेवक़ूफ़ ही नहीं बल्कि परले सिरे के लपाड़िए भी हैं। झूठ इबादत समझ कर बोलते हैं और अपनी हिमाक़तों की तरफ़ से इतना इतमी-नान है कि जैसे यह उनका पैदाइशी हक़ है। वह तो कहिए कि चचा

अशफ़ाक़ की वजह से उनको यह नौकरी मिल गई वरना मियाँ इरफ़ान तो इस क़ाबिल थे कि किसी ज़नाने स्कूल में उस्तादनी के तौर पर रख लिए जाते।"

फ़ैयाज़ ने अपनी बीवी की तरफ़ रुख़ करते हुए कहा—"हमारी बेगम साहिबा को वह बहुत ज़्यादा पसन्द हैं। फ़रमाती हैं कि वह बड़ी भोली बातें करता है।

नाज़ो ने चमक कर कहा—"फिर आप झूठ बोले। कब कहा था मैंने?"

फ़ैयाज़ ने याद दिलाते हुए कहा—"अरे भाई, परसों की ही तो बात है कि तुम कह रही थीं बेचारा सीधा आदमी है, उसकी बातों में घुमाव-फिराव नहीं होता।"

नाज़ो ने तीखी नज़रों से देखते हुए कहा—"तो इसका यह मतलब हुआ कि मैं उन्हें पसन्द करती हूँ। अरे मुझे अगर किसी को पसन्द करना होता तो सबसे पहले तो तुम्हीं को पसन्द करती।"

फ़ैयाज़ ने एकदम से खड़े होकर कहा—"सुना भाभी आपने! ग़ालिब की क़िस्म का-सा शेर कहा इस औरत ने। यानी मतलब यह हुआ इस शेर का कि शायर कहता है कि मैं तुमको पसन्द नहीं करता। कैसी सफ़ाई के साथ शायर ने अपने महबूब को नफ़रत के क़ाबिल ठहराया है।"

नाज़ो ने जलकर कहा—"महबूब नहीं तो वह।"

फ़ैयाज़ ने प्यार की नज़रों से नाज़ो की तरफ़ देखते हुए कहा "वह तो ख़ैर हम हैं ही तुम्हारे, मगर तुम भी बड़ी वह हो। भाभी यह शेर सुना है न आपने कि—

'तुम बड़े वह हो तुम्हें मार कर टुकड़े कर दूँ।' इसका पहला मिसरा आपको तो सुना नहीं सकता इनको अलबत्ता घर जा कर सुना दूँगा।"

नाज़ो ने डाँटते हुए कहा—"यह क्या वाहियात है। तुम्हारी

ज़ुबान के आगे तो दिन-पर-दिन खन्दक़ होता जा रहा है। जो मुँह में आता है बकते चले जाते हो।"

फ़ैयाज़ ने कहा—"अरे बेगम साहब, न हुआ मैं इनके मियाँ की तरह का, कि ख़ुद तो क्लब में गुलछर्रे उड़ाता और आप बजाय इस डाँट-डपट के मेरी एक प्यार भरी नज़र के लिए नमाज़ें पढ़-पढ़ कर दुआएँ करतीं।"

बेगम ने शायद इस बात-चीत से तंग आ कर कहा—"आप लोगों की लड़ाई के मारे तो और नाक में दम है। मैं न जाने क्या-क्या आपसे पूछना चाहती हूँ मगर आपको अपने आपस के झगड़ों से ही फ़ुरसत नहीं। मैं आप से यह कहना चाहती हूँ कि मुझे भी तो किसी दिन दिखाइये अपनी होने वाली भावज को।"

फ़ैयाज़ ने साफ़ इन्कार करते हुए कहा—"न साहब, न यह झूठ है। न मेरे सर में इतने बाल हैं कि आप के शौहर की चपतें खाऊँ और न दरअसल आपकी यह माँग दुरुस्त है। आप आख़िर उसे क्यों चाहती हैं, महज़ जलने के लिए, अपने को कुढ़ाने के लिये। मालूम यह होता है कि आपको जलाने और कुढ़ाने के लिए आपके मियाँ का सलूक काफ़ी नहीं है।"

बेगम ने कहा—"नहीं यह बात नहीं हैं बल्कि यह बात एक क़ुदरती-सी है कि अपने दुशमन को देखने को जी चाहता ही है। अच्छा एक बात बताइए कि मेरा भी कभी इस सिलसिले में ज़िक्र करते हैं।"

फ़ैयाज़ ने बड़ा असर करने वाला लहजा अपनाते हुए कहा—"मैं झूठ नहीं बोलूँगा। आपसे दरअसल वह डरता बहुत है। इस ज़माने में मौत से डरने वालों की तादाद बहुत कम है। ख़ुदा से डरने वाले तो ख़ैर अब पैदा ही नहीं होते बहुत अरसा हुआ जब इस क़िस्म के लोग पाये जाते थे। अब भी पुरानी कहानियों में तो उनका ज़िक्र मिलता है मगर देखने को वह लोग नहीं आते। ऐसे ज़माने में बीवी से डरने वाला आदमी मुशकिल ही से नज़र आयेगा और मेरे नज़दीक

एक शरीफ़ आदमी की सबसे बड़ी पहचान यही है कि वह बीवी से डरता हो। कई बार मुझसे कह चुका है कि मैं रफ़ो को क्या मुँह दिखाऊँगा जो गलती होना था वह तो हो चुकी मगर उसका ज़ाहिर करना मेरे लिए एक पहाड़ बना हुआ है जो समझ में नहीं आता कि किस तरह पार किया जाय।"

बेगम ने बड़े भोलेपन से कहा—"और मेरी समझ में यह नहीं आता फ़ैयाज़ भाई कि जब इस क़िस्से को ज़ाहिर करने के बाद अपनी आँखों में वह शरमिन्दगी पैदा करके रह जायेंगे उस वक़्त मैं क्या करूँगी।"

नाज़ो ने बुरा मानकर कहा—"तुम चाहे मुझसे लिखवा लो कि तुमसे कुछ भी न हो सकेगा। उल्टी उन्हीं की लल्लो-पत्तो शुरू कर दोगी। मैं सच कहती हूँ तुम्हारी ही तरह की औरतों ने इन मरदों का दिमाग़ ख़राब कर दिया है। ख़ुदा की क़सम पत्थलिगाँ चीर के कलेजा निकाल ले, अपने हाथ से गला घोंट कर मर जाय मगर ऐसे मरदों के नाम पर थूकना भी न चाहिए।"

फ़ैयाज़ ने हाथ जोड़ते हुए कहा—"यह आप बिलावजह मुझको धमका रही हैं। हालांकि न मेरा इरादा दूसरी शादी का है और न मैं अपने नाम पर आपसे थुकवाने का हक़ छोड़ सकता हूँ।"

नाज़ो ने चमककर कहा—"ख़ैर तुम अपनी न कहो। तुम्हें पूछेगा कौन? इस क़ाबिल होते तो तुम भी कौन-सी कसर उठा रखते।"

फ़ैयाज़ ने गोया सच बोलते हुए कहा—"क्यों साहब अगर हम किसी क़ाबिल न थे तो यह जनाब से किसने कहा था कि छुप-छुप कर ख़त लिखा करें, रुमाल के ऊपर नाम काढ़कर भेजें। आख़री ख़त में यह लिख दे कि ख़ुदा के लिए शादी का इन्तज़ाम करो वरना मैं कुछ खाकर सो रहूँगी।"

नाज़ो ने जैसे वहाँ से जाने का इरादा करते हुए कहा—"आज कुछ पी तो नहीं गए हो? ऐसे ही तो प्यारे हसीन थे कि इनके लिए मैं

कुछ खाकर सो रहती। सब से पहले कुन्दन ख़ाला के यहाँ मैंने देखा था जब छालटी का थान बगल में दबाये हुए आये थे पायजामा सिल-वाने। मैं समझी कि शायद कोई बज़ाज-वज़ाज़ है। अल्लाह जानता है कि बड़े रुरोलू नज़र आ रहे थे। अब चाहे मुकर जाओ मगर तुम ने घबराकर मुझे सलाम कर लिया था। आयशा ने बताया कि यह फ़ैयाज़ भाई हैं।"

फ़ैयाज़ ने एक ठन्डी साँस लेते हुए कहा—"उसी दिन तो पहला तीर खाया है। क्या पता था कि यही तीरन्दाज़ साहेबा जान का रोग बनकर रह जायेंगी। मैंने कहा सुनती हो, तुम हमारी शादी नहीं ठहरा सकती कहीं?"

नाज़ो ने उसी तेज़ी से कहा—"अरे क्यों नहीं? चाँद सी दुल्हन लाऊँगी तुम्हारी, धूम से तुम्हारी बारात लेकर जाऊँगी अपनी सौत लाने के लिए। ऐसा ही अरमान है तो कर क्यों नहीं लेते शादी, मना कौन कर रहा है।"

फ़ैयाज़ ने बेगम की तरफ़ इशारा करते हुए कहा—"देख रही हो इनका क्या हाल है।"

नाज़ो ने कहा—"यह तो हैं बेवकूफ़। न हुई मैं इनकी जगह, अगर मज़ा न चखा दिया होता तो नाम बदल देती।"

बेगम ने फिर बीच-बचाव करते हुए कहा—"मैं कहती हूँ तुम दोनों इतने लड़ाके क्यों हो। एक हम मियाँ-बीवी हैं कि इतनी बड़ी बात हो रही है मगर क्या मजाल जो हम दोनों में लड़ाई के नाम की आधी बात भी हुई हो।"

नाज़ो ने बेगम की तरफ़ रुख़ बदलते हुए कहा—"न तो मैं तुम्हारी तरह फ़रिश्ता हूँ और न खुदा करे ऐसी बेज़बान। मेरे साथ अगर यह ऐसा सलूक करें तो मैं भी इनको मज़ा चखा के रख दूँ और मैं तुमसे भी कहती हूँ कि जो कुछ होने वाला है वह तो होकर रहेगा। यह जो

चुपके-चुपके तुम घुल रही हो इससे आखिर क्या फ़ायदा। उनको भी तो कुछ सज़ा मिलनी चाहिए।"

फ़ैयाज़ ने बड़ी हमदर्दी के साथ कहा—"सज़ा तो खैर क्या मिलनी चाहिए मगर हाँ यह मेरा भी जी चाहता है कि ठीक शादी के वक्त मैं आपको लेकर वहाँ पहुँच जाऊँ ताकि दूल्हा मियाँ की घबराहट का तमाशा तो देखा जाय। मगर आप से वह नज़ारा कैसे देखा जायेगा?"

बेगम ने बड़ी हिम्मत से कहा—"क्यों देखा क्यों नहीं जायेगा? फ़ैयाज़ भाई मुझ पर जो तकलीफ़ गुज़रनी थी गुज़र चुकी। अब तो मैं कलेजे पर पत्थर रख ही चुकी हूँ। आप मुझसे वादा कीजिये कि मुझे एकदम से निकाह के वक्त लेकर पहुँच जायेंगे।"

फ़ैयाज़ ने मुँहमाँगी मुराद पाई। लेकिन अपने को बड़ी कशमकश में ज़ाहिर करके कहा—"क्या बताऊँ भाभी कुछ समझ में नहीं आता। अच्छी बात है मैं आपके लिए अपने निहायत अजीज़ दोस्त की नाराज़ी भी मोल ले लूंगा।"

नाज़ो ने कलाई पर नज़र डालकर कहा—"ओफ़-ओह दस बज रहे हैं, अब चलने का इरादा भी है या नहीं, उठिये बस अब।"

आज इन लोगों ने हमको बड़ी देर तक कमरे में बन्द रक्खा। चुनांन्चे उनके जाने के बाद जब हम बाहर आये हैं तो क्लब जाने का वक्त भी न था। मजबूरन थोड़ी देर इधर-उधर टहलकर वक्त गुज़ारा ताकि शाम को जल्दी घर पहुँचने का इल्ज़ाम हम पर न लगाया जा सके और यह न कहा जा सके कि हम एक दिन सही वक्त पर घर आ गए थे।

२१

खानबहादुर साहब के यहाँ खाने पर जिस वक्त हम लोग पहुँचे हैं तो वह बेचारे शायद हमारी ही इन्तज़ार में अपने कोठी के बरामदे में शन्टिंग कर रहे थे। हम लोगों को देखते ही 'आइए' का नारा लगाया। एक बार ठहरे, दो क़दम आगे बढ़े और फिर घबराकर एकदम झपटकर कमरे के अन्दर ही से आवाज़ लगाई—"आप लोग बैठिए मैं ज़रा लिबास बदलकर आता हूँ।"

हम लोग इधर-उधर कुर्सियों पर बैठ गए और चुपके-चुपके एक-दूसरे से बातें करने लगे कि इतने में शकीला ने आकर धीरे से फ़ैयाज़ के कान में कहा—"डिनर सूट पहन रहे हैं।"

और इस जुमले के खतम होने के बाद ही खानबहादुर साहब अपना जवानी का बनवाया हुआ डिनर-सूट पहनकर बाहर तशरीफ़ लाये और अपने नज़दीक माफ़ी माँगते हुए कहा—"बात यह है कि मैं यह बात भूल गया था कि खाने के लिए एक वर्दी भी हुआ करती है। आप लोगों को खाने के खास लिबास में देखकर मुझे भी आज सात साल के बाद यह लिबास पहनने का इत्तिफ़ाक हुआ। बड़ी देर तक बो (Bow) बाँधने का तरीक़ा ही समझ में न आया। तो ख़ैर उस दिन मैं यह पूछना भूल गया कि आप हज़रात की अलग-अलग तारीफ़ क्या है?"

फ़ैयाज़ ने सबसे पहले अपना परिचय कराते हुए कहा—"इस खाकसार को फ़ैयाज़ अहमद कहते हैं....।"

खानबहादुर साहब ने कहा—"आजकल आपके अल्लागा मश-रिक़ी कहाँ हैं। मैं उनके बारे में बहुत बुलन्द राय रखता हूँ।"

फ़ैयाज़ ने सफ़ाई पेश करते हुए कहा—"खाकसार से मेरा मतलब था कमतरीन, नाचीज़ वग़ैरह।"

खान बहादुर साहब ने एकदम से कहा—"ओह, तो खैर हाँ तो आपने क्या नाम बतलाया ?"

फ़ैयाज़ ने कहा—"मेरा नाम फ़ैयाज़ अहमद है और मैं सिविल सेक्रेट्रियट में नौकर हूँ। आप मेरे दोस्त शिकवा साहब हैं। आप यहाँ के इनकम टैक्स आफ़िस में असिसटेंट इनकम टैक्स अफ़सर हैं।"

खानबहादुर साहब ने जो अपने कमरे की एक तसवीर देखने में लगे थे, कहा—"इस तरह की तसवीरें मोसविर के दस्तावेज़ी झूँठ का नमूना होती हैं। यानो यह तसवीर किसी हालत में भी सच्ची नहीं हो सकती। यह औरत दरिया के अन्दर पैर लटकाए बैठी है। अब ज़रा ग़ौर कीजिए कि दरिया इसके पैर के मुक़ाबले में छोटा है। दूसरी बात यह है कि आपने बहुत कम औरतों को देखा होगा कि वह दरिया में पैर लटकाकर बिला वजह बैठी रहें। बहरहाल तो आपने क्या फ़रमाया था कि आप यहाँ क्या करते हैं। शायद कुछ इनकम टैक्स की बात थी। मैंने दो साल तक इनकम टैक्स का मुक़दमा लड़ा और अब बारह सौ साल की चपत खा रहा हूँ। तो खैर, जिस वक़्त आप लोगों का खाने को जी चाहे खानसामा से कहकर मंगवा लीजियेगा। बात यह है कि मेरी बीवी खाने की मेज़ पर नहीं आयेंगी। एक तो वह छुरी काँटे से खाना नहीं जानती दूसरे हमारे यहाँ का तरीक़ा यह होकर रह गया है कि लड़कियाँ तो अपने मंगेतर से नहीं झेंपती लेकिन सास दामाद से शर्माने लगती है। इन सबके अलावा मियाँ को देखकर बीवी के बारे में राय नहीं क़ायम करते बल्कि बीवी को देखकर मियाँ के बारे में राय क़ायम

की जाती है। इसलिए....इसलिए से मेरा मतलब यह है कि मैं अपनी बीवी को आपके सामने लाकर अपने लिए वह राय क़ायम नहीं कराना चाहता, जो मेरी बीवी को देखकर आप क़ायम करना चाहेंगे। तो ख़ैर, मियाँ इरफ़ान के बारे में मुझे एक बात और भी पूछनी थी कि इनके राजनीतिक विचार क्या हैं। क्यों इरफ़ान साहब, आपके नज़दीक हिन्दुस्तान के वास्ते वह कौन-सा तरीक़ा अपनाया जाय कि हिन्दुस्तान के सारे लोग उसे एक साथ मान लें।"

इरफ़ान ने बेकसी के साथ पहले अपनी और फिर अपने दोस्तों की बग़लें झाँकी और फिर ख़ानबहादुर साहब का मुँह देख कर रह गए। इतनी देर में ख़ानबहादुर साहब पचासों सवाल कर गए। कहने लगे—"मेरे नज़दीक तमाम हिन्दुस्तानियों को सिर्फ़ एक चीज़ सन्तुष्ट कर सकती है और वह यह है कि वह आज़ादी के बाद अब रोटी, कपड़े का नाम लेना छोड़ दें।"

इरफ़ान के मुँह से निकल गया—"जी हाँ।"

ख़ानबहादुर साहब एकदम से बरस पड़े—"जी हाँ से क्या मतलब? यानी आप के नज़दीक रोटी और कपड़े की माँग का हक़ छोड़ देना कोई बहुत अच्छी बात है। यह आपने 'जी हाँ' कहा कैसे। जी? अरे साहब मैं पूछता हूँ, जी, तो ख़ैर मेरा ख़याल यह है कि आपके पोलिटिकल ख़यालात डांवाडोल हैं। आप अख़बार पढ़ते हैं?"

इरफ़ान ने कहा—"जी हाँ।"

ख़ानबहादुर साहब ने फ़रमाया—"क्यों पढ़ते हैं आप अख़बार? यानी मेरा मतलब यह है कि क्या नीयत होती है आपकी अख़बार पढ़ते वक़्त। बहुत से लोग फ़ैशन के तौर पर अख़बार पढ़ते हैं, बहुत से लोग नशे के तौर पर आदी होते हैं, कुछ लोग मेदे की मदद के लिए अख़बार पढ़ते हैं तो मतलब यह कि आप किस ग़रज़ से अख़बार पढ़ते हैं?"

इरफ़ान ने कहा—"मैं दुनिया के हालात मालूम करने के लिए अख़बार पढ़ता हूँ।"

खानबहादुर साहब ने अपना सिगार सुलगाते हुए कहा—"मगर दुनिया का इससे क्या फ़ायदा ? उसके हालात तो बग़ैर आप के मालूम किए भी मालूम हो जाते हैं। बहरहाल आज आपने जो अखबार पढ़ा तो उसकी हेड लाइन क्या थी ?"

अखबार पढ़ा होता तो बेचारा हेड लाइन भी बता सकता मगर वहाँ तो शायद दो-तीन साल से अखबार पढ़ने की नौबत न आई होगी। आखिर कुछ देर तक सोचने के बाद खानबहादुर साहब के तकाज़ों से तंग आकर बेचारे ने कह दिया—"कुछ याद नहीं रही।"

खानबहादुर साहब एकदम सम्भल कर बैठ गये—"याद नहीं रही क्या मतलब ? आपकी याददाश्त का अगर यही हाल रहा तो कुछ दिनों के बाद आप अपनी बीवी यानी मेरी लड़की शकीला के बारे में कह देंगे कि याद नहीं रही। क्यों जनाब ! मैं ठीक कह रहा हूँ न ? तो जवानी में जब आप की याददाश्त का यह आलम है तो मेरी उम्र तक पहुँचते-पहुँचते तो शायद अपना नाम भी भूल जायेंगे। हालांकि मेरा हाल यह है कि मुझे सन् १८६४ ई० के अखबारों की सुर्खियाँ अब तक याद हैं। क्या आप भी कोई ऐसी मिसाल पेश कर सकते हैं ?

ठीक उसी वक्त खानसामा ने आकर इरफ़ान की मुश्किल आसान कर दी और ख़ानबहादुर साहब "तो ख़ैर" कहते हुए हम लोगों के साथ खाने की मेज़ पर आ गए और खाने पर बैठने से पहले इरफ़ान के कन्धे पर हाथ रख कर बड़े ज़ोर से बोले—"अरे भई सुनती हो, तुम किधर हो? ख़ैर जहाँ कहीं भी हो, देख लो यही है वह लड़का जिसके साथ शकीला की शादी ग़ालिबन हो जायेगी।" फिर सबके साथ बैठते हुए कहा—"तो कौन-सी तारीख़ तै की आप लोगों ने ?"

फ़ैयाज़ ने अदब के साथ कहा—"आपके होते हुए हम को तारीख़ तै करने का क्या हक़ है।"

ख़ानबहादुर साहब ने मुर्ग़ से ख़ञ्जर आज़माई करते हुए कहा—

"इसकी दो टांगे हैं। एक तो मैं लूँगा, एक के लिए आप लोग फ़ैसला कर लीजिये। इस क़िस्म का एक मुर्ग़ शायद उधर भी होगा। मैं खाने के सिलसिले में ज़रा बेतक़ल्लुफ़ हूँ, आदमी को चाहिए कि वह खाने-पीने में ज़रा तकल्लुफ़ कम करे। तो खैर, मेरे नज़दीक तारीख़ कोई ऐसी होनी चाहिए कि बैंक में छुट्टी न हो। यह बात मैं पहले भी कह चुका हूँ और चूंकि हम लोगों को कुछ करना नहीं है, इस लिए, क्यों न कल परसों ही यह फ़र्ज़ पूरा कर दिया जाय। मिस्टर इरफ़ान, आपके वालिद को आसानी के साथ किस दिन शिरकत की फ़ुरसत हो सकती है?"

इसके पहले कि इरफ़ान साहब कुछ कह गुजरें, फ़ैयाज़ ने कहा—"इरफ़ान साहब अपने वालिद को इस शादी की ख़बर फ़िलहाल नहीं देना चाहते।"

ख़ानबहादुर साहब ने चौंक कर कहा—"क्या मतलब? यानी क्यों इत्तला नहीं करना चाहते? यह शादी ग़ालिबन शादी है कोई चोरी, डकैती, क़त्ल, या ख़ूरेज़ी तो है नहीं।"

फ़ैयाज़ ने कहा—"जी हाँ यह सही है। मगर इरफ़ान साहब के वालिद आपकी तरह रोशन-ख़्याल क़िस्म के बुज़ुर्गों में से नहीं हैं और चूंकि उनके दखल देने से इरफ़ान साहब को यह डर है कि शायद कोई झगड़ा पैदा हो, इस लिए वह यह चाहते हैं कि शादी के बाद ही उनको इत्तिला दी जाय तो अच्छा है।"

ख़ानबहादुर साहब ने मुर्ग़े की टांग पर अपने नक़ली दाँत तेज़ करते हुए कहा—"रोशन ख़्याल तो खैर मैं भी नहीं हूँ और न मेरे ख़ानदान में अब तक कोई रोशन ख़याल गुज़रा है, मगर चूँकि शकीला की तरफ़ से मुझे इत्मीनान है कि अगर मैंने ख़ुशी से इसको इजाज़त न दी तो वह मेरी नाख़ुशी के साथ, बग़ैर मेरी इजाज़त हासिल किए शादी कर लेगी। इसलिए मैं इसी को अच्छा समझता हूँ कि उसकी जो ख़ुशी है वही मेरी ख़ुशी है। अगर यह इत्मीनान मिस्टर इरफ़ान

अपने वालिद को दिला सकते तो शायद उनको भी झखमार कर रोशन-खयाल होना पड़ता। इसका मतलब यह है कि इनमें वह हिम्मत नहीं है जो मेरी लड़की में है। और इसका दूसरा मतलब यह है कि यह मेरी लड़की से शादी नहीं कर रहे हैं बल्कि मेरी लड़की इनके साथ शादी कर रही है। इसलिए मैं खुश हूँ कि बजाय इसके कि कोई मेरी लड़की से शादी कर लेता खुद मेरी लड़की किसी से शादी कर रही है। इसमें एक बहुत बड़ा फ़र्क है जो मैं किसी वक्त आपको समझा दूँगा। फ़िलहाल तारीख़ तै कीजिये। मेरे नज़दीक कल ही परसों इस वक्त तो ज्यादा देर हो चुकी है वरन् यही खाना शादी का खाना बन सकता था। मेरे नज़दीक शादी बस इसी तरह होना चाहिए जैसे आदमी को प्यास लगी और उसने उठ कर पानी पी लिया। तो फ़रमाइये, कल या परसों ?

फ़ैयाज़ ने कुछ हमसे सलाह ली और कुछ इरफ़ान से पूछा और आख़िर खाना खत्म होने पर परसों के बारे में बड़े मियाँ से कह दिया। जिसको वह तो शायद पहले ही से तै किए बैठे थे। तारीख़ तै करने के बाद हम लोगों को वहाँ बैठने की कोई ज़रूरत न थी।

२२

क्लब में आज खूब चहल-पहल थी। इसलिए की खानबहादुर साहब से रसमी तौर पर इजाज़त लेने के बाद शादी का इन्तज़ाम हम लोगों ने उसी जगह किया था जहाँ शादी की बात पैदा हुई थी और बढ़ी-पली थी। फ़ैयाज़ के ज़िम्मेदारियों का तो पूछना ही क्या।

बौखलाए हुए इधर-से-उधर फिर रहे थे। रमेश को सजावट का काम सौंपा गया था। एखलाक़ दिन ही में इरफ़ान और शकीला के कानूनी निकाह के बारे में सारी लिखा पढ़ी पूरी कर चुके थे। शोएब एक कोने में बैठे सेहरा लिख रहे थे और हम इस सिलसिले में शादी के खयाल के बजाय खुद अपने बारे में सोच रहे थे कि निकाह के वक्त नाज़ो और रफ़्फ़ो जब हमारे बजाय इरफ़ान को दूल्हा बना हुआ देखेंगी तो उनकी सूरत खुद अपनी जगह एक दिलचस्प तमाशा होगी। दिन भर इसी ख्याल में हम खुश होते रहे और शाम को जब क्लब के सारे मेम्बर जमा हो गए और खानबहादुर साहब अपनी बेगम साहेबा के साथ तशरीफ़ ले आये तो फ़ैयाज़ ने हमसे कहा—"अब मैं जाता हूँ नाज़ो और भाभी को भी ले आऊँ न ?"

हमने कहा—"जाओ ज़रूर ले आवो। बस अब उनका ही इन्तज़ार है।"

फ़ैयाज़ ने कहा—"शकीला से उनको तुम खुद मिलाना, दूल्हा से मैं बाद में मिला दूँगा।"

हम लोगों में यह बातें हो ही रही थीं कि फ़ैयाज़ का नौकर इमाम-बख्श आता हुआ दिखाई दिया। हमने फ़ैयाज़ से कहा—"खैरियत तो है इमामबख्श आ रहा है।"

फ़ैयाज़ ने कहा—"शायद वह लोग खुद आ गईं।" और यह कहकर फाटक की तरफ़ लपका और हम शकीला को बुलाने के लिए क्लब के हाल में चले गए। जिस वक्त हम शकीला को लेकर आए हैं, बेगम और नाज़ो सीढ़ियों तक आ चुकी थीं। हमने बेगम को देखते ही कहा—"अरे तुम ?"

बेगम ने व्यंग भरी मुसकुराहट के साथ जवाब दिया—"मैं आप के ग़म में ही नहीं खुशी में भी शरीक हूँ।"

हमने शकीला की तरफ़ देखते हुए कहा—"शकीला इनसे मिलो। यही हैं मेरे ग़म की शरीक जिनका कहना है कि मेरी खुशी

मैं भी शरीक हैं यानी सब मिलाकर मेरी ज़िन्दगी के लिए एक अज़ाब।"

बेगम ने अपने ग़ुस्से को बहुत दबाते हुए, मगर ग़ुस्से में काँप कर कहा—"उनसे क्यों कह रहे हैं जो कुछ कहना है मुझसे कहिए न।"

नाज़ो ने बेगम का हाथ पकड़ कर कहा—"चलो वापस चलें न। दरअसल तुम्हें यहाँ आना ही न चाहिए था।"

शकीला ने दोनों सीढ़ियाँ एक साथ फाँदकर बेगम का हाथ अपने हाथ में लेते हुए कहा—"आप क्यों वापस जाना चाहती हैं ? क्या बात हुई आखिर ? मैं आपको न जाने दूँगी।"

बेगम ने शकीला की तरफ़ हसरत से देखते हुए कहा—"बहन ! मुझे तुमसे कोई शिकायत नहीं है, मैं और तुम दोनों एक ही किश्ती में सवार हैं। फ़रक़ सिर्फ़ इतना है कि यह किश्ती तुम्हें किनारे लगाना चाहती है और मुझे डुबोना।"

शकीला ने बिना समझे हुए कहा—"ब्यूटीफ़ुल ! कितना अच्छा जुमला कहा है आप ने। मगर क्यों कहा है ?"

नाज़ो ने जलकर कहा—"अल्लाह री न समझी जैसे बेचारी कुछ जानती ही नहीं।"

शकीला ने हैरान होकर नाज़ो की ओर देखा और कुछ समझ न सकी कि क्या बात है। बेगम ने अपने कलेजे की हूक को शब्दों का रूप देते हुए कहा—"मैं तुम्हारी एक अदना कनीज़ हूँ। इसलिए कि जिस की पूजा मेरा फ़र्ज़ है वह ख़ुद तुम्हारा पुजारी है।"

शकीला ने फिर हिमाक़त का सबूत दिया—"क्या यह किसी ड्रामे के डायलाग हैं ?"

इतने में फ़ैयाज़ ने आकर बातचीत का यह सिलसिला खतम करा दिया। और आते ही बेगम से कहा—"कहिए भाभी, आप हमारी

नई भाभी से मिलीं ! और शकीला, बताओ तो इनमें से कौन सी मेरी बीवी है और कौन सी भावज ?"

शकीला ने कहा—"मुझे तो दोनों ही अच्छी लग रही हैं। असल में तो आप इन दोनों में से किसी के क़ाबिल न थे।"

फ़ैयाज़ ने कहा—"यह तो आप सच कहती हैं। क़ाबिल तो मैं सिर्फ़ आप के था मगर आप ने मुझे पूछा ही नहीं। बहरहाल हाज़िर में हुज्जत नहीं। जैसे कुछ भी हम हैं, हाज़िर हैं। यह मेरी बीवी नुज़्हत जिनको में नाज़ो कहता हूँ और यह हैं आपके शौकी की बेगम जिनको शौकी साहब मारे लाड के रफ़्फ़ो कहते हैं। और खुद न जाने कहाँ रफ़ू चक्कर हैं।"

नाज़ों ने उसी कड़ुवे लहजे में कहा—"वह बेचारे ज़्यादा देर तक आँखें चार नहीं कर सकते। नई दुल्हन की खुशामद में इनको जिन्दगी का अज़ाब तक ही कहने पाये थे कि शायद इसके बाद हिम्मत नहीं हुई।"

शकीला ने हैरान होकर कहा—"मेरी खुशामद में ?"

फ़ैयाज़ ने शायद यह समझ कर कि भेद खुलने ही वाला है बेगम और नाज़ो को साथ लिया और उस कमरे में आ गया जहाँ इस मौक़े पर आये हुए मेहमान दूल्हा को घेरे हुए बैठे थे। बेगम ने दूल्हा को देखा और देखने के बावजूद न पहचान सकीं। दिल के यक़ीन ने आँखों से वही दिखाया जो वह पहले से समझे हुए थीं। यहाँ तक कि फ़ैयाज़ ने खुद हमारे सामने कहा—"आइए भाभी। दुल्हन से तो आप मिल चुकी अब दूल्हा से भी मिल लीजिये।"

बेगम ने अपनी डूबती हुई आवाज़ में कहा—"जिन्दगी भर मिल चुकी हूँ अब क्या करूँगी मिल कर।"

फ़ैयाज़ ने ज़ोर दिया—"मिलिए तो सही, आपको शरमिन्दा करने का वक़्त तो यही है।"

हम पास ही खड़े मुसकुरा रहे थे। मगर मज़ा यह था कि नाज़ो

और रफ़्फ़ो दोनों गरदनें झुकाए बुत बनी बैठी थीं और दोनों में से कोई हमें देखने को जैसे तैयार ही नहीं थीं। आखिर फ़ैयाज़ की जबर-दस्ती से बेगम और नाज़ो दूल्हा तक गईं। और जब इरफ़ान ने गड़बड़ा कर कहा—"अरे, आपा।" तो हैरत का एक तमाशा बेगम थी और दूसरी नाज़ो मगर खुद दूल्हा मियाँ हैरानी का कारटून बने खड़े थे। दो मिनट की लगातार खामोशी के बाद बेगम ने फ़ैयाज़ की तरफ़ देखते हुए कहा—"यह आखिर क्या मोअम्मा है।

फ़ैयाज़ ने हमारी तरफ़ इशारा करते हुए जवाब दिया—"इस मोअम्मे का हल यह बदमाश है। जो आप पीछे खड़ा हँस रहा है।"

बेगम ने घूम कर हमको देखा तो हमने निहायत अदब से सलाम किया मगर नाज़ो और नाज़ो से बढ़ कर शकीला फ़ैयाज़ के सर थीं कि आखिर यह भेद क्या है। अगर यह कोई मज़ाक है तो इसे खतम कीजिए।"

नाज़ो ने रफ़्फ़ो की तरफ़ इशारा करके फ़ैयाज़ से कहा—"रफ़्फ़ो इस वक्त इस आलम में नहीं हैं कि तुम इस तरह का मज़ाक करो।"

फ़ैयाज़ उन दोनों को समझाने की इजाज़त हमसे नज़रों-ही-नज़रों में माँगी। हम उसको इजाज़त देते हुए बेगम को साथ लेकर लान के उस कोने में आ गये जहाँ शकीला ने पहली बार हमको "शिकवा" के बजाय शोकी का खिताब दिया था और बेगम को घास के ऊपर ढकेलते हुए कहा—"बदगुमान औरत की मेरी शादी में शिरकत।"

बेगम ने उसी लहजे में कहा—"बदज़बान मर्द, देखी एक औरत की हिम्मत....मगर मुझे सबसे पहले समझाइए क़िस्सा क्या है ? मेरी तो यह समझ में नहीं आ रहा है कि यह जो कुछ मैं देख रही हूँ यह बेदारी है या ख्वाब।"

हमने बेगम को सता-सता कर गुदगुदा-गुदगुदा कर शुरू से आखिर तक की तमाम दास्तान दस-पन्द्रह मिनट में सुना दी और ठीक

उस वक्त जब कि बेगम बड़े दुलार से हमारे बालों से खेल-खेलकर फ़रमा रही थीं—"ओफ़ ओह रे चोर।"

पीछे की झाड़ियों से एक कहक़हा गूँजा और शकीला ने बड़े ज़ोर से कहा—अल्लाहरी साहूकार!"

बेगम दौड़ कर शकीला से लिपट गईं। हम फ़ैयाज़ की कमर में हाथ डालकर खड़े हो गए। फ़ैयाज़ का हाथ नाज़ो के कन्धे पर था और इरफ़ान बेवक़ूफ़ों की तरह खड़े हुए चारों तरफ़ देख रहे थे कि एकाएक खानबहादुर साहब की आवाज़ आई—"तो आखिर मेरा मतलब यह है कि यह क्या वाहियात यानी कुछ मेहमान ऊँघ रहे हैं और कुछ सूख रहे हैं। दो तीन आदमी मेरी बीवी को अब तक देख-कर हँस चुके हैं और तुम लोग यहाँ शायद कुछ हँसी-मज़ाक कर रहे हो। मेरी राय में सबको वहीं जाना चाहिए ताकि मेरी बीवी की तरफ़ से लोगों का ध्यान हटे। वह अगर मोटी है तो इसकी शिकायत मुझको होनी चाहिए किसी और को हँसने की ज़रूरत नहीं। हांलाकि निन्यावे फ़ीसदी औरतें अपनी आखिरी उम्र में पहुँचकर इमारत बन जाया करती हैं। मैं आपसे पूछता हूँ, क्या नाम बताया था आपने अपना, फ़ैयाज़ वगैरह, तो खैर आप ही बताइए कि यह बात एक मोटी औरत के शौहर के शरमिन्दा होने के लिए काफ़ी है या नहीं। चाहे यह मौक़ा उसकी बेटी की शादी का ही क्यों न हो।"

फ़ैयाज़ ने सबको महफ़िल में चलने का इशारा किया जहाँ वाकई खानबहादुर साहब की बेगम साहबा इस तरह बैठी हुई थी गोया दूल्हा इसी हाथी पर आया है।
